रसायन-तत्वों के देश में भ्रमण

(प्रथम भाग)

लेखक

यू. रोमनकोव

व. वासिलेवस्किये

द. त्रिफानोव

ल. वावरोव

ग. लाशिलोव

इ. त्रायेनोव

सूर्य नारायण भट्ट

सरस्वती प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद

संस्करण : 1990

मूल्य : 75/-

प्रकाशक : सरस्वती प्रकाशन मन्दिर
69, नया बैरहना, इलाहाबाद

मुद्रक : एलोरा प्रिण्टर्स, जयपुर

विषय-सूची

इनआर्गेनिक (अकार्बनिक)

सौ से कुछ ऊपर रसायनिक तत्त्व-निर्माण करने वाले मूल पदार्थों की सूची में आते हैं, जिनसे कुल—जैवीय तथा निर्जीव—संसार ने अपनी रचना की है।

यह सौभाग्य है कि पृथ्वी किसी की निजी सम्पत्ति नहीं है। विश्व का जितना अंश पर्यवेक्षित किया गया है उसमें कोई तत्त्व ऐसा नहीं है जो हमारी सेवा न करता हो।

पृथ्वी का गोला स्वयं एक विशालकाय प्रयोगशाला है, जिसको कार्य करते हुए काफी समय बीत चुका है। उसमें हर सम्भव प्रतिक्रिया सम्पन्न करने के लिये कुल आवश्यक परिस्थितियां उपलब्ध होती हैं। ऊंचे पदार्थों की आवश्यकता थी, और निस्सन्देह पृथ्वी के गर्भ में पदार्थ सैकड़ों, हजार एवं दसियों लाख वायु-मंडलीय दबावों के अन्तर्गत स्थित था। तापमान? पृथ्वी का गोला अग्नि के भरते के समान उबल और खौल रहा था। समय? कितने समय की आवश्यकता थी—दिन, हजारों वर्ष सैकड़ों मिलीयन वर्ष! प्रकृति अपने व्यय की परवाह नहीं करती है।

जटिल, अनन्त रसायन उथल पुथलों के फलस्वरूप हमारे ग्रह का निर्माण हुआ (जो इस समय भी धीमे-धीमे हो रहा है)।

किसी ने अपने हाथों अग्नि बनाई, किसी ने मारे हुए शिकार की कठोर भद्दी खाल निकाली, किसी ने खनिज से लोहा प्राप्त करके अपने को भाग्यशाली बनाया। मानव अन्धकार में हाथों से टटोल रहा था और यदा-कदा इसी प्रकार की महान सफलतायें उसके हाथ लग जाती थीं। रसायनिक परिवर्तनों की काल रहस्यपूर्ण एवं असाधारण होने के कारण पुनीत समझी जाने लगी। यह कला पुरोहितों की सम्पत्ति बनी।

हमारे युग के आरम्भ में प्रयुक्त रसायन की उपलब्धियां पूर्वी देशों से यूनान पहुंचीं। यूनान से रोम ने उन्हें उत्तराधिकार में प्राप्त किया और दास-प्रभुओं के जीर्ण होते हुए साम्राज्य के पतन के साथ विज्ञान एवं दस्तकारी का नेतृत्व अरबों के पास पहुंच गया। प्रयोग और रहस्य दोनों सिद्धान्त अरबों के रसायन-विदों की क्रियाशीलता से गुंथ गये। वे अन्ध विश्वास की दृढ़ता लिए हुए दूसरी धातुओं से सोना प्राप्त करने का नुस्खा तथा सब बीमारियों एवं मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर सकने वाला अमृत खोजने लगे। विभिन्न पदार्थों को मिलाते हुए अल्केमिस्टों (अल-अरब उत्पत्ति का शब्द है) ने अपने कार्य के दौरान अनेकों

बहुमूल्य व्यावहारिक यौगिक संश्लेशित किये। यद्यपि कीमियागरों के सहायकों ने हर प्रकार के सम्भव भूत-प्रेतों को अपने जादू या तन्त्रो के बल पर आकर्षित किया, किन्तु उनका मुख्य लक्ष्य न प्राप्त हो सका।

कुछ शताब्दियों—12वीं से 15वीं शताब्दी—तक अरब जादूगरों के योरोपीय उत्तराधिकारी अपनी पूर्णतया छिपाई प्रयोगशालाओं में धुआं सुलगा के जादू के प्रयोग करते रहे, और 'पारस पत्थर' के अद्भुत नुस्खों की रचना करते रहे। उन्होंने अज्ञान बादशाहों के मस्तिष्कों को अपनी ओर फेरा और फिर धोखा देने मे विश्वास करने लगे और अन्त में अपने जीवन को सूलियों पर समाप्त किया।

यह सब विज्ञान न था। अल्केमी शीघ्र निस्सार केवल ऊंची शब्दावली वाली अन्धी चीज हो गई, जो व्यावहारिक रसायन से मेल नहीं खाती थी।

मनुष्य उस समय तक अनेक यौगिकों से परिचित हो चुका था। उसने शीशा (काच) बनाना सीख लिया था। बारूद का प्रयोग करने लगा था। वह सिक्का ढाल लेता था। देवताओं की पीतल की मूर्तियां निर्माण करता था। तपा कर सुन्दर नोक व धारदार अस्त्र बनाता था। रंग प्राप्त कर लिये थे, जो समय की क्षयकारी प्रवृत्तियों से अपनी ताजगी की रक्षा कर लेते थे।

व्यावहारिक रसायन अब बच्चा नहीं रह गया था उसमें बहुत अनुभव भरा था। उसके कन्धों पर शताब्दियो की लम्बी श्रेणी फैली थी, जिस समय रसायन विज्ञान ने जन्म लिया। यह आश्चर्य की बात है कि इस विज्ञान का जन्म केवल अब से लगभग ढाई सौ वर्ष पूर्व ही हुआ और इसके पहले नहीं।

सत्रहवी शताब्दी तक वनस्पति शास्त्र, प्राणि शास्त्र, और खनिज विज्ञान के शिक्षक का कार्य प्रकृति करती थी। प्रारम्भ मे केवल संसार और उसके चारों ओर प्राप्त पदार्थों की सूची तैयार करना ही अन्वेषकों का कार्य था। उन्होंने अपने लिए महत्वपूर्ण तमाम वस्तुओं की सूचियां तय्यार कीं। आगामी पग विस्तृत पर्यवेक्षणों की जांच करने की कोशीश, उनका साधारणीकरण (generalization) तथा व्यक्ति से जाति में रूपान्तरण (classification) का था।

यही मार्ग रसायन शास्त्र को भी अपनाना था, किन्तु जहां शतपदी (खन खजूर), बारहसिंगा, डन्डेलियन, स्फतीय (feldspar) को प्रकृति शुद्ध रूप में प्रस्तुत करती है, रसायनिक व्यक्तियो को नियमतः अधिक या कम जटिल स्वरूपो मे छिपा कर रखती है।

यह आवश्यक था कि रसायनिक व्यक्तियों को बाहर लाना सीखा जाये "रसायनिक कार्यों में साधारणतः प्रयोग किये जाने वाले प्राकृतिक पदार्थों को भी

प्रथमतः प्रत्येक उपाय से शुद्ध कर लेना आवश्यक होता है, ताकि उनमें कोई बाहरी मिलावट न रह जाये, जो दूसरी प्रतिक्रियाओं को उत्पन्न करके पूरे प्रयोग को संदिग्ध बना सकती है।" ये शब्द हैं रसायन शास्त्र के प्रमुख जन्मदाता, रसायन शास्त्र के प्रारम्भिक नियम 'संमात्रा की अविनाशिता' (Conservation of Mass) के खोजने वाले रसायन-विद् मिखाइल लोमोनोसोव के।

अठारहवीं शताब्दी के रसायनिक वैज्ञानिकों का मुख्य उद्देश्य था पदार्थों को पृथक करना और इस उद्देश्य की प्राप्ति का मुख्य साधन था भार तथा नाप निश्चित करना। "प्रकृति मानवी साधनों की सहायता से भी ऐसे पदार्थ नहीं बना सकती जो प्रकृति में हमें प्राप्त होने वाले पदार्थों के भार एवं आकार (आयतन) के अनुपात से विभिन्नता रखते हो।" फ्रांसीसी वैज्ञानिक प्रूस्ट ने कहा था—अटकलबाजी और हवा में महल बनाने वाला युग समाप्त हो गया। उसने निश्चय और उद्देश्यपूर्ण कठोर काम के आगामी युग के सामने आत्म समर्पण कर दिया था। प्रयोगशालाओं मे निकाले गये भारों ने फ्लाजिस्टन सिद्धान्त तथा इसी प्रकार के अन्य कयासी सिद्धान्तों को, जो जांच में गलत सिद्ध हुए बाहर खदेड़ दिया।

किन्तु प्रयोग न केवल पुराने को उलटने तथा नये को खोलने की क्षमता रखता था वरन् उसमे निर्मम, जटिल समस्याओं को पैदा करने की भी क्षमता थी। यह कैसे प्रमाणित हो कि परख नली (test-tube) मे एक ही रसायनिक व्यक्ति है या रसायनिक व्यक्तियों का समूह है? समांगी (homogeneous) पदार्थ जैसे कि प्रकृति मे बहुत से प्राप्त होते हैं, रसायनिक यौगिक (compound) हैं या साधारण मिश्रण (mixture)?

महान् मस्तिष्कों की शक्ति कठोर शिक्षक, प्रकृति द्वारा रचित प्रारम्भिक पाठशाला की पाठ्य-पुस्तक की समस्याओं के हल की ओर केन्द्रीत हो गई। रसायन की समस्याओं के हल करने के मार्ग मे तत्वों के परिवार के छिपे हुए सदस्यों से परिचय प्राप्त हुआ। प्रत्येक बार यह सम्मान प्रयोग की सूक्ष्मदर्शिता, धैर्य, एवं तर्कशीलता द्वारा प्राप्त किया गया। यह रसायनिक विश्लेषण की क्रिया का तूफानी बसन्ती मौसम था। उसने व्यक्तियों के पहचानने और उनके लक्षणों को ठीक-ठीक निर्धारित करने में सहायता दी।

दीर्घकालीन अवकाश के बाद विज्ञान पुनः प्राचीन दार्शनिकों द्वारा अनुप्राणित, तर्क किये गये, प्रश्न पर आ गया। पदार्थ, क्या है? अब उन्नीसवी शताब्दी में प्राकृतिक विज्ञान के इस दार्शनिक प्रश्न पर उन प्रकृति शास्त्रियो को उत्तर देना था, जो नवोदित अकर्बनिक रसायन के सृष्टा थे। यह सच है कि अठाहरवी शताब्दी में ही लोमोनोसोव ने अपने कार्पस्कुलर सिद्धान्त मे इसका

उत्तर प्रस्तुत कर दिया था, किन्तु उस समय जटिल पदार्थों की आत्रिक रचना के बारे में आवश्यक रूप से ठीक आंकड़ों की अनुपस्थिति वैज्ञानिक के इस प्रतिभा सम्पन्न सुझाव की परख करने की अनुमति नहीं देती थी। अब ये आंकड़े मौजूद थे।

यशस्वी वीर देवता इलिया मुरोमेत्ज़ के समान, जो तैंतीस वर्षों तक अपने पैरों पर खड़ा रहा था, रसायन शास्त्र ने अपने उलझे हुए शैशवावस्था के दौरान हुई कीमियागरी के युग की कमी को तूफानी गति से अभूतपूर्व सफलताओं द्वारा पूरा कर लिया। उसने प्रकृति द्वारा सृजित विविधताओं की भ्रामक अन्ध व्यवस्थाओं में सुमेल (harmony) की खोज की।

गूंगे और अन्धे तथ्यों का सामूहीकरण करते हुए, तथा उनमें कुछ अग्रिम बिन्दु स्थापित करते हुए, और प्राकृतिक घटनाओं के मध्य सकारण सम्बन्ध प्रतिपादित करते हुए, अकार्बनिक रसायन शास्त्र ने मृत पदार्थ को विश्व के कठिन-तम गोपनीय रहस्यों को उद्घाटित करने पर विवश कर दिया और प्रकृति के मूलभूत नियमों के सत्य को खोला। उनमें सर्वाधिक प्रकाशमान वैज्ञानिक दूरदर्शिता प्रकट करता है अवधिक नियम (Perldcical law) – दे.इ. मेंडेलीफ की तत्वों की प्रणाली। प्रकृति के इन उद्घाटित नियमों के आधार पर असीम सम्भावनाओं का शक्तिशाली विज्ञान आगे बढ़ा।

इसी अकार्बनिक रसायन ने बहुत बड़ी सीमा तक विश्व की भौतिकता एवं ज्ञेयता में विश्वास उत्पन्न किया। इसने अज्ञेय सर्वशक्तिशाली ब्रह्मा की सृष्टियों को तर्क के ऊपर रखने वाली निरर्थक एवं भीरु कल्पनाओं को एक बाद दूसरे पछाड़ा। अकार्बनिक रसायन अपने युग के मानसिक तथा भौतिक तकनीकी स्वरूप को निश्चित करने वाला तथ्य बन गया। वह प्रत्येक सभ्य व्यक्ति के ज्ञान का आवश्यक अंग बन गया।

इन्आर्गेनिक रसायन साग्रह आगे बढ़ा। आगे अधिक पूर्ण तथा सर्वांगीण प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करने के लिये, रसायन की नई नियमितताओं को स्थापित करने के लिये अनुसन्धान की भौतिकी विधियों की ओर ध्यान देना आवश्यक था।

"रसायन शास्त्री जो भौतिक शास्त्री नहीं है, वास्तव में कुछ नहीं है।" बून्जेन ने जो स्पेक्ट्रम विश्लेषण विधि के निर्माताओं में एक था, घोषित किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में अकार्बनिक रसायन से, जो विश्व की रचना करने वाली प्रत्येक ईंट की ओर समान रूप से ध्यान देते हुए आगे बढ़ रहा था, कार्बनिक रसायन अंकुरित होकर बाहर आया, जिसका उद्देश्य केवल एक तत्व कार्बन के यौगिकों का अनुसंधान था।

हमारी पृथ्वी को विजयी कार्बन का ग्रह कहा जा सकता है। कोई भी एक तत्व पृथ्वी के गोले में इतने यौगिक नहीं बनाता है जितने कि कार्बन। कार्बन के

यौगिक जीवन वाहक समझे जाते हैं। शेष सभी पदार्थ, जो कि वे भी समय पाकर परिवर्तित होते हैं, मृत संसार के प्रतिनिधि समझे जाते हैं। वे निश्चल होते हैं यदि उनको स्वयं अपने ऊपर छोड दिया जाता है।

कार्बनिक विश्व, जीवों का विश्व, वानस्पतिक तथा जैविक उपजों का विश्व रसायन शास्त्रियों की प्रज्वलित दिलचस्पी को अपनी ओर न खींच सका। वे आकर्षित हुए, इस विश्व की बेरोक विविधिता से; उनको कृत्रिम तरीकों से कार्बनिक यौगिको को प्राप्त करने की कठिनाई ने स्पन्दित किया।

पिछली शताब्दी का उत्तरार्ध प्रकाशमान कार्बनिक संश्लेषण की उपलब्धियों की श्रेणियों से सम्मानित हुआ। मानो दूर अतीत के वृक्षों एवं जीवों के शवों को पुनरुज्जीवित करते हुए, उनकी ऊर्जा, रङ्गों, सुगन्ध, स्वास्थ्य-प्रद गुणों को पुन: उसको लौटाते हुए कार्बनिक रसायन शास्त्रियों ने कृत्रिम ढङ्ग से रङ्गों, मूल्यवान औषधियों, तरह-तरह के सुगन्धित पदार्थों को संश्लेषित किया। धुंआ न देने वाली बारूद, कृत्रिम रेशम, सेलूलायड, ऊंची ऊष्मा रखने वाले ईंधन तैयार किये।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में कार्बनिक रसायन के शानदार विकास की पृष्ठभूमि मे अकार्बनिक रसायन शास्त्र बहुत मुरझाया सा दिखाई पड़ रहा था। उसने सदैव के लिए फल देना बन्द कर देने वाले ज्ञान-वृक्ष का स्वरूप धारण कर लिया था। उसके आधारभूत नियम, चिर-प्रतिष्ठित ढाचे, प्रौद्योगिक क्रियायें पाठ्य पुस्तकों में पहुंच गये और पाठशालाओं की पुरानी बातें, स्वयं सिद्ध सत्य बन गये।

इस प्रकार की निस्तब्धतापूर्ण अस्थायी शान्ति की अवधियों से प्रत्येक विज्ञान को अपने विकास काल में गुजरना पडता है। कुछ ही दिन पूर्व उदाहरण के लिए प्राचीन ध्वनि विज्ञान पुनर्जीवित हो उठा। इसे इतिहास एवं विज्ञान के अभिलेखागार से मंसूख ही किया गया था कि एकबारगी हमारे जीवन में पारजम्बु (अल्ट्रा) ध्वनि फूट पड़ी, इन्फ्रा ध्वनियों का प्रयोग होने लगा.....।

अकार्बनिक रसायन को भी नया शब्द कहना था।

उसने यह नया शब्द कहा और उसे हमारे समय के विज्ञान एवं तकनीक के सबसे अग्रगामी और रोमांचकारी दल सम्पन्यवाद बल प्रदान करते हैं।

सोवियत संघ की कम्यूनिस्ट पार्टी के नये कार्यक्रम में लिखा गया: "उपयोगी खनिजों की खोज के तथा प्राकृतिक वनों के बहुमुखी उपयोग के मौजूदा तरीको को अधिक पूर्ण बनाना तथा नये और अधिक असरदार तरीकों को ढूढना।"

प्रत्येक व्यक्ति इसे अपने अनुसार पढता है। भूगर्भ शास्त्री 'खोज' शब्द सुन कर चौंक पड़ा और रसायन शास्त्री की दृष्टि में 'बहुमुखी उपयोग' चमकने लगा।

स्थायी संवाददाता प्रकृति के पत्थरों के पार्सल रसायनिक प्रयोगशालाओं की मेजों पर निरन्तर पहुंचने लगे। उनकी अन्तर्वस्तुओं (Contents) का पता लगाना तथा ठीक-ठीक निर्धारित करना आवश्यक था।

अकार्बनिक रसायन की सेवा यहां से प्रारम्भ होती है। यह आवश्यक था कि बगैर गलती किये इस प्रश्न का पूर्ण उत्तर दिया जाये कि 'यहां क्या है?' निस्सन्देह इससे पार्सल भेजने वाले पर्वत के भाग्य, उस पर्वत द्वारा प्रोत्साहित उद्योग के आचरण तथा नये खनिज क्षेत्र को धारण करने वाले देश के भविष्य का निर्णय होता है। समझा जायेगा कि इसमें कठिनाई की क्या बात है? एक बार तत्व उद्घाटित हुए और उनके अधिकांश यौगिक ज्ञात हो जाते हैं। किन्तु फिर भी यह समस्या सदैव इतनी सरलता से नहीं हल होती है। उदाहरण के लिए प्लेटीनम ग्रुप की धातुओं, विरल मिट्टी (Rare earth) के तत्वों सह जातियों सेलीनियम, टेल्यूरियम और कुछ अन्य के लिए विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है। ये पदार्थ विश्लेषक को खनिज पदार्थ में अधिक गहराई से खोज करने के लिए बाध्य कर देते हैं।

किन्तु पार्सल के अन्तर्गत वस्तुयें वहीं में स्थित होती हैं। कच्चे खनिज को उसकी तहों अथवा उसमें उपस्थित तत्वों के नामों के अनुसार लाक्षणित किया जाता है। आगे यह भी दिखाना आवश्यक होता है कि किस बनावट में, किस सहयोग में प्रत्येक तत्व कच्चे पदार्थ में मौजूद है। इससे इस प्रश्न के हल में सहायता मिलती है कि कच्ची धातु को धनी करना आवश्यक है। यह अकारण ही नहीं है कि रसायनिक विश्लेषण जो ऐसे प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत करता है, तर्कसंगत कहलाता है। विज्ञान विशेष ध्यान के साथ विश्व की प्रत्येक ईंट के गुणों का अध्ययन करते हुए इस अंतिम निर्णय पर पहुँच चुका है कि कोई ईंट अनुपयोगी नहीं है। व्यवहार इस निष्कर्ष का समर्थन करता है कि उत्पादन उद्योगों के फाटकों पर काम की प्रतीक्षा करने वाले मेंडेलीफ प्रणाली के तत्वों की संख्या दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है।

प्राकृतिक धनों का बहुमुखी उपयोग नियमतः विशेष रूप से जटिल समस्या होती है। इसके हल के लिए साधारणतया अधिक समय की और वैज्ञानिक अनुसंधान तथा योजनायें बनाने वाले संगठन की शक्तियों के एकीकरण की आवश्यकता होती है।

कोल्स्की अंतरीप में प्रकृति द्वारा संचित एपेटाइट-नेफेलीन के बक्सों (पेटारों) के उपयोग का कार्य आज से तीस वर्ष से ऊपर हुआ, जब प्रारम्भ हुआ था और अभी तक समाप्त नहीं हुआ है। अकेडेमीशियन अ. ई. फेर्समान तथा

ग्र. एन. लाबरजोव ने ये सबसे खिबिनी पर्वतों में पाये थे। यह विशाल संग्रह दक्षिणी जनतन्त्र (Republic) की लोकतान्त्रिक ग्रर्थ व्यवस्था के लिए विज्ञान का शानदार उपहार था।

प्रारम्भ में यहां प्राप्त होने वाली चट्टान अपेक्षतया परिशोधन का छोटा मार्ग तै करती थी। उसे धनी करके एपेटाइट के सान्द्रणों को उससे पृथक करते थे। यह अर्ध उपज (Semi product) उद्यम में दाखिल हुआ जहां अकेडेमीशियन एस० ई० वोल्फकोविच की रहनुमाई में निकाली गई विधि के द्वारा उससे खादें-सुपरफास्फेट, अमोफास, प्रेजिपिटाइट—तैयार करते थे।

यह देश के आर्थिक जीवन की बड़ी उल्लासपूर्ण घटना थी।

किन्तु रसायन शास्त्रियों के उल्लास को स्वयं इस उत्सव के लिये अपराधी खिबिन के खनिज ने विषाक्त बना दिया था। वे जानते थे कि उसमें तत्वों का पूरा दल और उनके यौगिक छिपे हुए हैं, जिनमें प्रत्येक लोकतान्त्रिक अर्थव्यवस्था के लिए अनिवार्य या निकटतम भविष्य में ही अत्यन्त अनिवार्य पदार्थ बन जाने वाला है।

खनिजों से प्राप्त होने वाले धन के उपयोग करने के महाकाव्य का सबसे बड़ा प्रकाशमान पृष्ठ अलूमिनियम की प्राप्ति से सम्बन्धित है। चट्टानों के परिशोधन के अन्त में सान्द्रणों के रूप में नेफेलीन विलग होती थी। उसमें जटिल यौगिक $Na_2O.Al_2O_3Si\ O_2$ होता था। अलूमिनियम और क्षारक (alkali) थे फेंके जाने वाले कूड़े में। इस वास्तविकता को पी लेना कठिन था। पर टेक्नोलाजी के लिए नई विधि तैयार करना और कठिन मालूम पड रहा था। जैसा कि प्रत्येक जटिल समस्या करती है, इसमें भी उत्साहियों और संदेहवादियों को जन्म दिया, उनके मध्य संघर्ष युद्ध के बाद के दिनो में सम्पन्न हुआ। व्यावहारिक रसायन संस्थान (Institute of Applied Chemistry) में कुछ ही दिन पूर्व फेंके जाने वाले इस धातु के कूड़े मे क्षारों और सीमेंट के प्राप्त करने की प्रौद्योगिक विधि निकाली गई और बोलखोव के अल्यूमिनियम के कारखाने में लागू की गई। जैसा सबको ज्ञात है, इस कार्य के संचालक दे. एल. तालमूल को लेनिन पुरस्कार प्रदान किया गया।

किन्तु जैसा हम ऊपर कह चुके हैं अभी 'कास्केट' (पेटार) पूर्ण रूप से खाली नहीं हुई थी। नेफेलीन में अल्यूमिनियम के साथ गैलियम (Gallium) तथा कुछ अन्य विरल तत्व रहते हैं। सम्भावनायें आकर्षक हैं।

इसी के सदृश पेटारें प्रकृति ने हमारे खनिजो में उदारता से भर दी है। तूफानी कास्पियन के पार्श्व में, समुद्र में घूमती हुई रेतीलो धरतो से पृथक की

हुई एक शान्त खाड़ी, कारा बोगाज गोल है। शताब्दियों से इस छिछली तश्तरी में सागर अपना गाढ़ा नमकीन पानी भरता रहा है। दक्षिणी सूर्य नमी पीता था और नमक छोड़ देता था। यह पृथ्वी का लवण है, जिसे नदियों ने उन क्षेत्र से दान के रूप में संग्रह किया है जिनसे होकर वे बहती हैं। शाश्वत विहारिणी नदियों को मार्ग में कौन सी चट्टानें नहीं मिलतीं और नित्य बहने वाली धार घुलने वाले रसायनिक योगिकों को ढोती रहती है।

नदियां अपने शिकार को समुद्र को सौंप देती हैं। इसमें आश्चर्य नहीं कि सागरीय जलों में मेंडेलीफ प्रणाली के लगभग सभी तत्व एकत्रित हो जाते हैं। कारा बोगाज गोल वह स्थान है जहां समुद्र नदियों द्वारा चुराये गये धन को पुनः स्थल को लौटा देता है। पृथ्वी में ये पदार्थ अनन्त विस्तारों मे बिखरे हुए हैं, यहां वे मानो गोदाम में भरे हैं। कारा बोगाज सोडियम, मैगनीशियम, कैल्शियम पोटेशियम, के असीम भंडार विभिन्न योगिकों के रूप में ग्राहक को देने के लिए तैयार रखती है। अनुमान किया जाता है कि खाड़ी के लवणों और नमकीन पानी के कारखानों में परिशोधन के समय नई तकनीक के लिए ऐसे ललचाने वाले तत्व जैसे लिथियम, बोरान तथा ब्रोमीन, आयोडीन और अन्य भी सरलता से प्राप्त किये जा सकते हैं। और उद्योगी खोजक के लिए प्राचीन कारा बोगाज अपने पेंदे में कुलीन धातुओं सोना और चांदी—को भी सुरक्षित किये हैं।

अभी यह जीवित मेंडेलीफ की तत्व प्रणाली मुख्यतः स्थितिज संग्रह (Potential deposit) मात्र है।

कारा बोगाज अपने समय की प्रतीक्षा कर रही है। उनकी प्रतीक्षा कर रही है, जिनकी इच्छाशक्ति और पराक्रम को वह देश की अर्थ व्यवस्था के लिये अपने खजानों को खोल एवं सौंप कर पुरस्कृत करेगी।

परन्तु केवल कारा बोगाज ही नहीं है। कास्पियन से मिले स्टेपी के मैदानों में पश्चिमी और पूर्वी सायबेरिया में, उत्तरी काकेशिया में तथा मध्य एशिया, क्रीमिया, ट्रान्स कार्पेथियन में लवणों की तहों की श्वेत तश्तरियां चमक रही हैं, नमक की झीलें, छोटी बड़ी कारा बोगाजें, बहु मूल्य खनिजों के भंडारों को अपने में सुरक्षित किये हुए चमक रही हैं।

एक विचित्र मनुष्य की भांति हालैण्ड निवासी ऐन्थोनी लेवेन्हूक ने अपने असाधारणतया पालिश किये हुए लेन्सों को बिल्कुल ही अप्रत्याशित विषयों पर ठीक मक्खी के मस्तिष्क तक—लक्षित किया और सूक्ष्म पदार्थों के पहले अज्ञात पूरे संसार उद्घाटित किये। रसायन शास्त्रियों ने, जिन्होने विश्लेषण की विधियों मे दक्षता प्राप्त कर ली थी, कठिनता से प्राप्त होने वाले तत्वों के सूक्ष्म वितरणों

का पीछा करने की योजना बनाई। उन्होंने उन पदार्थों का विश्लेषण किया जिनकी कच्चे माल मे गणना नहीं होती थी या जो कच्चे माल की भूमिका समाप्त कर चुके होते थे। उन्होंने कारखाने की चिमनियों से काली कालिख खरोंची, गन्दे पानी के नमूने लिये, उद्योगों से फेंके हुए कूड़ों के ढेरों पर गये। और स्तम्भित करने वाले अन्वेषण किये। प्रगट हुआ कि बेकार चट्टानों के भण्डार खनिजों की भूमिका अदा करने का दावा कर सकते हैं, और धूम्र जो आकाश एवं मनुष्यों के फेफड़ों को दूषित करता है, अपने साथ चिमनी में बहुमूल्य तत्व उड़ा ले जाता है, जिनमें अर्ध चालकों (Semi Conductors) का सखा जर्मनियम भी होता है।

मिट्टी के तेल के क्षेत्रों में ट्यूबवेलों के पानी 'काले सोना' के सहचर होते हैं। ये सहचर परेशान करने वाले होते हैं। किन्तु अकस्मात यह प्रगट होता है कि ये जल 'सोना' हैं। इनमें बोरोन, ब्रोमियम, आयोडीन, सोडा तथा अन्य पदार्थ घुले होते हैं। यह ऐसे ही हैं जैसे कि उद्गम के भीतर उद्गम मिल जाये।

यदि तत्वो को वाणी प्राप्त हो जाती, तो उनके सरकारी भवन, मेंडेलीफ की तत्वो की प्रणाली मे बहुत सी अद्भुत बातें सुनने को मिलती। अ.प जिसके नाम के पहले कुलीन उपसर्ग "दुर्लभ" लगा होता है सभी को अपराधी बताता केवल इसलिये कि उसके व्यक्तियों का ठीक सम्मान नहीं किया गया।

'हमको कूड़े मे!" सेलेनियम, सोना, जर्मेनियम, टिन तथा अन्य खनिज कुपित होकर कहते। "और केवल इसलिये कि हमारा निवास तांबे के पाइराइट में होता है और तांबे की पाइराइट (Copper Pyrites), क्या आप नहीं जानते हैं, सल्फूरिक एसिड से अभिसंस्कृत किया जाता है। तब हम दुर्लभ, अधिक व्यय कराने वाले क्यों कहे जाते हैं, यदि हमारे साथ वह व्यवहार किया जाता है? जिंक (जस्ता), गैलियम, इण्डियम, सिलीनियम, टैलीरियम, सोना, चाँदी प्लेटीनम, आर्सेनिक (संखिया) तथा अन्य यह विरोध पत्र प्रस्तुत करते होते कि यूराल के कारखाने कापर पाइराइट खनिज में उपस्थित केवल 10 प्रतिशत अंगों (Components) को ही निकालते हैं।

किन्तु, क्या यह हो सकता है कि क्षति अवश्यम्भावी हो? क्या हो सकता है कि इस सोने की छोटी मछली के पकड़ने का जाल बनाना व्यर्थ है, क्योंकि वह पर्याप्त असरदार नहीं होगा?

वस्तुतः, स्वयं कल्पना कीजिये, कि किसी आदेश से कुल नदियों, झीलों, सागरों तथा महासागरों की मछलियां अपने-अपने समूहों का साथ छोड़ कर कमोबेश समान रूप से पृथ्वी के गोले के कुल जलीय क्षेत्र में वितरित हो गई। आपको यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ऐसी परिस्थिति संसार के मछली उद्योग

के लिये बड़ी भयंकर होगी। कितना पानी छानना पड़ेगा जब कोई मछली जाल में दिखाई पड़ेगी। इसी प्रकार की परेशानी कुछ तत्वों के साथ भी है, जो पृथ्वी के पपड़े में होम्योपैथी की खूराकों की मात्राओं में वितरित हैं और इन्हीं मात्राओं मे पकड़े जा सकते हैं।

इसके बावजूद, इन तत्वों के औद्योगिक उत्पादनों के तरीके विद्यमान हैं। पर यह सच है कि वे उन तरीकों की अपेक्षा कम फल-प्रद हैं जिन्हें प्रकृति अपने रहस्यपूर्ण गर्भ में छिपाये हैं।

हम अभी बता चुके हैं कि सागरीय जल एक खनिजों का अद्वितीय उद्गम-स्रोत है। उदाहरण के लिये, रीगा के तट पर विश्राम करने के लिये आने वाले व्यक्तियों में से कोई भी सम्भवतः यह जान कर गर्वित हो उठेगा कि वह सोने के घोल में स्नान कर रहा है। कुछ गणनाओं के अनुसार संसार के कुल महासागरों मे स्वर्ण की मात्रा लगभग 7000000000 टन होगी। किन्तु प्रत्येक टन जल मे सोने की मात्रा एक ग्राम का पांच सहस्रांश होती है। आधुनिक तकनीक सागरीय जल से इस बहुमूल्य धातु को प्राप्त करने के मार्ग से मानवता को धनी करने की सम्भावना को प्रोत्साहन नहीं देता है। भय यह है कि धन (Capital) उतनी ही शीघ्रता से समाप्त होगा जितनी तेजी से वह इकट्ठा होगा। यद्यपि तत्वों को खींचने की ऐसी प्रभावप्रद विधियां विद्यमान हैं जो इतने तुच्छ सान्द्रणों में भी उपस्थित तत्वों को भी खींच ला सकती हैं। इन विधियों को, उदाहरण के लिये, कुछ सागरीय जीव उपयोग करते हैं।

प्रकृति से होड़ करते हुए, रसायन शास्त्रियों ने अनेक उत्कट विजयें प्राप्त की हैं और प्राप्त कर रहे हैं। किन्तु प्रकटतः ऐसा समय कभी न आयेगा जब उनको अपने महान गुरु से कुछ भी सीखने को न रह जाये। प्रकृति-दत्त पाठों को मानव अपने रचनात्मक श्रम द्वारा सीखता है। वह प्राकृतिक क्रियाओं की टेकनालाजी की नकल नहीं करता है वरन् स्वयं अपनी टेकनोलोजी का निर्माण करता है जो आदर्श कही जा सकने वाली टेकनालोजी से कभी कम और कभी-कभी अधिक भी परिपूर्ण होती है। इसमें समय की भौतिकी आवश्यकताओं, आर्थिक मांगों को-सबसे पहले ध्यान दिया जाता है। जहां तक अकार्बनिक रसायन का सम्बन्ध है, लोकतान्त्रिक अर्थ व्यवस्था के विकास की विशाल योजनायें अपने सामने फौरी समस्या के रूप में रासायनिक प्रणाली और क्रियाओं के अध्ययन को आगे रखती है, जो अधिक परिपूर्ण टेकनोलोजी का आधार निर्माण करती है। ऐसी टेकनोलोजी का आधार, जो कल के असम्भव को आज सम्भव बनाती है, कल जो असाभकर था उसे आज लाभकर बना देती है। यह टेकनालोजी पदार्थ का मूल्य-ह्रास कम से कम कर देती है और उद्योगों से फेंके हुए माल को पुनः कच्चे माल की हैसियत प्रदान कर देती है।

सर्वाधिक प्रचलित अर्ध उपजों (Semi manufacture products) के उत्पादन की टेक्नोलोजी के परिवर्तन ने विशेष रूप से दिखाई पड़ने वाले आर्थिक परिणाम प्रदान किये हैं। ये आधार भूत रसायन की 'तीन ह्वेलें' हैं। सल्फूरिक एसिड (गंधकीय अम्ल), सोडा, खनिज खादें। „।

जब हम किसी उद्योग के लिये किसी उपज की निस्सन्देह प्रथम दैनिक अनिवार्यता पर जोर देना चाहते हैं तो हम उसकी तुलना रोटी से करते हैं। सीमेण्ट—भवन-निर्माण की रोटी है। धातु—उद्योग (Industry) की रोटी है।

इस प्रकार उपरोक्त अकार्बनिक उपजों में से प्रत्येक उपज रोटी है, और किसी एक उद्योग की ही नहीं अनेकों उद्योगों की एक साथ।

वर्ष बीतते हैं, उत्पादन क्रियाओं के रूप और आचरण बदल जाते हैं, नये पदार्थ सार्वजनिक मान्यता प्राप्त कर लेते हैं। किन्तु सल्फूरिक एसिड, सोडा, खनिजीय खादें पूर्ववत् आज भी उद्योगों के लिये दैनिक आवश्यकता की वस्तुयें बनी हुई हैं और पहले से भी अधिक मात्राओं में अपेक्षित हैं। और अकार्बनिक रसायन के इन बुनियादी यौगिकों का स्थान आज तक कोई पदार्थ नहीं ले पाया है। इन्आर्गेनिक रसायन का सबसे शक्तिशाली वशधर, कार्बनिक रसायन भी इनको विनम्रता से सम्बोधित करता है। निस्सन्देह प्राचीन सल्फूरिक एसिड के बगैर न मिट्टी के तेल के परिशोधन का उद्योग सम्भव था, न विस्फोटक पदार्थ, दवाइयों, रङ्गों तथा प्लास्टिकों का बनाना ही सम्भव था। सब विषय नहीं गिनाये जा सकते हैं। यह समझा जाता है कि सल्फूरिक एसिड के उत्पादन और माग का स्तर देश के कुल रसायनिक उद्योग के स्तर का चरित्र चित्रित करता है। और मेंडेलीफ प्रणाली के सोलहवें खाने का तत्व गंधक संसार के अर्थ तन्त्र द्वारा सल्फूरिक एसिड के उत्पादन का मुख्य कच्चा माल समझा जाता है।

किन्तु मूल रूप से उपलब्ध गंधक के भण्डार प्रत्येक स्थान पर सल्फूरिक एसिड के उद्योग की आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक सीमा तक नहीं कर पाते हैं। जो गंधक की कमी पड़ती है, उसे विभिन्न गंधक रखने वाले खनिजों से पूरा किया जाता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, यह सदैव सुविधा पूर्ण (Rational) नहीं होता है। सल्फूरिक एसिड का उत्पादन लाखों टनो में होता है और फिर भी वह अधिकता में नहीं रहता है। इसके विपरीत प्रत्येक वर्ष इसकी औद्योगिकीय माग बढ़ती ही जाती है। पर्याप्त मात्रा में गंधक प्राप्त करने की समस्या भी, जो इससे जुड़ी हुई है, तेज होती जाती है।

सल्फ्यूरिक एसिड के उत्पादन का जो मुख्य तत्व है वही लौह धातु-कर्म (Iron metallurgy)) का मुख्य शत्रु है। खनिज लौह (Iron ore) की प्रत्येक

धातु कर्मिक मंजिल में गंधक को हर सम्भव उपायों द्वारा दूर किया जाता है। उदाहरण के लिये, विशाल धातु कर्म कम्बाइन (metallurgical combine) बहुधन्धी मिल प्रतिवर्ष औसतन जितनी मात्रा गन्धकीय गैस (Sulpur dioxide) को हवा में छोड़ती है, वह कुछ सौ हजार टन सल्फ्यूरिक एसिड (गंधकीय अम्ल) के उत्पादन के लिये पर्याप्त होती है। किन्तु 'ऐग्लोमरेशन' (ज्वालाश्म वमन) उस दृढ़ संघर्ष का केवल प्रारम्भ है, जो धातु-कर्म विशारद फौलाद की उत्तमता कम करने वाली हानिकारक मिलावटों के विरुद्ध चला रहे हैं। पिघलाऊ भट्टा के तलछट के रूप में भी गन्धक प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। इस तत्व को धातु के टबों से पृथक करने और किसी ऐसे यौगिक मे बांध देने के लिये, जो गन्धक को पीछे गले हुए फौलाद में न छोड़ दे, यह आवश्यक होता है कि गले पदार्थ बहुत ऊंचा उठाया जावे।

साधारणतः लौह धातु उद्योग के निकट सल्फ्यूरिक एसिड के उत्पादन का उद्योग जीवित रह सकता है। जिसके परिणामस्वरूप लोकतान्त्रिक अर्थ व्यवस्था को अनेकों मिलियन की बचत होती है।

प्राणि मात्र के लिये दुःखदायी हाईड्रोजन सल्फाइड, मिट्टी के तेल का परिशोधन करने वाले कारखानों के इर्द-गिर्द मिलती है, जो इस दुर्गन्धमय गैस को निकालते हैं। निकट भविष्य में कार्ल मार्क्स के शब्दों में ये 'उद्योग द्वारा उत्सर्जित पदार्थ' भी सल्फ्यूरिक एसिड के उत्पादन के मुख्य स्रोतों में गिने जाने लगेंगे। निस्सन्देह, उन्मुक्त होने वाली हाईड्रोजन सल्फाइड की मात्रा अत्यन्त विशाल होती है और मिट्टी के तेल के परिशोधन-उद्योग की वृद्धि के साथ बढ़ती जायेगी।

मूल-भूत रसायन की दूसरी ह्वेल-सोडा है। इस अर्ध-उपज (Semi Manufacture Product) के प्राचीन परम्परा वाले उपभोक्ता मानव जीवन को शाब्दिक अर्थ मे अधिक श्वेत और स्वच्छ बनाते हैं। ऐसा हम शीशा की बनी चीजें तथा विभिन्न धोने के माध्यम को दृष्टि में रखते हुए कहते हैं। समय के साथ सोडा के उपभोक्ताओं का वृत्त बढ़ रहा है। और इस समय सल्फ्यूरिक एसिड की भाँति ही सोडा भी प्रतिवर्ष लाखों टनों में उत्पादित किया जाता है। यदि सोडा को सोडियम की विशेष क्षारीय प्रकृति के कारण संसार भर की मान्यता प्राप्त हुई है, तो सोडियम को भी इस यौगिक में अपनी अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। इसी में यह कहा जा सकता है कि तत्व संख्या 11 की सृष्टि सोडा की अनिवार्यता को ही दृष्टि में रखकर की गई है।

सोडा उद्योग का दुःखद अंग उसका उच्छिष्ट-पदार्थ (Scrap) है। प्रत्येक चौबीस घन्टों मे मध्यम श्रेणी की सोडा फैक्टरी हजारों घन मीटर डिस्टिल करने योग्य द्रव फेंकती है।

विशुद्ध रसायनिक दृष्टिकोण से कोई पदार्थ स्क्रैप नितान्त अनुपयोगी नहीं होता है। ऐसा कच्चा माल हो सकता है जिसका अभी तक कोई मालिक न मिला हो अथवा ऐसा मालिक हो सकता है जो उस कच्चे माल का कोई उपयोग नहीं कर सकता है, जिसे वह अपने अधिकार से स्क्रैप (कूड़ा) की संज्ञा देता है।

आधुनिक सोडा बनाने के कारखानों का ऐसे उद्योगों में शुमार है जिनका; जैसा कि अर्थशास्त्री कहते है, बहुत ऊँचा पदार्थीय प्रातांक (Material index) होता है। इसका अर्थ यह है कि वे कच्चे माल के साधनों की बहुत बड़ी मात्रा में अपेक्षा करते हैं। एक टन सोडा के उत्पादन के लिये आधुनिक प्रणाली के अनुसार डेढ़ टन रसोई का नमक Nacl और इतना ही चूने का पत्थर व्यय होता है। इस सर्वोत्तम समझी जाने वाली टेकनोलोजी द्वारा सोडियम क्लोराइड Nacl से 75 प्रतिशत सोडियम और शून्य प्रतिशत क्लोरीन तथा चूने पत्थर से शून्य प्रतिशत कैल्शियम और 44 प्रतिशत कार्बोनिक एसिड का उपयोग हो पाता है। शेष अंश गहराई से डिस्टिल किये जाने योग्य सागर और नदियाँ स्क्रैप (फेंकने योग्य व्यर्थ पदार्थ) के रूप में निकालते हैं। सोडा उद्योग कच्चे माल के पर्वतों को हज्म करता हुआ अपने कच्चे माल के स्रोतों से बंधा होता है। इन पर्वतों को रेल द्वारा स्थानान्तरित करने में शासन की जेब को गहरी चोट पहुँचती है। दूसरी ओर कच्चे माल के स्रोतों की स्थिति औद्योगिक भूगोल का सगठन अपने अनुसार नही कर पाती है। परिस्थितियों वश सोडा कारखानो को उनके कच्चे माल के स्रोतों से दूर भी रखना पड़ता है।

सोडा उत्पादन में सुधार लाना हमारे समय की माँग है, लोकतांत्रिक अर्थ-व्यवस्था की माग है आधुनिक रसायन की माग है, जो स्क्रैपों को (विशेषकर-हानिकर स्क्रैपों को) लज्जा की दृष्टि से देखती है, और इसलिये संघर्ष करती है कि मेंडेलीफ प्रणाली का प्रत्येक तत्व अपनी सम्भावनाओं की पूर्ण क्षमता के अनुसार अपने लिये कार्य प्राप्त कर सकें।

हमारे विशेषज्ञों ने सोडा उद्योग में सुधार लाने के लिये कुछ उपाय निकाले हैं।

डिस्टिलेशन योग्य द्रव को, जहाँ वह अनिवार्य है, दो तरीकों से उपयोग करने के सुझाव आये हैं। कुछ कारखानों में, (उदाहरण के लिये दोनेत्स के कारखानों में) उसे अमोनियम क्लोराइड (खाद) तथा कैल्शियम क्लोराइड प्राप्त करने के लिये उपयोग किये जाने की योजना है। कैल्शियम क्लोराइड के संतृप्त घोलो का काफी नीचे तापमान तक न जमने का गुण इस लवण को प्रशीतन (Refrigeration) उद्योग में अत्यन्त उत्तम प्रशीतक (Refrigerant) तथा जाड़े की ऋतु में जब बगैर इस लवण के सब घोल जम जाते हैं, भवन-निर्माताओं का

सहायक बनाता है। किन्तु अमोनियम क्लोराइड अच्छा उर्वरक नहीं होता है और कैल्शियम क्लोराइड की माँग सोडा उद्योग द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली कैल्शियम क्लोराइड की मात्रा से बहुत कम है। उत्पादन से माँग कम है।

पर आज चमकने वाले अनेक ऐसे तत्व हैं; अनेक ऐसे रासायनिक यौगिक हैं जिनको किसी समय प्रयोगशाला की आलमारियों में बड़ा तुच्छ स्थान मिला था। समय ने उनको विस्तृत क्षेत्र प्रदान किया और उनके लिये अप्रत्याशित अभूतपूर्व माँग उपस्थित कर दी। 1825 ई. में योरोप में पहला जहाज चिली का साल्ट पीटर लेकर पहुँचा। कुछ साल्ट पीटर समुद्र में फेंक दिया गया। कोई ग्राहक नहीं मिला। 75 वर्ष बाद योरप ने दो मिलियन टन से ऊपर इस समुद्र पार से आये हुए लवण को खरीदा जो बड़ी उत्तम खाद सिद्ध हुई।

मूलतः समस्या का हल इस में है कि सोडा न केवल बगैर स्क्रैप छोड़े हुए निकले वरन् वह स्वयं भी दूसरे उद्योगों के स्क्रैपों से परिशोधन द्वारा प्राप्त किया जावे। रसायन ऐसी समस्याओं का हल देने में निपुण है। यहाँ जो प्रायोजन (Project) हमारे सामने है वह हमको पुनः अद्भुत खनिज नेफेलीन (Nepheline) तथा सिये नाइट (Syenite) की ओर ले जाता है। अलूमिनियम उद्योग में इन खनिजों का परिशोधन करते समय स्क्रैप के रूप में क्षारीय द्रव प्राप्त होता है। इसी को सोडा के उत्पादन के लिये कच्चे माल के रूप में लिया जा रहा है। इस समय इस योजना के अनुसार काम भी प्रारम्भ हो गया है।

यदि पहले अलूमिनियम उद्योग केवल सोडा का ग्राहक था (सोडा से बाक्सा ईंटों को व्यवहृत किया जाता था) तो अब वह उसका उत्पादन भी करने लगा है (जब नेफेलीन और सियेनाइट प्रारम्भिक कच्चे माल के रूप में लिये जाते हैं।) सोडा उत्पादन की यह नई विधि साधनों की बहुत बड़ी बचत सरकार को करती है और सोडा उद्योग के भूगोल का विस्तार करती है। इसका अर्थ यह है कि भविष्य इसी विधि के साथ है।

रसायन उद्योग के प्रमुख तत्वों में गंधक, नाइट्रोजन, कार्बन, आक्सीजन, हाइड्रोजन, सोडियम, फास्फोरस, कैल्शियम, क्लोरीन हैं। उनमें से तीन, नाइट्रोजन, पोटैशियम, फास्फोरस इस सम्मानपूर्ण सूची में मुख्यतः रसायन वैज्ञानिकों के श्रमों की बदौलत पहुँचे हैं। जिन्होंने पौधों के रहस्यों का उद्घाटन किया है।

यह दिलचस्पी की बात है कि कच्चे माल के आयात की कस्टम की दरों की सूची में सन् 1924 ई. में फास्फोराइटों के सामने "बिना मूल्य" अंकित होता था। खनिज-खादों (Mineral fertilizers) के लिये हमारा कच्चा माल उस समय पूरा नहीं होता था। इस समय फास्फोराइट खनिजों के ज्ञात भण्डार सोवियत संघ में 3 मिलियर्ड टन आते हैं और शेष कुल संसार में 6 मिलियर्ड

टन। इसी प्रकार हम (सोवियत संघ) पोटेशियम के भण्डारों में भी सारे संसार के देशों से आगे हैं।

हमारे देश की लोकतान्त्रिक अर्थ व्यवस्था के रसायनीकरण की योजना में मुख्य स्थान 'उर्वरक लवण' पैदा करने वाले उद्योगों का है। खनिक उर्वरकों के कारखानों के तेज निर्माण का कार्यक्रम बन चुका है। यह फसलों के भाग्य में रसायन की भूमिका को शक्तिशाली बनाने का कार्यक्रम है।

"कृषि के बुद्धि-संगत सर्वांगीण रसायनीकरण को अमल में लाना" सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में अंकित किया गया।

सोवियत संघ के कृषि विभाग के मंत्रालय के अर्थ शास्त्रियों की गणनानुसार कुछ खनिज खादें, जो कार्बनिक नहीं होती हैं, सही प्रकार से उपयोग किये जाने पर फसलों में आगे लिखी बढ़ोती दे सकती हैं, कपास की फसल 650 हजार टन, गन्ना में 4.2 मिलियन टन, फ्लेक्स के रेशे में 80 हजार टन, गन्ना में 30 मिलियन टन, आलू मे 16 मिलियन टन, सब्जी मे 13 मिलियन टन। देश में विकसित कृषि क्षेत्रों के भीतर कहना चाहिये नये और वे छोटे नहीं हैं—कृषि क्षेत्र पैदा हो रहे हैं। यदि प्रति हेक्टेयर से औसत उपज 30 सेन्टेनर भी ली जाये तो भी खनिज खादें देश को ऊँची उपज की क्षमता वाले 10 मिलियन हेक्टेयर उपहार में देंगी। उदाहरण के लिये यदि डेन्मार्क को खनिज खादों से वंचित कर दिया जाये तो उसे वर्तमान देश की पैदावार कायम रखने के लिये चार डेन्मार्क का क्षेत्र उधार लेना पड़ेगा। फ्रांस को खनिज खादों के अभाव में अपनी पैदावार प्राप्त करने के लिये अपने ही बराबर भूमि क्षेत्र और लेना पड़ेगा इत्यादि।

हमारे देश (सोवियत संघ) में खनिज खादों का खेतों में उपयोग निरन्तर बढ़ रहा है। किन्तु अभी तक जितना चाहा जाता है, उतने पैमाने पर नहीं पहुँचा है। प्रोफेसर अ. वसोकोलोव ने यह बताया है कि अभी तक हम पृथ्वी को फसलों द्वारा उससे ली जाने वाली नाइट्रोजन का केवल $\frac{1}{5}$ से $\frac{1}{4}$ अंश तक, फास्फोरस का $\frac{1}{2}$ से $\frac{2}{3}$ अंश तक, पोटेशियम का $\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{3}$ अंश तक ही लौटा पाते हैं।

ऐसा समझा जावेगा कि पृथ्वी से नाइट्रोजन फास्फोरस एवं पोटेशियम का फसलों द्वारा शोषण स्वयं बता रहा है कि खादों का क्या उत्पादन होना चाहिये; खादों के उत्पादन का बढ़ाना अनिवार्य है। परन्तु वस्तुतः यह इतनी सरल बात नहीं है। जैसा कि सदैव होता है, निर्णायक शब्द अर्थ शास्त्र के हाथ में है खादों के उपयोग की लाभकारिता का निश्चय उनके द्वारा बढ़ी हुई फसल के मूल्य तथा लगी हुई खाद के मूल्यों का अनुपात करता है। यह लाभकारिता

कई तथ्यों पर निर्भर करती है : कच्चे माल के प्राप्त करने, उसके सांद्रण और परिशोधन की दशायें, यातायात की परिस्थितियां, मिट्टी का गुण, कृषि फसल की किस्म आदि।

केवल सुपर फास्फेट उद्योग में एक वर्ष में रेलगाड़ी द्वारा परिवहन का कार्य 107 मिलियर्ड टन-किलोमीटर का विशाल अंक प्रगट करता है। यदि चन्द्रमा में खेती के लिये सुपरफास्फेट की मांग हो, और वहां तक रेल की पटरियां बिछी हों, तो उपरोक्त श्रम से हम कई दसियों हजार टन खाद रेल द्वारा चन्द्रमा में भेज सकते हैं ? इस अंक का मूल्य पृथ्वी के पैमाने पर समझने के लिये यह बताया जा सकता है कि यह इटली के कुल भार परिवहन के 70 प्रतिशत से ऊपर होता है।

निःसंदेह, रेलगाड़ी खाद के इस भार को अकेले ही खेतों तक नहीं पहुंचाती है। प्लेटफार्मों से खादों को उनके लिये बने गोदाम में ले जाते हैं, वहां से मोटर ट्रकों में भरते हैं और ग्रामीण मार्गों से गुजरते हुए ये ट्रक सामूहिक फार्म के गोदाम तक इन खादों को ले जाते हैं। वहां से फिर ढोकर वे खेतों में पहुंचाई जाती हैं। वहां बोने वाली मशीनरी में बार-बार उठाकर डालने का काम होता है।

इसका अर्थ यह है कि पूर्व-दत्त आंकड़ों में ट्रकों की ढुलाई, पैकिंग, संभाल कर रखने आदि का व्यय भी जुड़ना चाहिये।

गणना की गई है कि फास्फोराईट पाउडर की ढुलाई तथा खेतों तक पहुँचाई का व्यय एक वर्ष में 300 मिलियन रूबल पुरानी मुद्रा के अनुसार होता था और उसकी पहुँचाई का खर्चा उसके उत्पादन के व्यय से अधिक होता था।

सात वर्षों के अन्त में फास्फोरस की खादों का उत्पादन 14 मिलियन टन हो जायेगा। वर्तमान भार के ढोने की दूरी के अनुसार यातायात का अंक 30-40 मिलियर्ड टन-किलोमीटर की कास्मिक विशालता प्राप्त करेगा। 1975 ई. तक खनिज का उत्पादन दो से तीन गुना तक बढ़ जायेगा।""

किन्तु इसका हल क्या है ? अधिक प्रभाव-प्रद, अन्य खादों की आवश्यकता है रसायन शास्त्री इस दिशा में कार्य-रत हैं और उन्होंने इस समय भी ऐसे यौगिकों की श्रेणी तय्यार कर ली है जिनमें पहली खादों की अपेक्षा दो गुना तक अधिक लाभकारी पदार्थ होता है

ये उत्पादन में काफी बड़ी मितव्ययिता लाने वाले साधन होंगे। आगे चलकर रसायन शास्त्रियों को, प्रकटतः, अधिक ऊँची सान्द्रता वाली खनिज खादें तय्यार करना है—ठीक उस सीमा तक जहां उनमें कोई भी अंश व्यर्थ न रह जायेगा।

कृषि की सेवा करते हुए, रसायन को अर्थशास्त्र की समस्याओं की ओर भी चैतन्यशील होना है। रसायन कृषि द्वारा विभिन्न रसायनिक तत्वों और उनके यौगिकों की माँग की मात्रा निर्धारित करने में निर्णायक भूमिका अदा करती है। इसीलिये अमोनिया को, जो बहुमूल्य नाइट्रोजन की खाद अमोनियम नाइट्रेट के उत्पादन के लिये प्रारम्भिक 'कच्चा माल' के रूप में प्रयुक्त होता है, प्राकृतिक नाइट्रोजन गैस से प्राप्त करने का विचार इतना आकर्षक दिखाई पड़ता है। पहले अमोनिया के संश्लेषण के लिये कोल गैस का प्रयोग करते थे। इसमें प्राकृतिक नाईट्रोजन अथवा मिट्टी के तेल के साथ मिलने वाली गैस से अमोनिया प्राप्त करने की अपेक्षा ढाई गुना अधिक व्यय होता था।

……..बीसवीं शताब्दी, विज्ञान और तकनीक के इतिहास को, परमाणविक ऊर्जा जटिल रेडियो-विद्युत स्वचालन, राकेट तकनीक तथा मानव-प्रतिभा की अन्य विजयों का युग भेंट करती है। इन ऊंचाइयों पर चढ़ने वालों के बीच में अकार्बनिक रसायन शास्त्री पिछली पंक्तियों में नहीं थे। और वे पीछे रह भी कैसे सकते थे? निस्सन्देह अकार्बनिक एवं कार्बनिक रसायन तत्वों को जोड़ते व तोड़ते हुए, उनके भाग्यों को पूर्णतया अपने हाथों में ले लेता है। इस अद्भुत शक्ति के साथ रसायन शास्त्र उन सामग्रियों और पदार्थों की सृष्टि करता है, जो प्रकृति में नहीं हैं किन्तु जो इस युग में अनिवार्य हैं, जब राकेट उड़ते हैं, परमाणविक रयायलर काम करते हैं, फोटो तत्व, सूर्य बैटरी तथा अन्य अनेक चमत्कार पूर्ण वस्तुयें अस्तित्व में आ गई हैं।

फिर इसमें आश्चर्य ही क्या यदि हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी लोकतान्त्रिक अर्थ व्यवस्था की समस्याओं मे देश के रसायनिक उद्योग के विकास को प्रथम स्थान देती है। 1958 ई. में संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के मई प्लीनम के बाद हमारे देश मे रसायन तीव्र गति से आगे बढ़ा। मई प्लीनम के बाद के वर्षों में रसायन उद्योगों के निर्माण में पिछले तेरह वर्षों में लगाये गये साधनों का 1.7 गुना अधिक साधन लगाया गया।

किन्तु यदि आप पिछड़ना चाहें, तो यह बढ़ाव की गति भी संश्लेषित पदार्थों, खादों, तथा अन्य वस्तुओं की तेजी से बढ़ती हुई मांगों को सन्तुष्ट नहीं कर पाती, जिनके बगैर काम चलना कठिन है। "अस्तु, यह आवश्यक है कि रसायनिक उद्योग के प्रति ऊपर, अदूरदर्शी रुख छोड़ दिया जावे और इस दिशा में सरकारी कार्य को विस्तृत किया जावे एवं रसायनिक उद्योग के विकास से लोकतान्त्रिक अर्थव्यवस्था को प्राप्त होने वाले विशाल लाभों और सम्भावनाओं का आर्थिक दृष्टि से ठीक-ठीक मूल्यांकन किया जावे।" एन. एस. ख्रुश्चोव ने

नवम्बर प्लीनम की अपनी रिपोर्ट में कहा था। उसने नियोजन-संगठनों को सलाह दी कि वे "स्टालिन के समय के पिछड़ेपन को त्याग दें और विशाल लोकतान्त्रिक अर्थ व्यवस्थाओं को रसायन उद्योग के प्रमुख विकास से प्राप्त होने वाली फलप्रदता का उसके गौरव के अनुसार मूल्यांकन करें।

इसके अपरिमित और विशेषतः जाज्वल्यमान प्रमाणों में एक यह है कि यदि टर्बोजनरेटरों (टर्बोजनित्र) के उत्पादन में सिलिकोन-आर्गेनिक विसंवाहनों (Insulations) का प्रयोग किया जाये तो पैमाने एक ही रखते हुए, वे 10 प्रतिशत या इससे भी अधिक शक्तिशाली हो सकते हैं। इसी आधार पर सप्तवर्षीय योजना के अन्त में प्राप्त थर्मल विद्युत स्टेशन की अतिरिक्त शक्ति वोल्फस्क के वे. इ. लेनिन के नाम वाले हाइड्रोविद्युत् स्टेशन की शक्ति के बराबर होगी और सिलिकन आर्गेनिक प्रलाक्षारस प्रयोग करने वाले कारखानों के निर्माण में वोल्फस्क हाइड्रोएलेक्ट्रिक स्टेशन के खर्च की तुलना में दसियों गुना कम व्यय होगा।

"बगैर रसायनिक उद्योग को विकसित किये हुए साम्यवाद का भौतिक एवं तकनीकी आधार थोड़े समय के अन्दर बना लेना असम्भव है" एन. एस. ख्रुश्चोव ने 15 मार्च 1963 में लिखा था।

2

और, जैसा सदैव होता है, रसायनिक उद्योग की नई उड़ान के पथ विज्ञान की सफलतायें होंगी। निस्संदेह, केवल कार्बनिक रसायन की ही सफलतायें नहीं, यद्यपि कार्बनिक-संश्लेषण उद्योगों को विशेष प्रगति दिखाना है। अकार्बनिक रसायन की भूमिका में आधुनिक तकनीक की बहुत सी बातें निर्भर हैं।

अर्धचालकों (Semi conductors) की रसायन.......। अभी विज्ञान के मानचित्र में नये राज्य की सीमाओं को निर्धारित करने वाले विशेष निबन्ध और पाठ्य पुस्तकें भी नहीं आई हैं और उसमें जीवन उफान खा रहा है, जोश उबल रहा है, वाद-विवाद चल रहा है, पड़ोसियों से मित्रतापूर्ण पारस्परिक सम्बन्ध आयोजित हो रहे हैं: क्वाण्टम रसायन, मणिभीय रसायन, भौतिकीय रसायन... आदि से।

विज्ञान के इस नये शिशु के सामने क्या समस्यायें हैं? वह स्वभावतः उन साधारण नियमों की खोज करने का प्रयत्न कर रहा है, जो पदार्थ के आन्तरिक गुणों और उसके अर्ध-चालन (Semiconductor) गुणों के मध्य विश्वसनीय पुल देने की क्षमता रखते हैं। केवल विश्वसनीय प्रवीण पुल के सिद्धान्त की सहायता से ही, उसके रसायनिक गठन (Contents) और ढांचे को जानते हुए, अर्ध-चालक पदार्थ के आचरण के बारे में पर्याप्त ठीक भविष्यवाणी करना

सम्भव हो सकेगा। इसका अर्थ है कि ठीक ऐसे अर्ध-चालक पदार्थों के संश्लेषित किये जाने की सम्भावना नजर में आ रही है जिनकी, उदाहरण के लिये, नाजुक मिजाज रेडियो तकनीक को आवश्यकता है।

यह रसायन की परम्परागत, गम्भीर, सैद्धान्तिक समस्या है। वह पदार्थ के पूर्ण गर्भ में हमें पहुँचा देती है, वहाँ जहाँ रासायनिक तत्वों का व्यक्तित्व उनकी बाह्य अभिव्यन्जनाओं में नहीं प्रगट होता है वरन् ठीक परमाणु की शारीरिक गठन में अभिव्यक्त होता है।

कुछ समय पूर्व तक रसायन शास्त्र की विश्वसनीय पुस्तकों में जर्मेनियम के बारे मे पढ़ा जा सकता था : "औद्योगिक पैमाने पर इसका उत्पादन लगभग नहीं होता है। अस्तु, हम केवल उसके संक्षिप्त विवरण तक अपने को सीमित रखेंगे। जर्मेनियम के यौगिक चमकदार रजत-पट तथा ऊँचे रीफ्रैक्टिंग शीशों के बनाने में प्रयोग किये जाते हैं...." सिलिकन के बारे में इससे अधिक वर्णन मिलता था पर उसके सबसे मूल्यवान अर्ध-चालकीय गुणों का कोई उल्लेख नहीं होता था।

इधर-उधर अव्यवस्थित रूप से छितरे हुए पत्थरों को देखते हुए हमारे दूर के पूर्वजों ने सोचा, "इनका क्या उपयोग हो सकता है ?"

उस प्राचीन समय से प्रत्येक युग अपना उत्तर इस प्रश्न के बारे में देता आया है। सिलिकन और जर्मेनियम के इतिहास का सबसे पिछला अध्याय इसका ताजा उदाहरण है।

कुछ ही वर्षों के दौरान तकनीक के सभी विभिन्न क्षेत्रों में अर्ध-चालकों का प्रवेश हो गया, जो अपने साथ गुणात्मक रूप से नई और असाधारण तथा दिलचस्प सम्भावनायें लाये थे। विशेषतः उन्होंने रेडियो तकनीक के विकास की त्रिमुखी प्रवृत्तियों को अपना उत्तर प्रदान किया। रेडियो यन्त्र का संक्षिप्तीकरण, उसके टिकाऊपन मे वृद्धि लाना और उसकी विश्वसनीयता को बढ़ाना। अर्ध-चालकों के उपयोग का दूसरा क्षेत्र ताप-विद्युत (Thermo electric) यन्त्रों और प्लांटों का निर्माण प्रगट हुआ। सिलिकन की सौर बैटरियां कास्मास में पृथ्वी से परे स्वचालित प्रयोग शालाओ में स्थित रेडियो यन्त्रों की शक्ति की आवश्यकता को परिपूर्ति करती हुई बड़ी पटुता से काम करती हैं।

तकनीक हर किस्म की नई मांग को वैज्ञानिक प्रयोगशालाओ से प्राप्त करते हुये, साधारणतः, उल्लास से भर कर शीघ्र अधिकार पूर्ण लहजे में मांगें पेश करने लगती है। अमुक-अमुक अर्ध चालक मौजूद हैं, किन्तु, मालूम पड़ता है, शीघ्र ही अन्य अर्ध-चालकों की भी आवश्यकता पड़ेगी, वे कहाँ हैं ? वे कब तक बन जायेंगे ?

नये अधिक सवेदनशील, विश्वसनीय अर्ध-चालक-पदार्थों का संश्लेषण करते हुए वैज्ञानिकों को अभी भी प्रायः अनुभवों के सहारे खोज करने का रास्ता लेना पड़ता है। यह स्पष्ट है कि यह ढंग न सबसे सरल होता है न सबसे अधिक फलप्रद। मुख्य दिशाओं की प्राप्ति के लिए सैद्धान्तिक समस्याओं को सफलता पूर्वक हल करना अनिवार्य है। अर्ध-चालक रसायन के लिये अतिरिक्त ऊंची शुद्धता रखने वाले अर्ध-चालकीय पदार्थों के प्राप्त करने के रसायनिक एवं भौतिक रसायनिक ढगों को खोज निकालने का कार्य विशेष महत्व का है।

स्वभावतः हम प्रायः कहा करते हैं। स्वच्छ जैसे, ओस, निर्दोष जैसे आँसू। यह काव्यमय है पर पुरातन भी है। हमारे समय में शुद्धता का आदर्श न पहला हो सकता है न दूसरा। किसी भी प्रकार अर्ध-चालक-रसायन में तो हो ही नहीं सकता।

विशेषज्ञ, अनिवार्य शुद्धता की सीमा का मूल्यांकन करते हुए कहते हैं : नौ-दशमलव नौ। इसका क्या अर्थ है ?

इसका प्रत्यक्ष उदाहरण यह है। एक गिलास पूर्ण परिशुद्ध जल में एक नमक का कण घोलिये। इसमें से एक अगुश्ताना भर घोल निकालकर चालीस बाल्टियों वाले पीपे के शुद्ध जल में डालिये और उससे एक बूंद द्रव लेकर दूसरे शुद्ध जल के चालीस बाल्टियों वाले पीपे में डालिये। तब इस पानी की शुद्धता लगभग 99,999999999 प्रतिशत होगी यानी दशमलव के नौ अंकों तक शुद्धता मिलेगी (दशमलव के बाद नौ अंकों तक शुद्ध मूल्याकन करते हुए)।

अर्ध-चालकीय पदार्थ की अत्यन्त ऊंची शुद्धता की मांग इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि ट्रांजिस्टर के काम में अत्यन्त सूक्ष्म मिलावटें भी प्रभाव डालती हैं। उसका कोई निश्चित कार्य करने का आचरण कुछ गिने हुए विजातीय परमाणु भी, जिन्हें यन्त्र के पदार्थ से नहीं निकाला जा सका है, भंग कर सकते हैं।

कुछ प्रौद्योगिकीय क्रियाओं (Technological operations) के स्वचालन (automation) के प्रयत्न इसलिए गम्भीरता से अवरुद्ध हो जाते हैं क्योंकि क्रिया के चलने से सम्बन्धित आवश्यक सूचनाओं को इकट्ठा करना कठिन और कभी-बिलकुल ही असम्भव होता है। उदाहरण के लिए धातु-उद्योग में पिघलती हुई द्रव धातु के तापमान को गिराना कठिनाई उपस्थित करता है। वर्तमान ऊष्मा खींचने वाले यन्त्र (रूसी भाषा में इन्हें दातचीक कहते हैं) द्रवित धातु फौलाद गलाने वाली भट्टी के लाल तप्त मेहराबों, तेज गर्म गैसों की धाराओं आदि के स्पर्श से उत्पन्न होने वाली अनिवार्य ऊष्मा से भय खाते हैं। इस दिशा में अर्ध-चालकों की रसायन की वास्तविक समस्या कठिनता से गलने वाले अर्ध-चालक यौगिकों से सम्बन्धित प्रणालियों का अध्ययन तथा कठिनता से गलने वाले वांछित अर्ध-चालकों के संश्लेषण की विधियों का निकालना बन गई।

आधुनिक तकनीक, साधारणतः कठिनता से गलने वाले यौगिकों के प्रति सजीव आकर्षण उपस्थित करती है। यह समझना कठिन नहीं है कि क्यों वह ऐसा करती है। तकनीकी उन्नति के लिए, काम करने वाली क्रियाओं के तापमानीय स्तरों को ऊंचा करने के अदम्य प्रयत्न स्वाभाविक हैं। किन्तु तापमानिक सीढ़ी की गुलाबी मिराज-वत् ऊंचाइयों पर चढ़ने वाला प्रत्येक कदम बड़ी कठिनाईयों से भरा होता है। बार बार आपको इस जटिल समस्या का मुकाबला करना पड़ता है। नए प्रकार के ऐसे ईंधनों का निर्माण करना जो बेशुमार ऊष्मा दे सकें और साथ ही ऐसे पदार्थ तैयार करना जो न सही जाने वाली ऊंची गर्मी को बरदास्त कर सकें।

आधुनिक तकनीक की अग्रतम शाखायें—जेट-इन्जिन सम्बन्धी, राकेट सम्बन्धी, परमाणु सम्बन्धी, तथा अन्य-अग्नि सम्बन्धी क्रियाओं पर काबू पाने की सफलताओं पर आधारित थी। और अग्नि के विकराल मुख के सम्मुख केवल विशेष अकार्बनिक यौगिक ही डट सकते हैं। तकनीक भी अपने विकास के मार्ग को ताप सम्बन्धी रुकावटों से अवरुद्ध देख कर अकार्बनिक रसायन के दरवाजे खटखटा रही थी।

किसी दूर अज्ञात समय से मानव लकड़ी व कोयला जलाकर और बाद में किरोसिन (मिट्टी का तेल) बेन्जीन का काला तेल, प्रकृति से प्राप्त गैस जला कर ऊष्मा प्राप्त करता आया है। इस प्रकार ईन्धन का इतिहास साधारणतः केवल कुछ हाइड्रोकार्बन पदार्थों से परिचित था।

किन्तु अब बीसवी शताब्दी का नभमण्डल आगे निकले हुए पृष्ट धड़ों एव पीछे लगे पलनों के सहित वायुयानों का सुपरिचित घर बन गया है। अब कंकरीट के बने हुए प्लेटफार्मों से गरजता हुआ, एवं अग्नि की पूंछ छोड़ता हुआ राकेट विशाल ऊंचाईयों को उड़ता है।

रसायन शास्त्री घोर परिश्रम करके नए, अधिक तीव्र गति से चलने वाले जेट विमानों के लिए, तथा उससे भी अधिक शक्ति से चलने वाले राकेटों के लिए ईंधनों की खोज करने लगे। उनका ध्यान बोरोन और हाइड्रोजन के संयोग से बनने वाले यौगिकों ने खींचा। बोरोन और हाइड्रोजन को, या जैसा कि उन्हें अभी भी कहा जाता है बोरोनों की ऊष्मीय क्षमता (Caloritic value) 15 हजार किलोकैलोरी प्रति किलोग्राम ईंधन है। यह कार्बन-हाइड्राइड जाति के ईंधनों से प्राप्त होने वाली ऊष्मा से डेढ गुना अधिक होती है। और ये बोरोन के यौगिक विद्युत-गति मे जलते हैं, जो जेट मोटरों के लिये विशेष महत्व रखता है। बोरोन रखने वाले खनिज की भी कमी नहीं है - फोटोग्राफी से दिलचस्पी रखने वाले सब जानते हैं कि यह साधारण सुहागा है।

मध्य डालते हैं। उदाहरण के लिये, गैस टर्बाइन को 300°C से 1000°C से कुछ ऊपर तक के तापमानों पर चलने वाली क्रिया मे उपयोग करते हैं और क्रिया को पर्याप्त तेजी से सम्पन्न करते हैं। तेजी से होने वाले तापमानो के परिवर्तन उतनी ही तेजी से धातु के यन्त्रो के आयतनों, लम्बाई चौड़ाई (साइजो) में परिवर्तन उपस्थित करते हैं। अग्नि-सह कवच कभी छोटा और कभी बड़ा हो सकता है। पहले प्रयोग किये जाने वाला एनेमल (Enamel) अत्यधिक आन्तरिक खिचावों के प्रभाव से, जो धातु की ऊष्मीय श्वासों से पैदा होते हैं, कड़क जाता था या टूट कर अलग हो जाता था। ऐसी बनावटों (Compositions) का प्राप्त करना आवश्यक था जो अपनी परत को वही रेखीय प्रसरण गुणांक (Coefficient of linear expansion) प्रदान करते हों जो उनके द्वारा रक्षित किये जाने वाले पदार्थ के रेखीय प्रसरण गुणांक के बराबर या लगभग बराबर हों। ऐसी बनावटें भी खोज ली गईं। ये हैं धातु-मिश्रित (Metalic) सीरेमिक्स (मृत्तिका शिल्प)। उनके आधार सिलीकेट रोगन (Paint) और सिरासीन (Cerasin) होते हैं। प्रथम अपने साथ अग्नि-सह गुण लाता है (सिलिका 1700°C से ऊपर तापमान पर पिघलता है) और दूसरे का काम रक्षित पदार्थ के ऊपर पहनी जाने वाली कमीज को फिट (शारीरिक नाप से बिल्कुल उपयुक्त) करना है।

आवरण (परत) में अत्यधिक दृढ़ता होना भी आवश्यक होता है। हर प्रकार के पदार्थों और हर प्रकार की परिस्थितियों से उसे अपने ढांचे के अन्दर मुकाबला करना होता है। यदि पहले के सिलीकेटीय आवरण अपने ढाचे को 0.03 किलोग्राम मीटर के धक्के के भीतर ही छोड़ देते थे तो अब नये सिलेकेटीय आवरण 0.8 किलोग्राम मीटर के ऊपर के धक्कों पर भी नही टूटते हैं।

किन्तु यह कहना गलत होगा कि धातु-क्षय के विरुद्ध मुख्य संघर्ष में विज्ञान की विजय हो गई है। अग्नि-सह आवरणों की खोज अभी इस समस्या का हल अधिक दूर तक नही प्रस्तुत करती है। और वे उन सब परिस्थितियो में काम करने के लिये नहीं प्राप्त हैं, जिनमें काम करने के लिए उनकी मांगें हैं। प्रत्येक धातु के लिए, विशिष्ट परिस्थितियों में, जहां उन्हें काम करना है; नये स्वतन्त्र, मौलिक रक्षा करने वाले कवचों को ढूंढना पड़ता है। और इस समस्या से सम्बन्धित सिद्धान्त के जटिल होने के कारण प्रायः अनाड़ी प्रकार से अनुभव के आधार पर चलने वाली खोज यहां अपना पूर्ण राज्य स्थापित कर लेती है।

गले हुए लवण धातु के साथ प्रबल रूप से उसके उत्पादन एवं परिशोधन की कुल मजिलों मे उपस्थित रहते हैं। धातु-मल, कुल सम्भव फ्लक्स, वैद्युत अथवा तापीय साधनों के गुसल (Bath), सुरक्षात्मक आवरण, धरातलीय परिशुद्धता के लिए

द्रव सभी गले हुए लवणों की भूमियों की भूमिका से सम्बन्धित हैं। वे एक अत्यन्त सुन्दर भूमिका संचायकों—ताप वाहकों—के रूप में अदा करते हैं जब तापमान विशेष ऊंचे हो जाते हैं। अन्त में, रसायन शास्त्री प्राकृतिक खनिज की कुछ किस्मों मे उसके बहुमूल्य अंगों को गले हुए लवणों द्वारा निकालते हैं। उदाहरण के लिए लिथियम के यौगिकों को स्पाडूमीन (Spodumene) से इसी विधि से पृथक करते हैं। इस प्रकार, यदि अकार्बनिक रसायन के सामने इस समय उपस्थित समस्त समस्याओं का उल्लेख किया जावे तो गले हुए लवण उस क्षेत्र में आते हैं जहां सिद्धांत की बड़ी ऊंची मांग है।

अभी भी मणिभीकरण तापमान (crystalization temperature), लवणों की वाष्पशीलता (volatility) ऊंची तापमानिक सीमाओं पर गले पदार्थ की उपस्थिति के बारे में ज्ञान बहुत कम है। अभी वे पगडंडिया भी नहीं बिछाई जा सकी हैं जिनके सहारे इन तरलताओं के विभिन्न गुणों के रेखाचित्रों के मध्य सम्बन्ध स्थापित किये जा सकें।

गले हुए लवणों द्वारा जनित धातु-क्षय पर काबू पाने की विधियों को निकालने के लिये एक दूर तक लक्ष्य करने वाले विषय के रूप में काम चल रहा है जैसा विदित है, अधिकतर अवसरों में वे अपने द्वारा स्पर्शित धातु के ऊपरी धरातलों को खा लेते हैं। किन्तु ऐसे पदार्थों का खोज लेना सम्भव है जो विघ होने वाले अंश को मलहम का गुण प्रदान कर देंगे—एक ललचाने वाली योजना।

भावी तकनीक की उस विशाल चढ़ाई की सीमाओं और कुल दिशाओं की भविष्यवाणी करना कठिन है जो इस समय अकार्बनिक रसायन की, बिल्कुल अभी तक अछूती, भूमि पर—विरल तत्वों की भूमि पर सम्पन्न की जा रही है।

विरल मिट्टियों के ग्रुप को भी लेना है।

"इनका उपयोग क्या है?" अकार्बनिक रसायन शास्त्रियों ने घोर परिश्रम द्वारा उन्हें विलग करते हुए और उनके सहजातियों को प्रभेदित करते हुए अपनी परेशानी प्रकट की। व्यावहारिक कार्यकर्त्ता कंधे बिचकाते हुए कहते थे : "कांच के उद्योग में, सिरेमिक उद्योग में— फिर कहां उनका उपयोग किया जाये, नहीं मालूम है। इसलिए, अभी रसायनिक साथियों, इस बहुमूल्य उपज के उत्पादन मे जल्दी न कीजिये।"

किन्तु ये अनोखे अनन्य पदार्थ, जिनके बारे में यह भी नहीं ज्ञात था कि प्रकृति ने उन्हें किस काम के लिये बनाया है, शीघ्र ही महत्वपूर्ण कच्चे माल में परिणित हो गये। तथापि, इस प्रकार के परिवर्तन बीसवीं सदी को आश्चर्य-

चकित नहीं करते हैं। वह भौद्योगिक क्षेत्र में अकार्बनिक रसायन के ऐसे यशस्वी, अग्रणी कार्यकर्त्ताओं की शानदार पल्टन की प्रत्यक्ष साक्षी है जैसे वनाडियम, कोबाल्ट, मालीबडोनम, यूरेनियम, प्लूटोनियम, थोरियम, बेरीलियम तथा अन्य।

जैसे ही परमाणविक तकनीक का ध्यान विरल धातु पदार्थों की ओर आकर्षित हुआ, वे महत्वपूर्ण पदार्थ बन गये। वैज्ञानिकों ने घोषित किया कि सीरियम, गैडोलीनियम, समेरियम, एवरोपियम तथा विशेषरूप से इट्रियम (Yttrium) को इस क्षेत्र में अत्यन्त विविधता पूर्ण उपयोग प्राप्त हैं।

ये धातुयें तापीय न्यूट्रोनों, जैसा कि उन्हें कहा जाता है, के प्रति एक सदृश व्यवहार नहीं प्रकट करती हैं। आपको स्मरण होगा कि तापीय, धीमे न्यूट्रोन नाभिकीय रिऐक्टर (Nuclear Reactor) में शृंखलाबद्ध अभिक्रियाओं (Chain Reactions) को पहल देने वालों और उन्हें जारी रखने वालों की भूमिका अदा करते हैं, अर्थात् मुख्य भूमिका अदा करते हैं। यदि उनकी संख्या अपर्याप्त होती है तो नाभिकीय ईंधन केवल लड़खड़ाता हुआ चलता है या बुझ जाता है। यदि उनकी संख्या सामान्य (Normal) से अधिक होती है तो भी बुरा होता है। शृंखला बद्ध अभिक्रिया इतनी तेजी पकड़ लेती है कि उसे विस्फोट से नहीं बचाया जा सकता है। इसलिये तापीय न्यूट्रोनों को निश्चित रूप से क्रिया के लिये आवश्यक मात्रा से न अधिक होनी चाहिये न कम।

नाभिकीय ईंधन—यूरेनियम, प्लूटोनियम, या थोरियम—रीएक्टर में धातु के आवरणों में भर कर रखा जाता है। धातु के अन्य ढांचे भी होते हैं, जो रिएक्टर के सक्रिय क्षेत्र में स्थित होते हैं। इन ढांचों के बनाने वाले पदार्थ को ऐसा होना चाहिये कि वह तापीय न्यूट्रोनों के बीजकेन्द्रों के तोड़ने के कार्य को पूरा करने में बाधा न उपस्थित करे, अर्थात् जैसा कि विशेषज्ञ कहते हैं उनका तापीय न्यूट्रोनों की पकड़ का वृत्त छोटा होना चाहिये। इट्रियम का तापीय न्यूट्रोनों की पकड़ का दायरा छोटा होता है और इसके साथ ही वह हल्का और दृढ़ होता है। ये सब गुण तत्व संख्या 39 को परमाणविक तकनीक की रचनाओं के लिए उपयुक्त पदार्थों की प्रथम पंक्ति में बैठा देते हैं।

और लैन्थेनायडे गैडोलीनियम और येवरोनियम तापीय न्यूट्रोनों की पकड़ का बड़ा दायरा रखते हैं। यह भी बहुमूल्य है। वे जीव-विज्ञान (biological) सुरक्षा सम्बन्धी समस्याओं को अधिक सफलता के साथ हल करने की अनुमति देते हैं। अमेरिका के वैज्ञानिकों की सम्मति से इसके लिए मोटी चद्दर के स्थान पर पतली और हल्की चद्दर बनाना सम्भव है। निस्संदेह, विशाल, भारी जैवीय सुरक्षा कवच वैमानन (aviation) में परमाणविक मोटरों के प्रवेश करने में गम्भीर बाधा उपस्थित करता है।

किन्तु केवल परमाणविक तकनीक ने ही विरल मिट्टी को स्वीकार किया हो ऐसी बात नहीं है। धातुकर्मिक विज्ञान (Metalurgy) ने प्रतिपादित किया है कि इन तत्वों का मिश्रण (जिसे रूसी भाषा में मीशमेनाल कहते हैं) स्टेनलेस स्टीलों (Stainless steels) पर लाभकारी प्रभाव डालता है : उनकी पत्तर अथवा चद्दर बनाने की क्षमता को बढ़ाता है (जो अधिकांश किस्म के बेदाग इस्पातों का मार्मिक पहलू है) तथा धातु-क्षय के विरुद्ध दृढ़ता देता है।

प्रकट हुआ कि, उदाहरण के लिए, प्रेजिग्रोडिमियम (Presodymium), सीरियम (Cerium), लैन्थेनम (lanthanum) की आक्साइडें ऊंची ताप वैद्युतीय चालक शक्ति (Thermoelectric motive force) रखती है। 500°C-700°C के तापमानों तक गर्म किये जाने पर वे विद्युत बैटरी का रूप ले लेती हैं, जो 1·4 वोल्ट तक की विद्युत-धारा देती हैं।

इट्रियम प्रख्यात गेटर (Getter) उच्च शून्यक (high vacuum) की दशाओं में प्राप्त होने वाली गैसों के ग्राहक के रूप में प्रकट हुआ। और उच्च शून्यक उच्च दशाओं की भांति ही, विज्ञान और तकनीक का आधुनिकतम, निरन्तर पूर्णता की ओर विकसित होने वाला अस्त्र है, जो प्रकृति के बहुत से रहस्यों के हल की, चमत्कारपूर्ण यन्त्रों के निर्माण की, असाधारण प्रक्रियाओं के सफल संचालन की, जादू भरी कुन्जी है। उच्च तापमानिक प्लाज्मा एवं तापनाभिकीय प्रतिक्रियाओं के अनुसन्धानक अति उच्च शून्यक (Super high vacuum) के प्राप्त करने में गम्भीरता से दिलचस्पी रखते हैं। पूर्ण दर्शी (gyroscope) कास्मिक यान के स्वचलित निर्देशक—के निर्माताओं को भी विश्वसनीय शून्यक की आवश्यकता थी और इलेक्ट्रोनिक लैम्प तथा सिनेस्कोप के निर्माताओं को भी इसकी आवश्यकता थी। और सिन्क्रो साइक्लोट्रोन (Synchro-cyclotron) को भी...........।

अधिक विनयशील एवं भौमिक सीरीयम के सम्भव उपयोग हैं। मोटर बनाने और मोटो मोटरों के केन्द्रीय वैज्ञानिक अनुसंधान के संस्थान, विरल धातुओं के राजकीय संस्थान, और गोर्की नगर के मोटर के कारखाने के सम्मिलित कार्य ने यह सिद्ध किया कि यह तत्व मोटर के कारखानों मे क्रैकशाफ्ट (Crank Shaft) बनाने वाले कच्चे लोहे को बहुत उत्तम बना देता है।

सन् 1962 ई० मे स्वेर्दोव्स्क में विरल तत्वों के उपयोग के बारे में होने वाले सम्मेलन ने प्रगट किया कि इस समय यान्त्रिक इन्जिनियरिंग उद्योग (mechanical engineering industry) जिर्कोनियम की सान्द्रित उपजो की ओर अधिक दिलचस्पी दिखा रहा है।

(जिर्कोनियम के सान्द्रण) जलने के विरुद्ध बड़ी सहनशीलता एवं स्थायित्व करने वाले पदार्थ होते हैं। उनका धातु गलाने के कारखानों में उपयोग स्मेल्टिंग विभाग के कर्मचारियों की संख्या आधी कर देता है। और प्राप्त होने वाली धातु—सिलों अथवा पिन्डों की ऊपरी सतह साफ सुथरी होती है और कटाई छटाई अथवा तराशने की क्रिया सबसे कम हो जाती है, यूक्रेन तथा फेडरेशन के अनेक कारखाने इन्हीं उद्देश्यों से जिर्कोनियम सान्द्रणों का उपयोग इस समय भी कर रहे हैं।

और कितना अच्छा हो यदि स्वाभावतः गुणो, तत्व बोरोन विरल मिट्टी के तत्वों से संयोजित होने लगे ? इस सुखद विचार ने अकार्बनिक रसायनशास्त्रियों को रेडियो-इलेक्ट्रोनिक के लिए अत्यन्त बहुमूल्य पदार्थ प्राप्त करने मे सहायता दी। विरल मिट्टी के धातुओं (विरल मृद-धातु) के बोराइडो मे, विशेषतः लैन्थेनम के हेक्सा—बोराइड में गर्म होने पर इलेक्ट्रानों की अत्यन्त बडी मात्रा उन्मुक्त करने की क्षमता होती है, दूसरे शब्दों में, उनमें उच्च तापीय–उत्सर्जन के गुण होते हैं। बोराइडों के कैथोड नीचे दबावों की दशा मे उत्तम कार्य करते हैं, ऊँचे तनावों के क्षेत्रों में (high tension fields) में उपयोग किये जा सकते हैं; आयनिक बम्बार्डमेंट से उसके गुण खराब नहीं होते हैं।

यदि अभी कुछ ही दिन पूर्व अकार्बनिक रसायन के इस सुझाव पर कि 'विरल मिट्टी के तत्वों का अधिक मात्रा में उत्पादन किया जावे' व्यावहारिक क्षेत्र की प्रतिक्रिया सुस्त थी, तो अब व्यावहारिक क्षेत्र अकार्बनिक रसायन शास्त्रियो पर आरोप लगाता है कि वे इन लगभग अगम्य तत्वो के उत्पादन के ढगों को सुधारने व परिपूर्णता की ओर विकसित करने में सुस्ती दिखा रहे हैं, जिससे विरल मिट्टी के तत्व अभी अक्षम्य रूप मे महँगे हैं और कम परिमाण मे प्राप्त होते हैं। फिर भी, कुल लैन्थेनायडों के लिये अभी बहुत अधिक मांग नहीं है। पर समय बीतने पर, जब उनके उपयोग और अधिक स्पष्ट हो जायेंगे उनकी मांग पैदा हो जायगी। यह अवश्यम्भावी है वे तत्व जो इस समय किसी प्रयोग में नहीं आते हैं भविष्य मे खुलने वाले दरवाजे हैं जो इस समय पूर्ण रूप से बन्द हैं। और ससार मे सबसे अधिक आकर्षक और महत्वपूर्ण वही है जो इन बन्द दरवाजो के पीछे छिपा है। इसका मतलब यह है कि इस समय भी उनकी कुञ्जियां प्राप्त करने के लिये कुछ न कुछ लोग लगन के साथ जुटे हैं।

प्राग में विज्ञान को सुयोजित करने के सम्बन्ध में किये गये परिसंवाद (Symposium) में बोलते हुए वैज्ञानिक पे. एल. कपित्सा ने विशेषतः इस विषय पर जोर दिया कि "अभी तक कोई परिमाणात्मक सिद्धान्त ऐसा नहीं है

जो पदार्थों के गुणों को—उदाहरण के लिये उनके यान्त्रिक गुण, ऊँचे तापमानों की दशा में ग्राक्सीकरण का विरोध करने की क्षमता, तथा अन्य—को उनकी रसायनिक बनावटों और भौतिक ढाचों से सम्बन्धित कर सके, यद्यपि परमाणुओं के मध्यस्थ शक्तियों की प्रकृति भली भांति ज्ञात हो चुकी है।"

इसीलिये खोज करने का मुख्य मार्ग यहां 'अनुभववाद' पर आधारित है। किन्तु यह सिद्ध करना कठिन नहीं है कि अनुभव-वाद भी इस समस्या को पूर्ण रूप से हल नहीं कर सकता है। हमें लगभग 100 तत्व ज्ञात हैं। और ये सब तत्व मत्वाय बनाते हैं। पर यदि यह मान लिया जाये कि एक धातु अथवा मत्वाय के आवश्यक गुणों—उसकी दृढ़ता, प्रत्यास्थता लचक, वैद्युत् संवाहकता (electrical conducting) आदि—के लिखने में एक पृष्ठ लगता है तो कुछ तत्वों के गुणों के वर्णन के लिये 100 पृष्ठ चाहिये। दो तत्वों से बने मत्वायों के गुणों को लिखने के लिये दस हजार पृष्ठ आवश्यक हैं। तीन तत्वों से बने कुल मत्वायों के गुणों को लिखने के लिये दस लाख पृष्ठ और चाहिये। यह आसानी से देखा जा सकता है कि तीन तत्वों की प्रणाली के मत्वायों का अनुसन्धान और सुव्यवस्थित वर्णन एक चरमसीमा की सम्भावना है। किन्तु यह ज्ञात है कि व्यवहार में चार अंगों से निर्मित मत्वाय भी प्रयोग किये जाते हैं और इससे भी अधिक अंगों के भी, तथा इन मत्वायों ने महत्वपूर्ण समस्यायें हल की हैं।"

"क्या सदैव ऐसा ही बना रहेगा ? मैं नहीं सोचता हूँ। इस प्रकार के बहु-अंगीय मत्वाय, हो सकता है, इत्तफाकिया मिल गये हों, किन्तु अधिक सम्भव यह है कि वे प्रतिभा-सम्पन्न वैज्ञानिकों की भान्तः प्रज्ञ (अन्तर्ज्ञान सम्बन्धी) घ्राण-शक्ति (Intuitional Scenting) द्वारा प्राप्त हुए हों, जो दूसरे नये अधिक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ तैयार करने की क्षमता रखने वाले दक्ष रसोइयों के समान कार्य करते हैं। यदि अन्तर्ज्ञान (Intuition) है तो इसका अर्थ है कि नियमितता भी है। विज्ञान का कार्य है कि इन नियमितताओं को उद्घाटित करे, किन्तु इन जटिल समस्याओं के हल का कोई ढंग इस समय नहीं प्राप्त हो सका है, और यह निस्सन्देह भविष्य की समस्याओं में एक है।"

चाहे नव पूर्व-निर्दिष्ट गुणों वाले अर्ध-चालकीय पदार्थों के संश्लेषण की समस्या हो, चाहे धातु को क्षय (Corrosion) से सुरक्षित रखने के लिए नई मार्गों की खोजों की समस्या हो, चाहे तकनीक की सर्वाधुनिक मांगों के सन्तुष्ट करने के लिये किसी मत्वाय को प्राप्त करने की समस्या हो। अनुसन्धान कर्ता अपने हर पग पर इसी से टकराता है कि 'अभी तक कोई परिमाणात्मक सिद्धान्त नहीं प्रतिपादित किया जा सका है जिससे पदार्थों के गुणों को उसके रसायनिक

बनावट तथा भौतिक ढांचे से जोड़ा जा सके । इस समय प्राप्त तथा आगे प्राप्त होने वाले तथ्यो के आधार पर ऐसे परिमाणात्मक सिद्धान्त को दृष्टि न केवल अनुभव-वाद पर आधारित अनुसन्धान के टेढे लम्बे मार्ग को सीधा बनाती है वरन् जो पहले से नापे जाने वाले दायरे के भी पीछे हैं उसे भी प्राप्त करना सम्भव बनाती है । इस समय भी कार्बनिक विश्लेषण रसायन शास्त्रियो को पदार्थों के गुणों की मात्रा नियन्त्रित करने को (dosing) अनुमति देता है । किन्तु पदार्थों की प्रतिक्रियात्मक क्षमता के मूल कारणों के अन्दर घुसना रसायनिक सम्बन्धो की प्रकृति का अधिक परिपूर्ण स्पष्टीकरण है । कुछ पदार्थों के दूसरे पदार्थों पर प्रभाव के रहस्यों की कुन्जी मनुष्य के प्रकृति पर अधिकार को अपरिमित रूप से शक्तिशाली बना देती है । असगतियों रहित, हर प्रकार से परिपूर्ण उत्प्रेरण (Catalysis) का सिद्धान्त भावी रसायण मे बड़ी सम्मानपूर्ण भूमिका अदा करेगा । उत्प्रेरण प्राकृतिक घटना (Phenomenon) रहस्य के गम्भीर धुयें से आच्छादित है और वैज्ञानिक चमत्कार के प्रभामण्डल से घिरी हुई है । वैज्ञानिक रूप से इसे स्पष्ट करना कि कैसे उत्प्रेरक प्रतिक्रिया मे भाग लेने वाले पदार्थों की निष्क्रियता को भग करते हैं और उनमें सक्रियता उदय करते हैं जब कि वे पूरे के पूरे रसायनिक व मात्रिक दृष्टि से प्रतिक्रिया के बाद प्राप्त हो जाते हैं', कठिन है और कभी असम्भव सा भी दिखाई पड़ता है । कुछ महान वैज्ञानिकों के लिये भी यह रहस्यपूर्ण समस्या है । उत्प्रेरकों (Catalytic agents) के लिये भी वही सब गुण बताये गये जो कीमियागरों ने सर्वशक्ति मान 'दार्शनिक प्रस्तर' के लिये गढ़े थे । स्वभावतः विज्ञान में अबोध्य (ज्ञान से परे) बातो द्वारा स्पष्टीकरण उचित एवं सुविधा-जनक नहीं होता है । और यहां रसायन शास्त्रियो व भौतिक शास्त्रियों दोनों ने अपने सामने यह लक्ष्य रखा है कि 'उत्प्रेरको के रहस्य को खोला जाये' । विभिन्न प्रतिक्रियाओं के चलने के दौरान उत्प्रेरकों के काम की मशीनरी को पर्याप्त एवं विश्वस्त रूप से समझा गया और उत्प्रेरण सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त निकाले गये । किन्तु आज दिन तक अनेक बातें, समझी नहो जा सकी हैं ।

तथापि विस्तृत रूप से 'मानवता की सेवा मे अपने हाथ बढ़ाने' मे इस उत्प्रेरण को क्रिया ने रसायन की कम सहायता नहीं की है । उत्प्रेरकों के बिना न हमको सल्फ्यूरिक एसिड (Sulphuric acid) प्राप्त होती न नाइट्रिक एसिड, न अमोनिया, न सश्लेषित रबर, न अन्य अनेक प्रथम महत्व के यौगिक । युद्ध-काल मे कच्चे माल के अभाव से, उत्पन्न कठिन परिस्थितियों में ऐसे अवसर आए हैं जब उप्रेरक ने उपस्थित होकर पूरे-पूरे राष्ट्रों को बचाया है ।

1947 ई. में अखिल सोवियत उत्प्रेरण सम्बन्धी सम्मेलन में भाषण देते हुए अकेडेमीशियन (विज्ञान वेत्ता) एन. दे. जेलेन्स्की ने बताया कि किस प्रकार उत्प्रेरक पदार्थ खोज निकाला था जो हमारे वायुयानों की ईंधन सम्बन्धी भूख की पूर्ति की पूरी गारन्टी करता था। A.N.U.S.S.R. के संवाद दाता एस जे. रोगिन्स्की ने लिखा है "युद्ध कालीन रसायन की सबसे महत्वपूर्ण टेकनालाजी एवं कच्चे माल सम्बन्धी सफलतायें कुछ विरले अपवादों को छोड कर, सब अभिन्न रूप से औद्योगिकीय-उत्प्रेरण की सफलताओं से सम्बन्धित थी। उत्प्रेरक पदार्थ ऐसी जादू की छड़ी प्रगट हुए जिनकी सहायता से लड़ने वाले देशों के रसायन-शास्त्री आयात होने वाली उपजों का स्थान लेने वाले नये कृत्रिम पदार्थ बना कर, सस्ते, प्रचलित कच्चे माल को मूल्यवान पदार्थों में बदल कर...., कच्चे माल की रुकावटों से बच सके। दूसरे महायुद्ध ने यह सिद्ध किया कि औद्योगिक उत्प्रेरण की तरंगमयी, चमत्कार पूर्ण जवानी समाप्त नहीं हुई है। वह अब भी नई सम्भावनाओं का अटूट भण्डार अपने में छिपाये है।"

प्रतिक्रियाओं के तीव्र एवं नियन्त्रित करने के लिये प्रयोग किये जाने वाले पदार्थों की भरती में बडी तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। प्लेटीनम तथा अमेडियम ने सम्पर्कों (उत्प्रेरकों) के संसार में अपनी विशेषाधिकारपूर्ण स्थिति खो दी है। अधिक जनवादी तत्वों—वनेडियम, लोहा, निकिल, क्रोमियम के यौगिक, अल्यु-मिनियम—ने उनका स्थान ले लिया है। पर प्रत्येक निश्चित प्रतिक्रिया के लिये उपयुक्त उसका अपना उत्प्रेरक खोजना पडता है। इसके अतिरिक्त, यहाँ अनु-रूपतायें (analogies) काम नहीं देती हैं, रसायनिक दृष्टि से दृढ़ हो जाति के पदार्थ एक दूसरे का स्थान विशेष प्रकार से विशिष्ट स्पर्श (उत्प्रेरक) की भूमिका अदा करने में नहीं ले सकते हैं। दूसरी ओर, चरम, विभिन्नता रखने वाले यौगिक प्रतिक्रिया के प्रवाह पर अपने उत्प्रेरणात्मक प्रभाव के दृष्टिकोण से निम्न-वर्ग सिद्ध होते है। और यह सामान्यीकरण एवं निष्कर्ष निकालने के मार्ग को कठिन बनाता है। लगभग प्रत्येक तत्व शुद्ध रूप में उत्प्रेरक पदार्थ की भांति काम करता है। किन्तु यह खोज लेना कि किस प्रतिक्रिया के लिये, और किस प्रकार, वह उत्प्रेरण का कार्य करता है, ऐसे ही कठिन है जैसे किसी बड़े नगर में मोटर बस की फर्श में पड़े हुए बटन के मालिक को खोज लेना।

शीघ्र अथवा देर से, इस हमारे मनन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक समस्या के अध्ययन के दौरान पारिभाषिक पद, 'उत्प्रेरण—सिद्धान्त का इलेक्ट्रोनी-फिकेशन' का पैदा होना आवश्यक था और वह पैदा भी हुआ है अपेक्षतः बहुत शीघ्र इसने सूचित किया कि इन समस्याओं के [illegible] निरीक्षण ने मणिभीय जाली, परमाण्विक बीज केन्द्रों एवं इलेक्ट्रोनिक [illegible]

के निरीक्षण का स्तर प्राप्त कर लिया था और यहाँ भौतिक शास्त्रियों ने अधिक सफलता से काम किया। भौतिक शास्त्रियों से रसायन शास्त्रियों के मेल ने रसायन शास्त्रियों की आँखें एक और महत्वपूर्ण दिलचस्प परिस्थिति की ओर खोली।

"उत्प्रेरण के लिये प्रयोग किये जाने वाले ठोस पदार्थों और मिश्रणों में अधिकांश – लौह आक्साइड, वनैडियम, जिंक (जस्ता), तांबा, मैंगनीज, सल्फाइड वोल्फ्राम, मालोबडीनम, अल्युमिनोसिलिकेट—अर्ध-चालक पदार्थ हैं, जिसके बारे में बहुत अर्से तक अधिकांश रसायन शास्त्रियों ने ठीक उसी प्रकार कोई शक भी नहीं किया था जैसे मोलेर के प्रसिद्ध सुखान्त नाटक के नायक को अपनी पूर्ण प्रौढ़ावस्था तक यह सन्देह भी नहीं हो सका था कि वह गद्य में बोल रहा है"— एस जे. रोगिन्स्की ने अपनी और साथियों की कमजोरी प्रगट करते हुए हँसी में कहा था।

"उत्प्रेरण-सिद्धान्त का इलेक्ट्रोनीफिकेशन" पूर्ण गति से चल रहा है। रसायन शास्त्रियों तथा भौतिक शास्त्रियों का मेल वह शक्ति है जिसके सामने कोई भी प्रकृति का रहस्य छिपा नहीं रह सकता है चाहे वह उत्प्रेरण की प्राकृतिक घटना के समान ही बड़ी सूक्ष्मता से कोडीफाई करके प्रकृति द्वारा क्यों न रखा गया हो। उत्प्रेरण की प्राकृतिक घटना पर पूरी तौर से लागू होने वाले कठोर परिमाणात्मक नियमों का उद्घाटन एवं प्रतिपादन पूरे औद्योगिक क्षेत्र में क्रान्ति ले आयेगा, जिसका अर्थ है कि वह समाज के सांस्कृतिक जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित करेगा।

किन्तु पूर्ण असंगतियों रहित उत्प्रेरण के सिद्धान्त से क्या मिलेगा ?

सबसे पहले उसकी सहायता से रसायन शास्त्री ऐसे उत्प्रेरक चुन सकेंगे, जो वर्तमान उत्पादन की ज्ञात प्रतिक्रियाओं को सर्वाधिक सुविधा पूर्ण प्रवाह प्रदान करेंगे। किन्तु यदि इस समय, मान लीजिये, सैकड़ों और हजारों वायुमंडलीय दबावों, सैकड़ों डिग्री के तापमानों का आश्रय क्रिया को आवश्यक दिशा में चलाने और स्वीकार्य उत्पादन को सुरक्षित रखने के लिये, लेना पड़ता है तो तब वही प्रतिक्रियायें सर्वाधिक श्रेष्ठता के साथ साधारण परिस्थितियों में चलेंगी बगैर महगे साजो-सामान के और बगैर विशाल मात्रा में ऊर्जा व्यय कराये हुए।

साधारणतः, आखिरकार, हम वह करने में सफल होते हैं जिसे करने में प्रकृति आज से बहुत पहले सफल हो चुकी है। जैसा सब जानते हैं, हमारे शरीर में अतिरिक्त ऊंचे दबाव नहीं होते हैं और नियमतः 36·6° सेंटीग्रेड से ऊंचे तापमान भी नहीं चढ़ते हैं, और प्रतिक्रियायें अत्यन्त पेचीदगी और तीव्रता से

चलती रहती हैं। यह केवल इसलिये होता है कि महान रसायन-शास्त्री प्रकृति ने अनुकूल उत्प्रेरक चुन रक्खे हैं। हम उन्हें फरमेंट्स (ferments) कहते हैं।

किन्तु मुख्य यह है कि सुलभ रसायनिक रूपान्तरणों का वृत्त निरन्तर अपरिमित रूप के बढ़ता जा रहा है। ऐसे पदार्थों की मांगें आ रही हैं, जिनके बारे में वर्तमान नहीं जानता है कि कैसे उनको प्राप्त किया जावे। वह समय आवेगा जब पदार्थों पर रसायन का पूर्ण राज्य होगा। मनुष्य 'व्यर्थ पदार्थ' (रद्दी माल) का नाम ही भूल जायेंगे। उसी प्रकार जैसे प्रकृति मे नाइट्रोजन, पानी आदि के चक्र होते हैं, 'दूसरी प्रकृति' में पदार्थों के चक्र होंगे, जो निरन्तर परिशोधित एवं परिवर्तित होते रहेंगे और कभी फेंके न जायेंगे। मानव की हर प्रकार के पदार्थों के उद्गम सुलभ होंगे। उनके समक्ष महासागर अपने धनों का दरवाजा खोल देंगे। विशेष चुने हुये समूहों में काम करने वाले अथवा विशिष्ट क्रियायें सम्पन्न करने वाले उत्प्रेरकों की सहायता से रसायन शास्त्री सामरीय जल से कुल उसमे उपस्थित तत्व और उनके यौगिक निकालना आरम्भ कर देंगे।

यह भी सम्भव है कि इसकी आवश्यकता न पड़े। पदार्थों की रचना के सिद्धान्त पर पूर्ण अधिकार रखते हुए, विभिन्न प्रकार के रसायनिक बन्धनों के आचरण के सम्बन्ध में कठोर परिमाणात्मक सिद्धान्त हस्तगत करते हुए, उत्प्रेरण के नियमों का उपयोग करते हुए, और बीजकेन्द्रीय बम्बार्डमेंट की महाविध्वंस शक्ति को अपनी सहायता में लगाते हुये, मानव रसायनिक यौगिकों और तत्वों का भी निर्माण करेगा। रसायनिक-भौतिक शास्त्री और भौतिक-रसायण शास्त्री अपने विश्वस्त हाथों से पदार्थ बनायेंगे, जिनको पृथ्वी के गह्वर में प्राप्त करना कठिन या असुविधा पूर्ण है।

पर यह भविष्य वाणी करना कठिन है कि विज्ञान की इन पूर्ण रूप से पहले से देखी जाने वाली, एवं वास्तविक सफलताओं के फलस्वरूप कौन से नये पदार्थ प्रगट होंगे। निस्सन्देह, वर्तमान समय में जो संश्लेषण हो चुके है, वही मानव की कल्पनाओं के बहुत आगे निकल चुके हैं।

भविष्यवाणी करना कठिन है, किन्तु यदि जो आज अकल्पनीय है, उसकी उपेक्षा न की जाये तो अकार्बनिक रसायन की कुल आश्चर्य जनक सफलतायें केवल भविष्य की उपलब्धियों का पूर्वातिहास मालूम पड़ती है। हमने प्रकृति की स्वतः स्फूर्त शक्तियों द्वारा पृथ्वी पर एक तत्व--कार्बन और उसके यौगिको के लिए रखी गई विशेषाधिकार युक्त परिस्थितियों का वर्णन किया है। हमें घेरने वाला विश्व अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य के सहित यह प्रदर्शित करता है कि विश्व की केवल एक ईंट जब वह अपने सुवान्छित सम्बन्धित माध्यम को प्राप्त कर लेती

है, कितनी प्रतिभा–सम्पन्न होती है। वह निर्माण करती है बग़ैर थके हुए, निःस्वार्थ अपना कौशल दिखाती है और अनुभव संचित करती है। किन्तु, नि.सन्देह, सौ से अधिक इस प्रकार की विश्व–रचना की ईंटें हैं, उनमें कुछ ऐसी हैं जो अपने ढांचे और बाह्य अभिव्यंजनाओं में कार्बन से निकटता प्रगट करती है। ऐसी कृत्रिम परिस्थितियों के रचे जाने की सैद्धान्तिक सम्भावना के मान लेने में कोई बाधा नहीं पड़ती है जिनमें कार्बन नहीं, किसी अन्य तत्व, कोई अन्य यौगिकों को विशेषाधिकार प्राप्त होंगे। मान लीजिये, सिलिकन, जर्मेनियम, टिन, या अभ्रक–या अल्युमिनियम, बोरान, फ्लोरीन। और तब केवल एक इस विचार से मनुष्य स्तब्ध रह जाता है कि विश्व 'निर्जीव विश्व यानी अकार्बन का विश्व भी सजीव (with life) हो जायेगा', हो सकता है कि मनुष्य इसे पृथ्वी पर न कर सके, बल्कि किन्हीं दूसरे ग्रहों में कर सके। हो सकता है कि इसी मार्ग से आकाशीय पिण्डों का निर्माण होने लगे। अन्त में यह अपवाद नहीं है कि मेंडेलीफ प्रणाली के एक या दूसरे तत्व के बनने के लिये सजीव आवश्यक परिस्थितियां मनुष्य को विश्व के किसी अज्ञात ग्रह में प्रवेश करने के बाद प्राप्त हों। जहां इस पृथ्वी विभिन्न वायुमण्डल व मिट्टी होगी और विभिन्न पौधे व पशु होंगे मनुष्य के साहस की सीमा नहीं है। और अकार्बनिक रसायन साहसिक कार्यों के लिए बड़ी अनुकूल भूमि है।



तत्वों के देश का मानचित्र

इस 'देश' के निवासी आवर्तों (periods) और वर्गों (groups), पंक्तियों (rows) और उपवर्गों (sub groups) की कठोर व्यवस्था के अन्तर्गत रहते हैं। सात आवर्त (Periods) है, दस पंक्तियां है, नौ वर्ग हैं। लैटिन वर्णमाला के अक्षर स्तम्भ तत्वों के प्रतीक (Symbol) है। सोना, चांदी, प्लेटीनम, यूरेनियम, रेडियम, यह है सच्चा 'धनों का द्वीप'!

हमारे सामने दिमित्रि इवानोविच मैडेलीफ की तत्वों की आवर्त सारणी है जो तत्वों के विशाल देश का मानचित्र है।

इसे मानचित्र कहलाने का अधिकार उस विशाल भूमिका से प्राप्त होता है, जो आवर्त-सारणी विज्ञान में आमतौर से और रसायन शास्त्र मे विशेष रूप से अदा करती है। वर्तमान रसायन शास्त्र बगैर इसके सोचा ही नही जा सकता है, क्योंकि तत्वों की आवर्त सारणी पिछले संचित ज्ञान का फल, भविष्य की योजना, काम करने के लिए दैनिक पथ-प्रदर्शिका, और रसायन के विकास के कुल मार्गों का एक मात्र, विश्वस्त, दिशा सूचक कुतुबनुमा है। नहीं, केवल मानचित्र कह देने से उपमा पूरी नही होती है, मानचित्र ठीक-ठीक बताता है कि किधर जाना है, पर इसके अतिरिक्त कुछ और नही बताता है। उदाहरण के लिये देश के रहने वालों के चरित्र के बारे में कुछ नही कहता, कोई भी उपमा आवर्त-सारणी की सभी गहराइयों को व्यक्त करने में असमर्थ है। यदि इसकी उपमा हम मानचित्र से देते हैं तो यह बोलता हुआ मानचित्र है। यह मानचित्र होने के साथ साथ दिग्दर्शक और पथ-प्रदर्शक भी है।

मानचित्र से प्रारम्भिक परिचय

जैसे भौगोलिक मानचित्र में हम अधिकांश प्रथम-अन्वेषकों के नाम पढते हैं ठीक उसी प्रकार आवर्त सारणी में भी तत्वों के नाम अमर हैं, जिनकी खोजों के बगैर आधुनिक विज्ञान सोचा ही नहीं जा सकता है। ये हैं प्येरे तथा मरियम क्यूरी, अल्बर्ट आयन्स्टाइन, एनरिको फेर्मी, तथा दिमित्र मेडेलीफ। अगुआई करने वाले वैज्ञानिकों की इस पंक्ति में इसी महान् वैज्ञानिक के नाम को विशेष सम्मान प्राप्त है। ■ केवल 101 तत्व उसके नाम से जुड़ा है, बल्कि पूरी आवर्त-सारणी भी जिसका वह सृष्टि कर्त्ता है, उसके नाम में जुड़ी है। हम इस

महान व्यक्ति के इसलिये भी आभारी हैं कि तत्वों के देश में हमारी यात्रा अन्धकार पूर्ण न होगी। और हो सकता है कि यह पूर्ण रूप से हो कि आवर्त-सारणी कभी हमें धोखा न दे क्योंकि वह दृढ़ नीव पर खड़ी है। उसकी नीव में मेंडेलीफ द्वारा उद्घाटित आवर्त-नियम (Periodic law) स्थापित है।

किन्तु आवर्त-नियम और आवर्त सारणी के मध्य क्या भेद है? वही जो एक ओर, अपने कुल उभारों, वनस्पति जगत् और जीव जगत के साथ पृथ्वी के गोले और दूसरी ओर इन सबकी ग्लोब या मान चित्रावली (एटलस) या मान-चित्र पर छाप के बीच मे है। यह स्पष्ट है कि ग्लोब पृथ्वी के गोले का बहुत निकटतम माडेल होता है।

तत्वों की आवर्त-सारणी भी इसी प्रकार है। वह आवर्त-नियम के सार को कमोवेश सही रूप से प्रतिबिम्बित करती है। आवर्त सारणी की प्रणाली में परिवर्तन हो सकते हैं। तत्व पंखे की भांति और स्पाइरलों की तरह अपने वृत्तो मे अथवा "तरंगों" मे स्थित हो सकते हैं। आवर्त प्रणाली के अनेक रूपान्तर सोचे जा सकते हैं, किन्तु उसके आधार, आवर्त नियम को नहीं बदला जा सकता।

इस प्रकार हमारे सामने तत्वों की आवर्त सारणी है। प्रत्येक रसायन-शास्त्री तत्वो के देश मे, उसके मानचित्र को देखते हुए विश्वास के साथ कदम बढ़ाता है। सारणी का कुल बाया और कुल नीचे का भाग धातुओं से भरा है। और इस आवर्त सारणी के बायें नीचे कोने में फ्रांशियम स्थित है जो सर्वाधिक धात्वीय चरित्र रखता है और सर्वाधिक सक्रिय धातु है। ऊपरी कोने मे अपने पूर्णाधिकार से फ्लोरीन स्थित है, जो अधातुओं का सम्राट है। और अधातुओं का साम्राज्य आवर्त सारणी के दाहिने ऊपरी भाग पर स्थित है। यह तुरन्त प्रगट हो जाता है कि धातु अधातुओं की अपेक्षा कहीं अधिक संख्या में है। तत्वों की सारणी मे ऐसे भी तत्व हैं जो धातु एवं अधातु दोनों के गुण प्रकट करते हैं। वे सारणी के मध्य में स्थित है।

वर्गों (Groups) का अंक विशेष अर्थ पूर्ण है : वह प्रत्येक वर्ग (Group) के लिये उच्चतम सम्भव संयोजकता (valency) व्यक्त करता है। सबसे हल्के, निम्न विशिष्ट गुरुत्व रखने वाले धातु लिथियम, सोडियम और उनके बिल्कुल निकटवर्ती पड़ोसी हैं। सबसे भारी धातु आस्मियम (Osmium) सारणी में बिल्कुल प्रतिकूल दूसरे कोने में स्थित है। सर्वाधिक पारस्परिक समानता प्रगट करने वाले तत्व एक वर्ग और विशेषकर एक ही उपवर्ग में स्थित होते हैं। उदाहरण के लिए आवर्त सारणी के दूसरे वर्ग (Group) के एक उपवर्ग में स्थित क्षारीय मिट्टियों के धातु कैल्शियम, स्ट्रान्शियम, बेरियम तथा रेडियम एक दूसरे

से इतनी समानता रखते हैं कि बगैर किसी विशेष कठिनाई के, आवर्त-सारणी के ज्ञान का उपयोग करते हुए, इनमें से किसी एक के रासायनिक गुणों को भली भांति जान लेने के बाद इस उपवर्ग में स्थित कुल तत्वों के गुणों को बताया जा सकता है।

किन्तु, निश्चय ही, इससे यह अर्थ न लगा लेना चाहिये, कि आवर्त-सारणी के उपयोग करने की क्षमता हमें प्रत्येक तत्व के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता से छुटकारा दे देती है। ऐसा कदापि नहीं है। निस्सन्देह उनमें से प्रत्येक तत्व ऐसे अनेक गुण रखता है जो स्वयं उसका व्यक्तिगत चरित्र व्यक्त करते हैं।

स्कूल का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है कि आवर्त-सारणी की सहायता से हर तत्व के लक्षण बताये जा सकते हैं। किन्तु ऐसा करना सदा आसान नहीं होता है।

तत्व के गुणों के बारे में कैसे बताया जा सकता है, यदि उदाहरण के लिये हाइड्रोजन आवर्त-सारणी में दो स्थानों पर अपना अधिकार प्रगट करती है (उसे क्षारीय धातुओं के वर्ग में भी और हैलोजनों के वर्ग में भी रखा जा सकता है) और इसके विपरीत 14 लैन्थेनायड तत्व एक साथ एक लैन्थेनम के खाने में प्रवेश करते हैं? आठवें वर्ग के रहस्य को आप कैसे स्पष्ट करेंगे? और दूसरी ओर से कौन सा ऐसा जादू है जिससे रसायन शास्त्री यह भविष्य वाणी कर सकते हैं कि जिर्कोनियम को गैफनियम से और नियोबियम को टैन्टेलम (Tantalum) से पृथक करना कठिन होगा।

इन कुल प्रश्नों तथा इसी प्रकार के दूसरे बहुत से प्रश्नों का उत्तर उस समय तक सम्भव नहीं है जब तक यह न स्पष्ट हो जाये कि तत्वों के जगत् की आवर्त सारणी में प्रतिबिम्बित इतनी कठोर व्यवस्था किस पर आधारित है। दूसरे शब्दों में, हमें यह पता लगाना अनिवार्य है। इस प्रश्न का उत्तर देने का हम प्रयत्न करेंगे।

महान् आवर्त-नियम की उत्पत्ति

अनुमान कीजिये कि उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में रसायक-शास्त्री वैज्ञानिक तथ्यों के सागर को अपने सामने पाकर किस प्रकार महसूस कर रहे होंगे। स्वभावत: बने पहले वे चाहते रहे होंगे, कि इन तथ्यों को किसी प्रणाली में सुव्यवस्थित किया जाये। बगैर इन तथ्यों को सुव्यवस्थित किये हुए रसायन-विज्ञान में कार्य करना वैसे ही कठिन रहा होगा जैसे किसी ऐसे विशाल शब्दकोष का उपयोग, जिसमें शब्द वर्ण माला के क्रम से न दिये जाकर केवल अव्यवस्थित रूप से क्रम-विहीन दिये गये हों।

तत्वों के इस प्रकार के मिलते-जुलते ग्रुप बहुत समय से ज्ञात थे। अब समस्या यह थी कि असमान ग्रुपों के मध्य सम्बन्ध का पता लगाया जाये। और यहाँ यही हुआ। पूरे युपों को परिवर्तित करते हुए उनको इस प्रकार जगह देते हुए कि निकट परमाणविक भारों के असमान तत्व एक पंक्ति में स्थापित हो जावें, मेंडेलीफ ने अन्त में यह प्राप्त कर लिया जो वह खोज रहा था, उसको ठीक वही मानचित्र प्राप्त हुआ, जो पुस्तक से संलग्न रंगीन चित्र में देखते हैं।

इससे स्पष्ट हुआ : परमाणविक भारों के बढ़ाव के क्रम में स्थापित तत्वों के गुण एक निश्चित अन्तरों (Intervals) के बाद दोहराते हैं। इन निर्धारित अन्तरों को आवर्त (Period) कहा जाता है।

"तत्वों के गुण अपने परमाणविक भारों के आकारों पर आवर्तिक निर्भरता दिखाते हुए प्रकट होते हैं।" इस प्रकार मेंडेलीफ ने अपने नवोद्‌घाटित नियम की परिभाषा की। आवर्त-नियम के नवोद्‌घाटन का दिन हम 1 मार्च 1869 ई. मानते हैं।

किन्तु यह प्रश्न उठ सकता है : क्या मेंडेलीफ के समय तक किसी के भी ध्यान में यह नहीं आया था कि परमाणविक भार और रासायनिक गुणों के मध्य लगाव होता है ? सत्य यह है कि यह बात पहले भी सोची गई थी। और बहुतों ने सोची थी। दोबेरियनेर ने जर्मनी में, दे शाकूर्त्वा ने फ्रांस में, न्यूलेंस ने इंगलैंड में ...इसे सोचा। इस सिद्धान्त के आधार पर रासायनिक तत्वों को वर्गीकृत करने के लिये किये गये तीन सौ से ऊपर प्रयोग ज्ञात हैं। इनमें लक्ष्य के सर्वाधिक निकट जर्मन वैज्ञानिक लोटार मेयेर पहुंचा था। लगभग मेंडेलीफ के साथ ही साथ उसने भी तत्वों की सारणी का निर्माण किया, जो साधारणतः आवर्त सारणी के समान ही थी। सच यह है कि, उसने कुछ बाद में उसे घोषित करने का निश्चय किया था। किन्तु मेयेर ने अपनी रचना में, आवर्त-नियम के उद्‌घाटन के पूर्व वैज्ञानिकों द्वारा की गई गलतियों को दोहराया था। प्राप्त नियमितता में निहित गम्भीर आवर्त नियम को मेयेर नहीं देख पाया। उसने अपनी तत्वों की सारणी को केवल एक सुविधा पूर्ण पाठ्य-पुस्तक तक ही समझा और उससे आगे निकलने वाले निष्कर्षों को देने का साहस नहीं कर सका। अपर्याप्त स्पष्ट नियमितता के पीछे स्थित आवर्त-नियम को देखने के लिये मेंडेलीफ को असामान्य प्रतिभा पूर्ण बुद्धि की आवश्यकता थी। और केवल उसे देखने के लिये ही नहीं, उसे तुरन्त विज्ञान की सेवा में लगा देने के लिये भी।

यदि हम रसायन की प्राचीन पुस्तकों को देखें तो हमें ज्ञात होगा कि उस समय प्रत्येक वैज्ञानिक तत्वों अपनी बुद्धि के अनुकूल प्रणाली में नियोजित करने का प्रयत्न करता था। कुछ ने तत्वों के कुछ भौतिक गुणों (ऊष्मा संवहकता, विशिष्ट गुरुत्व, दृढ़ता) को अपनी प्रणाली का आधार बनाना उचित समझा। दूसरों ने वैद्युत् रासायनिक प्रयोगों के समय प्राप्त प्रभारों के चिन्हों और उनकी मात्राओं को आधार बनाते हुए तत्वों को एक सीधी रेखा में व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया। और इसी प्रकार अन्य लोग भी अपने-अपने मार्गों का अनुसरण कर रहे थे। संक्षेप में, प्रत्येक ऐसा प्राकृतिक गुण पाने का प्रयत्न कर रहा था, जिसके सहारे चलकर संचित ज्ञान को सुव्यवस्था देना सम्भव हो सके। किन्तु रसायन अनन्त कृत्रिम प्रणालियों की प्रोक्रस्टीज की शय्या (Procustean bed) में पड़ा रहना नहीं पसन्द करती थी, क्योंकि उनमें से एक भी प्रणाली तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों की कुल विविधताओं को पकड़ने में समर्थ न थी।

मेंडेलीफ ने भी अपने सामने, अन्ततः तत्व का एक ऐसा गुण पाने की समस्या रखी, जो बकिया सभी गुणों से सर्वाधिक घनिष्टता से जुड़ा हुआ हो और जिसे तत्वों की प्राकृतिक प्रणाली का आधार बनाया जा सके।

आवर्त-नियम के उद्घाटन के पूर्व अनेक वर्षों तक यह वैज्ञानिक (मेंडेलीफ) इस प्रश्न के हल करने में जुटा रहा और अन्त में इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि रासायनिक तत्वों के गुणों का निर्देशन उनके मास (Mass) उनके परमाणविक भार (Atomic weight) पर निर्भर होता है। किन्तु कैसे ? यह निर्भरता किस नियम के आश्रित है ? अवश्य, उदाहरण के लिये, यह कहना कि गैसों के आयतन और दबाव, एक दूसरे से सम्बन्धित परिमाण हैं, बहुत कम कहना है। यदि हम यह कहें कि वे (ब्वायल-मैरियट के नियम के अनुसार) एक दूसरे से प्रतिलोम सहसम्बन्ध (Inverse Dependence) प्रकट करते हैं तो बिल्कुल दूसरी बात होगी। इसी प्रकार यह पता लगाना महत्वपूर्ण है कि किस नियम के अनुसार रासायनिक गुण परमाणविक भार से जुड़े होते हैं।

मेंडेलीफ ने सर्व प्रथम तत्वों को उनकी रासायनिक समानता के लक्षण के अनुसार वर्गों (ग्रुपों) में स्थापित किया। इस प्रकार उसे 19 वर्ग प्राप्त हुए। इनमें से कुछ वर्ग केवल दो तत्वों से ही बने थे। दूसरे 3, और 4 तत्वों से बनते थे। क्षारीय धातुओं के वर्ग में 5 तत्व थे।

इसके बाद वर्गों को एक दूसरे से मिला कर पंक्तियों में रखा गया और उनमें से प्रत्येक में तत्वों को परमाणविक भारों के बढ़ाव के क्रम में रखा गया। जो चित्र प्राप्त हुआ वह नया नहीं था। रासायनिक गुणों के आधार पर बने

तत्वों के इस प्रकार के मिलते-जुलते ग्रुप बहुत समय से ज्ञात थे। अब समस्या यह थी कि असमान ग्रुपों के मध्य सम्बन्ध का पता लगाया जाये। और यहीं यही हुआ। पूरे ग्रुपों को परवर्तित करते हुए उनको इस प्रकार जगह देते हुए कि निकट परमाणविक भारों के असमान तत्व एक पंक्ति में स्थापित हो जावें, मेंडेलीफ ने अन्त में वह प्राप्त कर लिया जो वह खोज रहा था, उसको ठीक वही मानचित्र प्राप्त हुआ, जो पुस्तक से संलग्न रंगीन चित्र में देखते हैं।

इससे स्पष्ट हुआ : परमाणविक भारों के बढ़ाव के क्रम में स्थापित तत्वों के गुण एक निश्चित अन्तरों (Intervals) के बाद दोहराते हैं। इन निर्धारित अन्तरों को आवर्त (Period) कहा जाता है।

"तत्वों के गुण अपने परमाणविक भारों के आकारों पर आवर्तिक निर्भरता दिखाते हुए प्रकट होते हैं।" इस प्रकार मेंडेलीफ ने अपने नवोद्घाटित नियम की परिभाषा की। आवर्त-नियम के नवोद्घाटन का दिन हम 1 मार्च 1869 ई. मानते हैं।

किन्तु यह प्रश्न उठ सकता है : क्या मेंडेलीफ के समय तक किसी के भी ध्यान में यह नहीं आया था कि परमाणविक भार और रासायनिक गुणों के मध्य लगाव होता है ? सत्य यह है कि यह बात पहले भी सोची गई थी। और बहुतों ने सोची थी। दोबेरियनेर ने जर्मनी में, दे शाकूर्तुआ ने फ्रांस में, न्यूलैंस ने इंगलैंड में ...इसे सोचा। इस सिद्धान्त के आधार पर रासायनिक तत्वों को वर्गीकृत करने के लिये किये गये तीन सौ से ऊपर प्रयोग ज्ञात हैं। इनमें लक्ष्य के सर्वाधिक निकट जर्मन वैज्ञानिक लोटार मेयेर पहुंचा था। लगभग मेंडेलीफ के साथ ही साथ उसने भी तत्वों की सारणी का निर्माण किया, जो साधारणतः आवर्त सारणी के समान ही थी। सच यह है कि, उसने कुछ बाद में उसे घोषित करने का निश्चय किया था। किन्तु मेयेर ने अपनी रचना में, आवर्त-नियम के उद्घाटन के पूर्व वैज्ञानिकों द्वारा की गई गलतियों को दोहराया था। प्राप्त नियमितता में निहित गम्भीर आवर्त नियम को मेयेर नहीं देख पाया। उसने अपनी तत्वों की सारणी को केवल एक सुविधा पूर्ण पाठ्य-पुस्तक तक ही समझा और उससे आगे निकलने वाले निष्कर्षों को देने का साहस नहीं कर सका। अपर्याप्त स्पष्ट नियमितता के पीछे स्थित आवर्त-नियम को देखने के लिये मेंडेलीफ को असामान्य प्रतिभा पूर्ण बुद्धि की आवश्यकता थी। और केवल उसे देखने के लिये ही नहीं, उसे तुरन्त विज्ञान की सेवा में लगा देने के लिये भी।

सारणी मे सत्र बेरीलियम, (Beryllium) को देखिये । ठीक इसी धातु से आवर्त-नियम का प्रथम व्यावहारिक उपयोग सम्बन्धित है, पहली कठिनाई और पहली विजय ।

1869 ई० के पूर्व बेरीलियम को तीन संयोजकताओं (Valency) का तत्व समझा जाता था और ऐसा समझने का आधार भी था । निस्सन्देह वह अपने रासायनिक गुणों से अल्यूमिनियम से बहुत कुछ मिलता जुलता था । अल्यूमिनियम की भांति यह भी सान्द्रित नाइट्रिक एसिड से कोई प्रतिक्रिया नहीं प्रगट करता था किन्तु क्षारों मे घुलते हुए हाइड्रोजन उन्मुक्त करता था । बेरीलियम की हाइड्राक्साइड अल्यूमिनियम की हाइड्राक्साइड, Al $(OH)_3$ की भांति ही ऐम्फोटेरिक (क्षारीय और आम्लिक दोनों गुण प्रकट करने वाली) होती है, और इसी लिए वह भी अल्यूमिनेटों की भांति टिपिकल लवण बेरीलेट आदि बनाती है ।

किन्तु यदि बेरीलियम तीन संयोजकताओं वाला है तो उसका परमाणविक भार 13·5 होना चाहिये, क्योंकि बेरीलियम का तुल्यांक (Equivalent) 4·5 होता है (परमाणविक भार तुल्यांक गुणित संयोजकता होता है) । यहीं कठिनाई प्रारम्भ हुई । इस परमाणविक भार के साथ बेरीलियम आवर्त सारणी में बैठने को राजी नहीं होता था ।

कार्बन और नाईट्रोजन के मध्य उसे स्थापित करने से (उसका परमाणविक भार 13·5 उसे इसी स्थान पर बैठने की आज्ञा देता था) बेरीलियम तुरन्त तत्वों के गुणों के नियमित आवर्तन को भंग कर देता था और उससे आवर्त नियम का खण्डन होता था । किन्तु मेंडेलीफ कुछ और सोच रहा था । वह पूर्णतया विश्वास करता था कि खोजी गई उपरोक्त नियमितता आकस्मिक नहीं हो सकती थी । आवर्त-नियम खोज लिया गया था और परिणामतः, उसकी परिपुष्टि तथ्यों द्वारा होनी आवश्यक है । जहाँ तक बेरीलियम का सम्बन्ध है, मैंडेलीफ को विश्वास था कि इसका परमाणविक भार सही नहीं निकाला गया है ।

रूसी रसायनशास्त्री अफदीव के एक अर्ध-विस्मृत निबन्ध में मेंडेलीफ ने पढ़ा कि ग्लिशियन (बेरीलियम का पहले नाम ग्लीशियम था) का आक्साइड अपने गुणों में मैग्नीशियम आक्साइड से मिलता है ।

इस आधार पर मेंडेलीफ ने बेरीलियम आक्साइड को BeO का फार्मूला (सूत्र) प्रदान किया और बेरीलियम को दूसरे वर्ग (ग्रूप) मे, दो संयोजकतायें रखने वाले क्षारीय मिट्टियों के धातुओं के साथ, स्थापित किया और इसके अनुसार उसका परमाणविक भार सही किया । मेंडेलीफ ने इस प्रकार उसका परमाणविक भार नौ $(4·5 \times 2 = 9)$ प्राप्त किया ।

अनेक वैज्ञानिकों ने इसके विरुद्ध अपना मत प्रकट किया, क्योंकि अनेक बार जाँचे हुए इस परमाणविक भार के अंक (13·5) का परिवर्तन उनको

निराधार एवं मनमानी जान पड़ा। किन्तु कुछ ही वर्ष बीते थे कि मेंडेलीफ का प्रमुख प्रतिद्वन्दी नेलसन अकाट्य प्रमाणों द्वारा इस निर्णय पर पहुंचा कि वास्तव में बेरीलियम का परमाणविक भार 9 ही है। इस प्रकार आवर्त-नियम के आधार पर तत्वों के गुणों को सुनिश्चित करने की रीति का प्रारम्भ हुआ। बेरीलियम के परमाणविक भार का अनुकरण करते हुए मेंडेलीफ ने यूरेनियम, थोरियम, इंडियम, इट्रियम, लैन्थेनम, सीरियम, एरबियम, तथा डाईडीमियम (डाइडीमियम didymium बाद को प्रेजियोडीमियम praseodymium तथा नियोडिमियम Neodymium का मिश्रण सिद्ध हुआ) के परमाणविक भारों को संशोधित करने की ओर लगा। अपनी प्रणाली का निरन्तर सुधार करते हुए मेंडेलीफ ने 1871 ई. में ही आवर्त सारणी को वह ढांचा प्रदान कर दिया था जो वर्तमान आवर्त-सारणी के बिल्कुल सन्निकट था। और सन् 1871 ई. में ही मेंडेलीफ का निबन्ध प्रकाशित हुआ, जिसमें उसने उस समय तक अज्ञात तीन तत्वों के गुण विस्तार पूर्वक वर्णन किये थे। उसने उनको एकासिलीकोन (ekasilicon) (अर्थात् सिलिकन का अनुरूप), एका-बोरान (eka-boron), एका-अल्युमिनियम (eka-allumiuium) का नाम दिया था।

वैज्ञानिक ने लिखा, "मैंने यह इसलिये किया है कि जब भी मेरे द्वारा पूर्व-घोषित इन तत्वों में से एक का भी पता लगेगा तब उन स्थापनाओं की सत्यता के बारे में, जो मेरे द्वारा प्रतिपादित प्रणाली का आधार है मुझे स्वयं अन्तिम रूप से परिपुष्टि प्राप्त हो सकेगी और दूसरे वैज्ञानिकों को भी विश्वास दिलाने में सहायता मिलेगी।"

जब एल मेयर ने इस निबन्ध को पढ़ा वह चिल्ला पड़ा "दास इस्त प्रचोप जू विवेल (यह तो अत्यधिक है!) आवर्तिक नियमितता पर्याप्त स्पष्ट एवं प्रमाणित नहीं है जिससे मैं इस प्रकार की किसी बात का समर्थन करने का निश्चय ले सकूं।" किन्तु समय ने सिद्ध किया कि रूसी वैज्ञानिक सही था। चार वर्ष बीते। और सन् 1875 ई० में फ्रान्स से समाचार मिला। युवा वर्ण-क्रम वैज्ञानिक (Spectrocopist) लेकांक दे बुआबोद्रान ने एक नये तत्व की खोज की जिसमें सारे संसार ने मेंडेलीफ के पूर्व घोषित तत्व 'एकाअल्युमिनियम' को तुरन्त पहचान लिया। इस नये तत्व को गैलियम की संज्ञा दी गई। गेलियम (galium) के कुल गुण एका-एल्युमिनियम से बिल्कुल ठीक-ठीक मिलते थे। पर नहीं, सब नहीं। गैलियम का विशिष्ट गुरुत्व 4.7 था जब कि एकाएल्युमिनियम का पूर्व घोषित विशिष्ट गुरुत्व 5.9 था। पर मेंडेलीफ अपनी बात पर दृढ़ रहा। उसने प्रयोग दोहराने की मांग की। पूरा वैज्ञानिक संसार इस अद्भुत द्वन्द को उत्सुकता से देख रहा था। दे-बुआबोद्रान ने प्रयोग दोहराया

और घोषित किया कि रूसी वैज्ञानिक ने, जिसने गैलियम को आंखों से देखा भी नहीं था सही कहा था।

शेष भविष्य वाणी भी सत्य हुई। 1879 ई. में स्वीडेन के वैज्ञानिक एल. नेल्सन ने स्कैन्डियम (एकाबोरान) खोज निकाला। और 1886 ई. में जर्मन रसायन-शास्त्री क्लीमेन्स विंक्लेयर ने एका-सिलिकन, जर्मेनियम की खोज की। मेडेलीफ के सहकर्मी प्रसिद्ध रूसी रसायन शास्त्री वे. विश्चेन्को ने इस समाचार के पीटर्सबर्ग पहुंचने का वर्णन निम्न प्रकार किया है:

"एक सुबह दे. इ. (मेंडेलीफ) हमारे पास मुत्लेरोव की प्रयोग शाला में 'बेरिश्ते'[1] पत्रिका की एक नई प्रति लिये हुए, उत्तेजित एवं प्रसन्न मुद्रा मे आये और कहने लगे कि क्लीमेंट विंक्लेयर ने नया तत्व जर्मेनियम खोजा है और उसे पांचवें वर्ग में स्थापित कर रहा है क्योंकि वह सल्फो-लवण (Sulpho-salts) बनाता है। पर यहां वह गलती कर रहा है, जर्मेनियम का स्थान पांचवें ग्रुप में यह एकासिलिकन है। "मैं इसी समय विंक्लेयर को लिखने जा रहा हूं"। और विंक्लेयर ने अपनी गलती स्वीकार की। सारे संसार मे मेडेलीफ की चर्चा होने लगी। अब किसी को आवर्त-नियम की सत्यता पर सन्देह करने का साहस नहीं रह गया और मेडेलीफ ने उसे अन्तिम रूप प्रदान किया।

"अमिश्रित पदार्थों के गुण और तत्वों के यौगिकों के भी गुण और बनावटें तत्वों के परमाणविक भारों पर आवर्तिक निर्भरता प्रगट करते हैं।"

किन्तु प्रकृति कभी अपने नियमों को मनुष्य के सामने शुद्ध रूप मे नहीं प्रगट करती है। दिखाई पड़ने वाली असंगतियों से पथ-भ्रष्ट हो जाने से बचने के लिये प्रखर बौद्धिक स्पष्टता, एवं विशाल विश्वास की आवश्यकता होती है। मुख्य को गौण से पृथक करने, एवं नई खोजों की धारा में, प्रत्येक खोज पिछले किये हुए को पूर्णतः काटती होती है, बह जाने से बचने की क्षमता आवश्यक है। जब आवर्त–नियम पर महान परीक्षाओं का पहाड़ टूट पड़ा तो दिमित्री इवानोविच मेडेलीफ को भी ठीक इन्हीं गुणों का सहारा लेना पड़ा।

आवर्त-नियम की जलमग्न चट्टानें

प्रारम्भ इस प्रकार हुआ कि सन् 1894 ई० मे अंग्रेज वैज्ञानिक रेले और रैमजे ने एक नया तत्व खोजा जिसके गुण इतने असाधारण थे कि वैज्ञानिक प्रारम्भ में उसे मान्यता देने से इन्कार करते थे। यह तत्व गैस था जो किसी भी प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रिया की क्षमता नहीं प्रगट करता था। नये तत्व को

1 जर्मन रसायन सोसाइटी की पत्रिका

आर्गन (निष्क्रिय, आलसी) नाम दिया गया। आवर्त-नियम के विरोधी (और उनकी संख्या बहुत अधिक थी जिनमें आसवाल्ड जैसे प्रख्यात वैज्ञानिक भी थे) फिर सामने आने के लिए उत्साहित हुए। और निराधार नहीं। आवर्त नियम, ऐसा प्रतीत होता था, कि इन असाधारण गुणों वाले तत्वों को पहले से देखने की क्षमता नहीं रखता था। आर्गन को कोई स्थान आवर्त सारणी में नहीं प्राप्त हो रहा था। स्वयं मेंडेलीफ आर्गन को नाइट्रोजन N_3 का रूपान्तरण (modification) समझने की ओर झुक रहा था (वैसे ही जैसे आक्सीजन का माडीफिकेशन O_3 ओजोन है) किन्तु स्थिति और भी अधिक बन गई जब एक ही वर्ष में दूसरी निष्क्रिय गैस हीलियम भी खोज ली गई।

अब इस बात में सन्देह करना कठिन हो गया कि इस प्रकार के असाधारण तत्व प्रकृति में सचमुच विद्यमान हैं। उनको स्वीकार करना आवश्यक था। पर साथ में जिस सीमा तक तथ्य उसे काट रहे थे वहाँ तक आवर्त-सारणी को ठुकराना भी आवश्यक हो गया।

. पर क्या यही बात थी ? क्या सच-मुच आवर्त-नियम निष्क्रिय गैसों के अस्तित्व को स्वीकार करने के लिये कोई आधार नहीं प्रदान करता था ?

रैले एवं रैमजे की खोज के बहुत पूर्व दो व्यक्ति इस बात पर दृढ़ता से विश्वास करते थे कि आवर्त-सारणी में एक शून्य वर्ग भी होना चाहिये। ये दो व्यक्ति थे : श्लीसेलबर्ग किले के अलेक्सेई फौजी बन्दी कक्ष के दो जन-स्वातन्त्र्य संग्राम के क्रान्तिकारी बन्दी—मोरोजोव और लुकाशेविच। सन् 1883 ई में ही कार्बनिक यौगिकों की बनावट एवं गुणों में आवर्तता (Periodicity) निरीक्षण करते हुए उन्होंने मेंडेलीफ की प्रणाली से अनुरूपता रखते हुए, हाइड्रो-कार्बन मूलकों (Radical) की आवर्त-प्रणाली निर्मित की थी और इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि ठीक जिस प्रकार हाइड्रो-कार्बन मूलकों की प्रत्येक श्रेणी तटस्थ प्रकार के अणु मीथेन-ईथेन, प्रोपेन आदि में समाप्त होती है उसी प्रकार मेंडेलीफ के प्रत्येक आवर्त (Period) को निष्क्रिय तत्वों में समाप्त होना चाहिये। वास्तव में यह अनुमान बड़ा प्रतिभा पूर्ण था किन्तु संसार इसको कई वर्ष बीत जाने के बाद केवल तब पहचान सका जब निष्क्रिय गैसों की समस्या का समाधान हुआ। और इस समस्या का समाधान भी रैमजे ने आवर्त-नियम की सहायता से एवं उसी के आधार पर किया।

रैमजे ने, जिसकी खोज ने आवर्त-नियम पर विश्वास डिगा दिया था, स्वयं कभी उसकी सत्यता पर सन्देह नहीं किया। यही नहीं "शिक्षक मेंडेलीफ की भाँति ही" रैमजे ने भी घोषित किया। "हीलियम और आर्गन के मध्य एक और तत्व है जिसका परमाणविक भार 20 है और जो ऐसे ही निष्क्रिय है जैसे ये दो

गैसें। नये तत्व का अपना विशेषता सूचक स्पैक्ट्रम होगा और वह आर्गन की अपेक्षा अधिक आसानी से जमेगा। दो अन्य अनुरूप गैसीय तत्वों के अस्तित्व के बारे में भी पूर्व घोषणा की जा सकती है जिनके परमाण्विक भार क्रमशः 82, 129 होंगे।"

और जब ये पूर्व-घोषित तत्व शीघ्र ही खोज लिये गये (क्रिप्टन, नियन, एवं जेनान) तब तुरन्त यह स्पष्ट हो गया कि उनके लिये आवर्त प्रणाली में स्थान है। रैमजे ने मेंडेलीफ को सुझाव दिया कि वह इन नये खोजे हुए तत्वों का एक अलग वर्ग प्रणाली में स्थापित करे और मेंडेलीफ ने तुरन्त इसे स्वीकार कर लिया, क्योंकि यह आवर्त-नियम में प्रतिवाद नहीं उपस्थित करता था वरन् इसके विपरीत उसकी तर्क संगत परिपूर्ति करता था और नियम की सत्यता की परिपुष्टि करता था।

इस प्रकार निष्क्रिय गैसों की खोज आवर्त नियम में दरार डालने के बजाय उसकी सत्यता का एक प्रमुख प्रमाण बन गई। नये शून्य वर्ग के स्थापित हो जाने से आवर्त-सारणी में और भी अधिक सुडौलपन आ गया।

ऐसा प्रतीत होने लगा कि आवर्त-नियम के डराने वाले दिन सदा के लिये समाप्त हो गये हैं। केवल नये तत्वों की खोजों की प्रतीक्षा ही करनी शेष थी, जिनका प्रगठन, शायद ही आवर्त-प्रणाली के ढांचे और आवर्त-नियम के सार पर कोई प्रभाव डाल सके।

और सचमुच नई खोजों के लिये अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी, पर समस्या बड़ी अद्भुत थी। अभ्यागतों ने आवर्त-सारणी के रिक्त स्थानों में, जो काफी संख्या में थे, बैठने की स्वीकृति नहीं दी और साग्रह उन स्थानों की मांग कर रहे थे जो पहले से दूसरे तत्वों द्वारा भर चुके थे, क्योंकि नये खोजे गये तत्व जल की बूंदों की भांति अपने गुणों में एक दूसरे से और पूर्व ज्ञात विरल मिट्टी के धातु कहलाने वाले लैन्थेनम, इट्रियम, सीरयम, एरबियम से मिलते थे। विरल मिट्टियों की समस्या से मेंडलीफ 1869 ई. में मुठभेड़ ले चुका था, जब उसने आवर्त प्रणाली के प्रथम स्वरूप की रचना की थी। उस समय रसायन शास्त्री इस बात में सन्देह नहीं करते थे कि लैन्थेनम, सीरियम, इट्रियम, एरबियम तथा डाइडोमियम दो संयोजकताओं वाले धातु हैं। इसके अतिरिक्त उनके परमाण्विक भार अत्यन्त नीचे थे। मेंडेलीफ ने आवर्त-नियम पर दृढ़ विश्वास रखते हुए इट्रियम, लैन्थेनम, और एरबियम के तीन संयोजकताओं वाले होने का सुझाव प्रस्तुत किया और उनको तीसरे वर्ग में स्थापित किया और इसी के अनुसार उनके परमाण्विक भारों को परिवर्तित किया। सीरियम,को चौथे वर्ग में स्थापित किया क्योंकि कुछ यौगिकों में वह 4+ (चार) संयोजकतायें प्रकट करता है।

हाइडोमियम को मेंडेलीफ ने पांचवें वर्ग में स्थापित किया और इसकी वैधता पर विश्वास न करते हुए उसने साथ में प्रश्न-सूचक चिन्ह भी बना दिया। इस प्रकार इस प्रणाली मे उपरोक्त पांच तत्वों को स्थान दिया गया। कुछ समय तक इस पर किसी ने विशेष आपूर्ति नहीं की।

किन्तु बाद को, नई खोजी जाने वाली विरल मिट्टियों की संख्या भयकर रूप से बढ़ने लगी। विभिन्न देशों से रोज नये नये विरल मिट्टियो के तत्वों के उद्घाटन के समाचार मिलने लगे। इनको आवर्त प्रणाली में स्थापित करने का कोई प्रश्न ही नहो हो सकता था। 1879 से 1906 तक के वर्षों में वे सौ (100) के लगभग प्रकट हुए! सच यह है कि बाद में यह प्रगट हुआ कि इनमें से अधिकांश खोजें झूठी थीं, पर, फिर भी वैज्ञानिकों ने 1906 ई. तक यह दृढ़ता से प्रतिपादित कर दिया कि 13 विरल मिट्टियों के तत्व वास्तव में हैं। यह बार बार किये गये, सूक्ष्म, निष्पक्ष अनुसन्धानों द्वारा पुष्ट हुआ। किन्तु कोई विश्वास के साथ नही कह सकता था कि इन सजातीय तत्वो की संख्या क्या हो सकती है और आवर्त सारणी में उनके स्थान किस प्रकार प्राप्त किये जायें। चूंकि आवर्त-नियम इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता था इसलिये पुन. उसकी सत्यता पर सन्देह प्रगट होने लगे।

मेंडेलीफ ने इन पहेलियों का हल अपने मित्र जेक वैज्ञानिक, बोगुस्लाव ब्राउनेर से प्राप्त करने की आशा की, जो इस समस्या पर बहुत पहले से कार्य कर रहा था।

ब्राउनेर उन वैज्ञानिको में से एक था जो प्रारम्भ से अंत तक आवर्त-नियम पर विश्वास करते रहे। उसने अपना पूरा जीवन विरल मिट्टियों की रसायन के लिये समर्पित कर दिया और इसलिये इसमें कोई आश्चर्य न होना चाहिये कि ठीक वही विरल-मिट्टी के तत्वों के रहस्य के हल के सर्वाधिक निकट पहुंच सका, जब उसने उन्हें बिल्कुल पृथक वर्ग में रखने और आवर्त-सारणी के एक बड़े खाने मे स्थापित करने का सुझाव दिया। किन्तु यह केवल अनुमान था जो किसी भी तथ्य से पुष्ट नही होता था, संकट बना रहा। और उस समय और भी गम्भीर हो गया जब आवर्त-नियम से न हल होने वाली समस्याओं की सूची में रेडियो-सक्रिय तत्वो की पहेली और जुड़ गई।

एक समय था, जब रेडियो सक्रियता की दुरूह प्राकृतिक घटना, उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त और बीसवीं शती के प्रारम्भ में प्रमुख सफलतायें प्राप्त करने वाले रसायन और भौतिक शास्त्रों के स्वच्छ नभ मण्डल को आच्छादित करने वाली एक साधारण घटना समझी जाती थी। किन्तु समय बीता और यह घटना विशाल घनघोर घटा के रूप मे परिणत हो गई, जिसने कुल नभ मंडल को ढक

लिया। और केवल तब यह स्पष्ट होने लगा कि मानव ने प्रकृति के सब से गूढ़ रहस्यों में से एक को छुआ है, ऐसी पहेली जिससे पदार्थ की रचना के बारे में पहले की कुल धारणायें भग होती हैं और जो साथ ही साथ वास्तविक वैज्ञानिक ज्ञान को आधार प्रदान करती है ! परन्तु यह नई पहेली क्या है ?

रेडियो सक्रियता की प्राकृतिक घटना का उद्घाटन सन् 1896 ई. में उस समय हुआ जब यह पता लगा कि यूरेनियम, जो उस समय तक ज्ञात तत्वों में सबसे भारी था, विशेष प्रकार की अदृश्य किरणों के उन्मुक्त करने की आश्चर्य-जनक क्षमता रखता है। कुछ समय बाद यह प्रगट हुआ कि ठीक यही गुण नये उद्घाटित तत्व ऐक्टीनियम में तथा बहुत पहले से ज्ञात तत्व थोरियम में भी है। इसके पश्चात 1898 ई० में यूरेनियम खनिज से दो तत्व निकाले गये जिनकी रेडियो-सक्रियता यूरेनियम से कोई गुना अधिक थी। ये थे रेडियम तथा पोलो-नियम। पर इसके बाद रेडियो सक्रिय तत्वों की संख्या इतनी बढ़ गई कि उनमें से कुछ को सीधे लैटिन वर्णमाला के अक्षरों को उस तत्व के नाम के साथ जोड़कर जिनसे वे प्राप्त किए जाते थे, सम्बोधित करने लगे। उदाहरण के लिए, रेडियम A, थोरियम B, यूरेनियम Z, ऐक्टीनियम X आदि

नये खोजे जाने वाले रेडियो सक्रिय तत्वों की संख्या बढ़ती गई। और विरल मिट्टियों के तत्वों की भांति ही उनका स्थान भी आवर्त-सारणी में नहीं मिलता था। और तब यह भी प्रगट हुआ कि उनमें से अधिकांश अपने अपने रसायनिक गुणों में पूर्व ज्ञात तत्वों से बिल्कुल सादृश्यता रखते थे। इस प्रकार रेडियो सक्रिय, यूरेनियम एक्स ग्यारह (UXI), आयोनियम, रेडियो थोरियम, यूरेनइवाई (UY) तथा रेडियो ऐक्टीनियम में वही गुण थे जो थोरियम में थे। परिणामतः, उन सबको आवर्त-सारणी के एक खाने में बैठने का पूर्ण अधिकार था, मीजो-थोरियम-एक (MS TH 1), थोरियम-एक्स (THX) तथा ऐक्टीनियम एक्स (ACX) ने रेडियम के आवास-गृह पर अपना दावा प्रगट किया। और यदि विरल मिट्टी के तत्वों को एक दूसरे से पृथक करने में किसी प्रकार सफलता मिल गई थी तो रासायनिक विधियों से इनका, उदाहरण के लिये थोरियम एक्स का रेडियम से या थोरियम का आयोनियम से पृथक करना असम्भव था।

आवर्त-सारणी के खानों में भीड़ लगने लगी। किन्तु यदि यह मान भी लिया जावे कि उनको एक खाने में रखना सम्भव है, तो परमाणविक भारों से किस प्रकार निपटा जावे ? तब मालूम पड़ता है हमें इस तथ्य से समझौता करना पड़ेगा कि कुछ विभिन्न परमाणविक भार रखने वाले तत्व एक खाने में पड़ें, समान परमाणविक भार रखने वाले तत्व विभिन्न खानों में पड़ें। क्या यह आवर्त नियम का उल्लघन नहीं है ?

परमाणविक भार एवं आवर्त प्रणाली में अपनी स्थिति के मध्य विषमता रखने वाले ऐसे तत्वों जैसे पोटेशियम K और आर्गन Ar, कोबाल्ट Co और निकिल Ni, आयोडीन J और टेल्यूरियम Te को स्मरण करना यहां युक्ति संगत होगा। ध्यान दीजिए : आवर्त प्रणाली में अधिक भारी Ar, Co तथा Te हल्के तत्वों K, Ni, तथा J के पहले आते हैं जब कि समझा जावेगा कि इसका उल्टा होना चाहिए था। और यदि पहले यह सोचा जा सकता था कि इन तत्वों के परमाणविक भार विश्वस्त रूप से नहीं निश्चित किये गये हैं, तो अब ऐसा सोचने की कोई गुंजाइश नहीं है। 1906 ई. में बहुसंख्यक अनुसंधानों द्वारा यह ठोस रूप से प्रतिपादित हो गया कि K हल्का होता है Ar से, Ni हल्का होता है Co से, तथा J हल्का होता है Te से।

इस प्रकार पहले की भांति फिर यह प्रश्न खड़ा हुआ : क्या आवर्त—नियम विश्वसनीय है और यदि किसी प्रकार है तो तत्वों के गुणों के आवर्तिक परिवर्तन का आधार क्या है ?

एक बात स्पष्ट हो गई थी कि परमाणविक भार को अब तत्वों की सच्ची प्राकृतिक प्रणाली का दृढ़ वैज्ञानिक आधार नहीं बनाया जा सकता था। और ठीक उसी समय जब यह प्रगट हुआ कि आवर्त नियम न हल हो सकने वाली असंगतियों से जुड़ा हुआ है, जाज्वल्यमान नई खोजों की श्रृंखला सामने आई, जिसने न केवल आवर्त-नियम की सत्यता की परिपुष्टि की बल्कि अपरिमेय परिणाम में उसे बल भी प्रदान किया—आवर्तता यानी रासायनिक तत्वों के गुणों के दोहराने की प्रकृति के कारण को खोल दिया। किन्तु यह न शीघ्र हुआ न अकस्मात हुआ।

महान् खोजों की श्रृंखला

1910 ई० में अंग्रेज वैज्ञानिक सॉडी इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि रेडियो सक्रिय तत्व जो एक दूसरे से भौतिक गुणों में विभिन्न होते हैं किन्तु रासायनिक गुणों में बिलकुल एक समान होते हैं, एक ही तत्व के विभिन्न रूप होते हैं। सॉडी ने उन्हें आइसोटोप की संज्ञा दी ("आइसो"—"समान" "टोपोस"—स्थान)। और जब यह प्रगट हुआ कि आइसोटोप केवल रेडियो सक्रिय तत्वों में ही नहीं होते हैं वरन् साधारणतः आवर्त—प्रणाली के अधिकांश तत्वों का यह चरित्र है तो बहुत सी बातें स्वयं अपने स्थान पर दुरुस्त दिखाई पड़ने लगी।

सबसे पहले यह स्पष्ट हो गया कि क्यों तत्वों का परमाणविक भार, नियमतः पूर्णांक न होकर भिन्नात्मक (fractional) संख्या होता है। बात यह

है कि उस दशा में तत्व का परमाणविक भार उसे बनाने वाले (उसमें निहित) आइसोटोपों के परमाणविक भारों का औसत अंक होता है, जिसका अर्थ है कि, यह पूर्णतः सम्भव है कि कुछ अवसरों पर, हो सकता है, प्रणाली में आगे चलने वाले तत्व की अपेक्षा पीछे चलने वाले तत्व का औसत परमाणविक भार अधिक हो। आयोडीन और टेल्यूरियम, पोटेशियम और आर्गन, कोबाल्ट और निकिल के परमाणविक भारों के बारे में भी यही बात लागू होती है।

"पीछे चलने वाला" और "आगे चलने वाला"। और अब हमें इन शब्दों के प्रयोग करने का वास्तव में क्या अधिकार है अभी-अभी हमने पढ़ा है कि परमाणविक भार (और आप जानते हैं कि हमने तत्वों को उनके परमाणविक भारों के बढ़ाव के क्रम में प्रणाली में स्थापित किया था, स्मरण कीजिये !) यह निश्चय करने के लिये कि कौन सा तत्व पीछे आने वाला है और कौन सा आगे, पर्याप्त रूप से अविश्वसनीय कसौटी हो गया है।

तो फिर ऐसी दशा में आवर्त प्रणाली के उपयोग करने के समय हमारा आधार क्या हो सकता है ? तत्व की संख्या का क्रम-क्या यह आधार नहीं हो सकता है। प्रकट हुआ कि ठीक तत्व का सांख्यिक क्रम ही आधार है।

यहाँ अब हम वास्तविकता में उस जगह पहुँचे जहाँ भौतिक शास्त्र ने तत्वों के देश के सर्वाधिक गूढ़ रहस्य---उनके गुणों की आवर्तता के कारण---को खोलने में सहायता दी।

रेडियो सक्रियता की प्राकृतिक घटना के उद्घाटन के शीघ्र ही बाद वैज्ञानिकों ने प्रतिपादित किया कि रेडियो सक्रिय विकिरण एकसम (uniform) नहीं होते हैं। वे तीन विभिन्न प्रकार की किरणों से बने होते हैं, जिनको अल्फा-बीटा-तथा गामा किरणों का नाम दिया गया। हमें इस समय केवल अल्फा-किरणें आकृष्ट करेंगी क्योंकि ठीक यही वे किरणें हैं जिन्होंने उस मनोरंजक इतिहास में निर्णायक भूमिका अदा की है जिसकी चर्चा इस समय चल रही है।

अल्फा किरणें धनात्मक प्रभारित कणों की धारायें होती हैं। 1912 ई. में प्रख्यात अंग्रेज वैज्ञानिक ई. रदरफोर्ड ने उनके गुणों का अध्ययन करते हुए एक विलक्षण प्राकृतिक घटना का उद्घाटन किया। यदि इन किरणों (α rays) को किसी पतली धातु की पत्री (foil) पर, मान लीजिये अल्यूमिनियम या तांबे की पत्री पर, निर्देशित किया जावे, और अल्फा कणों के मार्ग पर जिंक सल्फाइड के परदे (Screen) पर होने वाली प्रदीप्ति (luminiscence) का अनुसरण करते हुए निगाह रखी जाये तो यह निरीक्षण किया जा सकता है कि पत्री से पार होते समय वे अपनी चाल की दिशा परिवर्तित कर देते हैं। और कुछ कण पीछे भी फेंक दिये जाते हैं। यह सोचते हुए कि कौन-सी शक्ति इन कणों पर प्रभाव डालती है, रदरफोर्ड अधोलिखित निष्कर्ष पर पहुँचा :

प्रकटतः, रसायनिक तत्वों का परमाणु इस प्रकार बना होता है कि उसके केन्द्र में धनात्मक प्रभारित नाभिक (Nucleus) होता है, जिसमें लगभग परमाणु का पूरा भार केन्द्रित होता है, और उसके चारों ओर सूर्य के ग्रहों की भांति, ऋणात्मक प्रभारित इलेक्ट्रोन चक्कर लगाते हैं। चूंकि परमाणु पूर्णतः वैद्युत-तटस्थ होता है, इसलिये ऋणात्मक प्रभारों को (इलेक्ट्रानों की संख्या को) नाभिक के प्रभार के बराबर ही गिनती में होना चाहिये। अल्फा कणों के लिये इस प्रकार का परमाणु पूर्णरूप से पारदर्शी होगा और केवल धनात्मक रूप से प्रभारित नाभिक (बीज-केन्द्र) ही उसमें से पार होने वाले अल्फा कणों पर अपना प्रभाव डाल सकता है। कुछ विशेष बहुत ही विरले अवसरों पर जबकि अल्फा कण ठीक नाभिक में पड़ जाता है वह पीछे लौट आता है, (एक ही प्रकार के प्रभार एक दूसरे को, कूलोन के नियम के अनुसार, पीछे ढकेलते हैं)।

इस परिकल्पना (hypothesis) पर आधारित होते हुए रदरफोर्ड ने सैद्धान्तिक रूप से अल्फा कणों के झुकाव की मात्रा परमाणु के प्रभार पर निर्भर करते हुए निकाली। किन्तु यदि उसके द्वारा प्राप्त फार्मूला सही था तो, विपरीत समस्या का हल भी इससे सम्भव होना चाहिये यानी कणों के झुकाव को जानकर नाभिक के प्रभार की संख्या गणना करना सम्भव होना चाहिये।

रदरफोर्ड के देशवासी हेगेर और मार्सडन ने इस फार्मूले की परीक्षा करने का बीड़ा उठाया। प्रयोगों के द्वारा उन्होंने प्रतिपादित किया कि फार्मूला सही था, और उसकी सहायता से तांबे, चांदी, और प्लाटीनम के परमाणुओं के बीज-केन्द्रों (Nucleus) के प्रभार की संख्या गणना की। ये प्रभार क्रमशः 27, 47 और 78 प्रभार की मूलभूत इकाइयों की संख्या में ज्ञात हुए।

और अब मेंडलीफ की प्रणाली की ओर आइये, तांबे, चांदी, और प्लाटीनम की क्रमिक संख्याओं की ओर ध्यान दीजिये। यह क्या ? बिल्कुल सन्निपतन ? वे भी यही संख्यायें 29, 47 और 78 हैं।

नहीं, यह आकस्मिक बात नहीं हो सकती है। डच वैज्ञानिक वान-डेन-ब्रूक ने सर्व प्रथम निम्न पूर्वानुमान दिया : प्रत्येक रासायनिक तत्व के परमाणु के नाभिक के प्रभार की मात्रा प्रभार की मूलभूत इकाइयों में नापी जा सकती है और उसकी परमाणविक संख्या के बराबर होती है अर्थात् मेंडलीफ प्रणाली में तत्व की क्रमिक संख्या के बराबर होती है। अंत में आवर्त-नियम के वास्तविक आधार का पता लग गया। परमाणविक भार नहीं नाभिक का प्रभार है जो आवश्यक रूप से आवर्त प्रणाली में तत्व का स्थान निश्चित करता है।

उपरोक्त निष्कर्ष निर्विवादित सत्य का रूप ले ले। इसके लिये कुल ज्ञात तत्वों के परमाणुओं के प्रभारों की मात्रा नापना शेष रह गया था। परिकल्पना को सिद्धान्त में परिणत करना आवश्यक था।

यह कार्य रदरफोर्ड ने अपने युवा सहकर्मी हेनरी मोजली के सुपुर्द किया और उसने, योग्यता के साथ इस कार्य को किया। प्रतिभाशाली वैज्ञानिक का छोटा जीवन (मोजली इसके बाद एक ही वर्ष में मर गया था) अपनी महत्वपूर्ण खोजों से अमर हो गया।

यदि भागते हुए इलेक्ट्रोनों से मार्ग में किसी धातु की बनी हुई रुकावट (उसे प्रति कैथोड कहा जाता है) उपस्थित की जावे तो राञ्जन किरणों (एक्स रे) विकीर्णित होती हैं जिसके स्पेक्ट्रम (वर्णक्रम) में अन्य रेखाओं के अतिरिक्त प्रति-कैथोड के पदार्थ की विशेषता सूचक रेखा भी होगी। यह "लाक्षणिक" रेखायें कहलाती हैं। इन्हीं लाक्षणिक रेखाओं के व्यवस्थित अध्ययन में मोजली भी अधिकांश तत्वों के प्रति-कैथोड (Anti Cathod) तय्यार करने के बाद जुट गया।

इन प्रयोगों से बहुत बड़ी आशा की जाती थी। क्योंकि यदि परमाणु का "ग्रहीय" माडेल सही था, तो एक तत्व से दूसरे तत्व में जाते समय लाक्षणिक रोञ्जन विकिरण की तरंग दीर्घता भी अनुक्रमता से परिवर्तित हो जावेगी। और उस दशा में, तब इस तरंग दीर्घता को जान कर मेंडेलीफ प्रणाली में तत्व की क्रम-संख्या निकाली जा सकेगी।

पूर्वानुमान कितने ही साहसिक क्यों न रहे हों, परिणाम सर्वाधिक साहस पूर्ण आशाओं से भी आगे निकल गये। प्राप्त नियमितता इतनी स्पष्ट थी, तत्व की क्रमसंख्या और तरंग दीर्घता के मध्य सम्बन्ध प्रत्यक्ष था कि अब आगे इसमें सन्देह करने को कोई गुन्जाइश नहीं रह गयी थी। मेंडेलीफ प्रणाली में तत्वों का स्थान प्राप्त करने का सर्वाधिक विश्वसनीय मार्ग मिल गया था।

और तुरन्त वह अन्धकार छटने लगा जो बहुत वर्षों से विरल मिट्टियों के तत्वों के रहस्य को वैज्ञानिकों से छिपाये हुए था।

सर्व प्रथम यह स्पष्ट हुआ कि प्रकृति में से कौन वास्तव में विरल मिट्टी के तत्व हैं, और कौन केवल कल्पना और प्रयोगों की गलतियों का परिणाम हैं। इन तत्वों में से केवल 13 को 'नागरिक अधिकार' प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त मोजली ने पूर्ण निश्चयता के साथ घोषित किया कि अनुसन्धानकों के हाथ में क्रम संख्या 61 और 72 के तत्व नहीं हैं और इसलिये उनको प्राप्त करना आवश्यक है।

पर कहां खोजा जाये? जहां तक तत्व संख्या 61 का सम्बन्ध है, प्रतीत हुआ कि अधिक कठिनाइयों की आशा नहीं करनी चाहिये। यह चौदहवीं लैन्थेनायड होगा। डेनिश भौतिक शास्त्री यू तामसेन ने 1895 ई. में ही और वे. भाइनेर ने 1902 ई. में यह भविष्यवाणी की कि नियोडिमियम और समेरियम

के मध्य अज्ञात विरल मिट्टी का यह तत्व होगा। इसका अर्थ यह है कि उसे उन्हें खनिजों में ढूंढ़ना आवश्यक है जिनमें नियोडीमियम और समेरियम प्राप्त होते हैं।[1]

पर तत्व संख्या 72 को कहाँ खोजा जाये ?

ल्यूटिशियम (lutecium) तत्व संख्या 71 है जो विरल मिट्टी का उपलक्षक (Typical) तत्व है। तत्व संख्या 73, टैन्टेलम (tantalum) विरल मिट्टी का तत्व नहीं है। फिर लैन्थेनायड समूह किस तत्व से समाप्त होता है। ल्यूटिशियम दिया। उसके द्वारा उद्घाटित अथवा अज्ञात तत्व संख्या 72 से ?

इस प्रश्न का उत्तर महान डेनिश भौतिक शास्त्री एवं सैद्धान्तिक नेल्स बोर ने दिया। उसके द्वारा उद्घाटित सिद्धान्त ने पदार्थों के विज्ञान को एक नया युग प्रदान किया।

बोर ने, ऐसा समझा जावेगा, कि रदरफोर्ड के परमाणु के ग्रहीय माडेल में बहुत नगण्य सुधार के साथ कार्य प्रारम्भ किया। उसने स्थापना दी कि इलेक्ट्रान किसी भी कक्षा में चक्कर न लगा कर केवल दृढ़ता से निर्दिष्ट कक्षाओं में ही चक्कर लगाते हैं और प्रत्येक कक्षा में पूर्ण रूप से निश्चित इलेक्ट्रोनों की संख्या चक्कर लगाती है। इलेक्ट्रोन एक कक्षा से दूसरे कक्षा में जा सकते हैं पर ऐसी दशा में वह या तो एक बिलकुल निश्चित ऊर्जा की प्रमात्रा (quantum) उन्मुक्त करता है या अवशोषित करता है। इसी कारण उत्तेजित किये गये परमाणु का स्पेक्ट्रम (वर्णक्रम) जो विशेष यन्त्रों—स्पेक्ट्रोस्कोपों-द्वारा फोटोग्राफ किया जाता है, अविरल (Continuous) न होकर रेखित (striped) चित्र प्रस्तुत करता है।

अपने सिद्धान्त की सहायता से इस प्रकार के स्पेक्ट्रम का स्पष्टीकरण करते हुए बोर इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि नाभिक (बीजकेन्द्र) से प्रथम कक्ष (Orbit) में दो से अधिक इलेक्ट्रोन नहीं रह सकते हैं। और इसी प्रकार दूसरी कक्षा में 8, तीसरी कक्ष में 18, चौथी कक्ष में 32, पांचवीं कक्ष में 50 (इसी प्रकार आगे) से अधिक नहीं रह सकते हैं। व्यापक रूप से $2n^2$ इलेक्ट्रोन किसी कक्ष में हो सकते हैं जब कि n कक्षा की क्रम संख्या है (भौतिक शास्त्र में n को 'मुख्य क्वान्टम-संख्या' 'Principal Quantum number' कहा जाता है)।

---

1. इसके अतिरिक्त मोजले ने, अंत में, प्रणाली में K तथा Ar, Co तथा Ni, J तथा Te के स्थानों के लिये चल रहे दीर्घकालीन विवादों को भी तै किया, और दृढ़ता पूर्वक यह प्रतिपादित किया कि Co की क्रम-संख्या 27, निकेल की 28, आर्गन की 18, पोटैशियम की 19, Te की 52 तथा J की 53 है।

अब हम मेंडेलीफ प्रणाली के प्रत्येक आवर्त में तत्वों की संख्या की गणना करेंगे । प्रथम आवर्त में दो तत्व (हाइड्रोजन और हीलियम) हैं, दूसरे और तीसरे आवर्तों में आठ-आठ तत्व हैं, चौथे और पांचवें में अठारह-अठारह तत्व (हाइड्रोजन और हीलियम) हैं, दूसरे और तीसरे आवर्तों में आठ-आठ तत्व हैं, चौथे और पांचवें में अठारह-अठारह तत्व हैं, छठे आवर्त में बत्तीस तत्व हैं । इस प्रकार हमें संख्याओं का वही क्रम प्राप्त होता है जो बोर ने नाभिक से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि कक्षों मे स्थित इलेक्ट्रोनों की संख्याओं का अपने सिद्धान्त की सहायता से निकाला है । यह स्पष्ट है कि यह आकस्मिक घटना नहीं है । आवर्त मे तत्वों की संख्या इलेक्ट्रोनिक कक्षाओं के भरने का अनुक्रम (Succession) प्रतिबिम्बत करती है । और, ऐसा है तो प्रकटतः यह जानना कि कैसे, किस अनुक्रमण में वह संख्या पूरी होती है बिलकुल अनिवार्य और असाधारणतया महत्वपूर्ण हो जाता है । इस मार्ग में हम अनिवार्य रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण निष्कर्षों पर पहुंचते हैं ।

इस प्रकार, बोर के सिद्धान्त के दृष्टिकोण से आवर्त-प्रणाली के प्रथमावर्त में प्रथम कक्ष की सम्पूर्ण सम्पन्न होती है । चूंकि प्रथम कक्ष में केवल दो इलेक्ट्रान आ सकते हैं इसलिये प्रथमावर्त में तत्वों की संख्या भी दो ही हो सकती है । दूसरे आवर्त में ($n=2$) के अनसार द्वितीयावर्त में सम्पूर्ति कम होती है) 8 तत्व हो सकते हैं । और यही वास्तविकता भी है । दूसरे आवर्त के अन्तिम तत्व नियम (Neon) की क्रम संख्या 10 होती है, और इसका अर्थ होता है कि उसमे इलेक्ट्रानो की संख्या 10 है : दो प्रथमावर्त में और 8 दूसरे आवर्त में, आगे तीसरे आवर्त में 18 तत्व होने चाहिए किन्तु वास्तव में इस आवर्त में कुल आठ ही तत्व होते हैं, अर्थात् तृतीयावर्त 18 सम्भव इलेक्ट्रानों को स्थान देने के बजाय केवल आठ इलेक्ट्रानों को स्थान देता है । यह इस कारण होता है क्योंकि 8 इलेक्ट्रानों का ढाचा सर्वाधिक स्थायित्व रखता है और इसलिये तीसरा आवर्त अपनी इलेक्ट्रानों की संख्या (18) लेने की सर्वोच्च क्षमता केवल चौथे आवर्त में पूरी करता है यानी उस समय जब वह, यदि इस प्रकार कहा जा सकता है, "पृष्ठ भाग से गहरा" हो जाता है । यह प्राकृतिक घटना—'विलम्ब से' आवरणो की सम्पूर्ति—आगे भी अपने को दोहरायेगी, और कुल अवसरों पर यह बाह्य आवरण को "प्रतिरक्षा के अन्तर्गत" होता है, जो स्वय कभी आठ इलेक्ट्रानों से अधिक सख्या अपने में नहीं रखता है ।

अब हमें पांचवें और छठे आवर्तों को निरीक्षण करना रह गया है (सातवां आवर्त अभी पूरा नही हुआ है) ।

इन आवर्तों के अन्त मे पड़ने वाली निष्क्रिय गैसों की कक्षाओं में इलेक्ट्रानों की स्थिति इस प्रकार है :

जेनान (Xenon) 2, 8, 18, 18, 8
रेडान (Redon) 2, 8, 18, 32, 18, 8

छठे आवर्त में मानो इलेक्ट्रानों को यह स्मरण रहता है कि चौथे आवर्त में 14 "रिक्त" स्थान हैं और वे उन्हें भरना प्रारम्भ कर देते हैं। इस प्रकार लेन्थेनायडों के परिवार का निर्माण होता है। 14 इलेक्ट्रान उपरोक्त रिक्त स्थानों को भरते हैं और 14 तत्व बनते हैं। किन्तु अवश्य ही इसका अर्थ है कि तत्व संख्या 72-ल्यूटिशियम अन्तिम विरल मिट्टी का तत्व है और इसी से यह निष्कर्ष निकलता है कि अज्ञात तत्व 72 को जिर्कोनियम और टाइटेनियम से सादृश्यता रखनी चाहिये, जो चौथे वर्ग में स्थित हैं। इसका अर्थ यह है न कि उसे जिर्कोनियम और टाइटेनियम के खनिजों में खोजना आवश्यक है न कि विरल मिट्टियों के खनिजों में।

1923 ई. मे कोस्टेर और हेविशी ने तत्व संख्या 72 खोज ली। वह नार्वे के जिर्कोनियम के खनिजों में मिला, और उसका नाम गैफनियम रखा गया। बोर का सिद्धान्त शान के साथ सम्पुष्ट हुआ। आवर्त-नियम के ऊपर छाये काले बादल छंट गये, गुणों में आवर्तिक परिवर्तन होने का कारण स्पष्ट हो गया।

मानचित्र से विस्तृत परिचय

आओ अब एक बार फिर अपने प्रमाणित सिद्धान्त से सुसज्जित होकर और आवर्त-नियम में गम्भीर विश्वास लेकर हम आवर्त प्रणाली की ओर लौटें।

अस्तु, परमाणु के केन्द्र में धनात्मक प्रभारित बीज केन्द्र स्थित होता है, जिसका प्रभार आवर्त प्रणाली मे तत्व की क्रम-संख्या के बराबर होता है। बीज केन्द्र के चारों ओर ऋणात्मक प्रभारित इलेक्ट्रोन चक्कर लगाते हैं। उनकी संख्या बीज केन्द्र के प्रभार के बराबर होती है (और इसलिये तत्व की क्रम-संख्या के बराबर होती है।) इलेक्ट्रोन कक्षाओं में स्थित होते हैं और प्रत्येक कक्षा मे दृढ़ता से निर्दिष्ट इलेक्ट्रानों की संख्या ही सर्वोच्च संख्या हो सकती है। ये संख्यायें हैं 2, 8, 18, 32 आदि।

प्रकटतः इलेक्ट्रानों का किसी ऐसी संख्या से बना हुआ ढांचा सर्वाधिक स्थायी प्रगट होता है, विशेषकर, 2 या 8 इलेक्ट्रानों से बना हुआ ढांचा और वास्तविकता भी यही है। निःसन्देह, निष्क्रिय गैसों के बाह्य कक्षा मे इलेक्ट्रानों की संख्या इस प्रकार होती है: हीलियम में दो और शेष कुल में, प्रत्येक में आठ, आठ।

अब हम बतयेंगे कि तत्वों के रासायनिक गुण किस प्रकार अपने परमाणुओं के ढांचों से जुड़े होते हैं। प्रथमावर्त में दो तत्व होते हैं: हाइड्रोजन और हीलियम। प्रथम तत्व, हाइड्रोजन में बीज केन्द्रीय प्रभार इकाई होता है और

अकेली एक कक्षा में एक इलेक्ट्रोन होता है। हिलियम में एक और इलेक्ट्रोन इसी एक कक्षा में प्रगट हो जाता है और बस आवर्त समाप्त हो जाता है।

दूसरे आवर्त का प्रथम तत्व लिथियम है जिसकी क्रम संख्या 3 होती है और उसके तीन इलेक्ट्रोन दो कक्षाओं में स्थित होते हैं : दो प्रथम कक्षा में और एक द्वितीय कक्षा मे। बेरीलियम मे चौथा इलेक्ट्रोन प्रगट होता है। किन्तु चूंकि प्रथम कक्षा पूर्ण भरी होती है इस कारण नया इलेक्ट्रोन द्वितीय कक्षा में स्थान लेता है। बोरोन में द्वितीय कक्षा में तीन इलेक्ट्रोन हो जाते हैं, कार्बन में चार, नाइट्रोजन में पांच और इसी प्रकार एक-एक इलेक्ट्रोन की संख्या क्रमशः बढ़ते हुये नियम मे दूसरी कक्षा भी पूर्णतः भर जाती है और उसमें दूसरी कक्षा में आठ इलेक्ट्रोन होते हैं। इसलिये नया इलेक्ट्रोन जो नियन के बाद सोडियम में प्रगट होता है, अगली तीसरी कक्षा में स्थान प्राप्त करता है।

सोडियम से नया आवर्त प्रारम्भ हो जाता है। इस आवर्त में भी चित्र पूर्णतः इसी प्रकार अपने को दोहराता है। मैग्नीशियम में, जो बेरीलियम के समान ही रासायनिक गुणों में होता है, बाह्य कक्षा में दो इलेक्ट्रान होते हैं। अनुधर्मता प्रगट करने वाले बोरोन और अल्यूमिनियम मे, कार्बन और सिलिकन में, नाइट्रोजन और फास्फोरस में, आक्सीजन और गंधक में, फ्लोरीन, और क्लोरीन में सब अनुधर्मी युगलों में बाह्य कक्षा में इलेक्ट्रोनों की संख्या एक समान होती है। उदाहरण के लिये फ्लोरीन और क्लोरीन दोनों के बाह्य कक्षाओं मे सात सात इलेक्ट्रोन होते हैं। इस प्रकार रासायनिक तत्वों के गुणों के दोहराने का कारण स्पष्ट हुआ। वह बाह्य इलेक्ट्रोनिक कक्षाओं की बनावट की एक समानता पर आधारित है।

इस प्रकार क्षारीय धातुओं, लिथियम, सोडियम, पोटैशियम, रूबीडियम, सायेशियम, फ्रांशियम सब की बाह्य कक्षा में एक एक इलेक्ट्रोन होता है। और इसका अर्थ यह होता है कि रासायनिक प्रतिक्रिया में भाग लेते समय उनके परमाणु केवल एक इलेक्ट्रोन से अभिक्रिया कर सकते हैं यानी ठीक उसी इले-क्ट्रोन को देते हुये वे वैसे ही स्थायी इलेक्ट्रोनों का ढांचा बनाने का प्रयत्न करते हैं जैसा कि निष्क्रिय गैसों का होता है।

दूसरे वर्ग (group) में विरल मिट्टी की धातुएं पड़ती हैं। उनके बाह्य कक्षा में दो दो इलेक्ट्रोन होते हैं और इसलिये इन [illegible] को 2+ संयोजकतायें प्रगट कर सकते हैं (अर्थात् [illegible] अनुपूरित होना रहता है) इसी प्रकार आगे साम[illegible]

है, कि आवर्त प्रणाली मे वर्ग की

सबसे ऊंची सम्भावित संयोजकता व्यक्त करती है। इस प्रकार सातवें वर्ग के तत्त्व 7+संयोजकतायें तक प्रगट कर सकते हैं।

किन्तु हम क्यों हर समय केवल इलेक्ट्रोनो के देने ही की बात करते हैं? अवश्य, तत्त्व उसी प्रकार का स्थायी ढांचा जैसा कि निष्क्रिय गैसों का होता है, बनाते हैं यदि 8 से कम इलेक्ट्रोन होने वाले उनके ढांचे में बकिया इलेक्ट्रोनों की सम्पूर्ति कर दी जाती है। यह बात बिल्कुल नियमतः होती है। तत्व बिल्कुल इसी प्रकार का आचरण व्यक्त करते हैं, किन्तु केवल वहीं जहाँ यह करना "सुविधाजनक" होता है। निस्सन्देह: मैग्नीशियम को, उदाहरण के लिये, यह आसान होता है कि वह अपने दो इलेक्ट्रान दे दे बजाय इसके कि वह छः इलेक्ट्रोन बाहर से ले और अपनी बाह्य कक्षा में आठ इलेक्ट्रोन पूरा करे: किन्तु क्लोरीन, जिसकी बाह्य कक्षा में सात इलेक्ट्रोन होते हैं, एक इलेक्ट्रान आसानी से ले सकता है और अपनी बाह्य कक्षा की स्थायी सम्पूर्ति कर सकता है।

इसी कारण से मध्य में स्थित नाइट्रोजन इलेक्ट्रानों को बराबर प्रकार से दे या ले सकता है। उसे दोनों ओर बराबर सुविधा प्राप्त है।

इस प्रकार हमने परमाणु की बनावट के दृष्टिकोण से धातुओं और अधातुओं के मध्य अन्तर स्पष्ट किया।

धातु केवल अपने संयोजकता करने वाले इलेक्ट्रोनों को दे सकते हैं; अधातु, नियमतः ऐसे इलेक्ट्रोनों को बाहर से अपने में धारण कर सकते हैं। जो कुछ ऊपर कहा गया है उससे यह निष्कर्ष स्वयं सामने आता है कि धातुओं और अधातुओं की संख्या आवर्त–प्रणाली में बराबर होनी चाहिये। पर ऐसा बिल्कुल नहीं है। प्रगटतः आवर्त प्रणाली में धातुओं की संख्या बहुत ही कम है। वे प्रणाली के दाहिनी ओर ऊपर के कोने में केवल कुछ खानों में स्थित हैं और शेष कुल खाने टिपिकल धातुओं से भरे हैं।

जब तक हमने मेंडेलोफ प्रणाली के प्रथम तीन आवर्तों के घेरे को नहीं पार किया था तब. कुछ ठीक था। पर अब चौथा आवर्त भरना प्रारम्भ हुआ। पोटेशियम की बाह्य चौथी कक्षा में एक इलेक्ट्रोन होता है, कैल्शियम में दो होते हैं, स्कैन्डियम में दो होते हैं। टाइटेनियम और वनैडियम में भी दो-दो होते हैं। यह क्या माजरा है? क्यों जैसे ही चौथी बाह्य कक्षा में दो इलेक्ट्रोन स्थान लेते हैं आगे की चौथी कक्षा का भरना रुक जाता है और प्रत्येक नया इलेक्ट्रोन अन्दर की तीसरी कक्षा में स्थान लेने लगता है? सामान्यतः क्यों इतने विलम्ब के बाद तीसरी कक्षा अपनी सम्भावित अधिकतम इलेक्ट्रोनों की संख्या भरना प्रारम्भ करती है?

प्रत्यतः, समान प्रकार से प्रभारित इलेक्ट्रोनों के शक्तिशाली पारस्परिक प्रतिकर्षण (Repulsion) का यह प्रभाव है। इसका परिणाम यह होता है कि वे पुरानी तीसरी कक्षा को भरने के बजाय बीजकेन्द्र से अधिक दूरी पर स्थित नई चौथी कक्षा में स्थान लेने लगते हैं, किन्तु यहां नई कक्षा में अत्यन्त दृढ़ दो इलेक्ट्रानो वाला मेल उपस्थित हो जाता है। यह इतना दृढ़ होता है कि नये आने वाले इलेक्ट्रानो के लिए ऊर्जा की दृष्टि से यह अधिक सुविधाजनक हो जाता है कि वे अन्दर की तृतीय कक्षा में इलेक्ट्रोनों की कमी की सम्पूर्ति करें, विशेषतः इसलिए कि इस प्रकार की रचना को परमाणु के नाभिक का बढ़ता हुआ धनात्मक प्रभार भी सहायता देने लगता है।

फिर भी बाह्य कक्षा के इलेक्ट्रोन बाहर से नये आने वाले आगन्तुकों की बिल्कुल ही अवहेलना नहीं करते हैं। टाइटेनियम, उदाहरण के लिए, बावजूद इसके कि उसकी बाह्य कक्षा में कुल दो इलेक्ट्रोन होते हैं, रासायनिक प्रतिक्रियाओं में 4+ संयोजकतायें प्रकट करता है (जैसा कि उसके वर्ग (group) की संख्या के अनुसार होना चाहिए)। वह अपने दो कम पड़ने वाले इलेक्ट्रानों को सीधे तीसरी कक्षा से 'उधार' ले लेता है। वैनेडियम (Vanadium) को चूंकि वह पांचवें वर्ग में स्थित है तीन इलेक्ट्रोन 'उधार' लेने पड़ते हैं। और इसी प्रकार आगे। इसी का चित्र कुल सम even पंक्तियों में निरीक्षण किया जाता है। सम-पंक्तियों के कुल तत्वों में प्रत्येक की बाह्य कक्षा में दो इलेक्ट्रोन होते हैं और यह जैसा कि हम देख चुके हैं उनके धातु होने का चिन्ह है।

किन्तु उसके बाद क्या होता है जब कि भीतरी कक्षा पूर्ण रूप से भर जाती है? चौथे आवर्त में तांबा (Copper) और जस्ता (जिंक) प्रारम्भ में आते हैं, किन्तु उनमें भी और कुछ नहीं करना होता है। नये आने वाले दोनों इलेक्ट्रानों को भीतरी कक्षा में ही स्थान लेना पड़ता है। जस्ता के बाद आने वाले धातु गैलियम में तीन इलेक्ट्रोन बाह्य कक्षा में होते हैं, जर्मेनियम में चार और जर्मेनियम के बाद स्थित संखिया (आर्सेनिक), सिलीनियम, तथा ब्रोमीन टिपिकल अधातु प्रकट होते हैं। अर्थात् गुणों में परिवर्तन की नियमितता वही नहीं होती है, जो पिछले छोटे आवर्तों में हमें पहले मिली थी। इस प्रकार प्रथम बड़े वर्ग का निर्माण पूरा होता है। आगे, बाकी बड़े आवर्तों के भरने के समय भी यही चित्र पुनः दोहराता है। केवल इस अन्तर के साथ ही छठे आवर्त में लेंथेनम की बाह्य कक्षा में दो इलेक्ट्रोन आ जाने के बाद आगे की परिपूर्ति निम्नलिखित तरीके से होती है: लेंथेनम में एक इलेक्ट्रोन ठीक पीछे स्थित पांचवीं कक्षा में स्थान लेता है पर लेंथेनायिडों का परमाणविक रचना में अधिक गहराई

में स्थित चौथी कक्षा के रिक्त स्थान नये आने वाले इलेक्ट्रोनों द्वारा भरना प्रारम्भ हो जाते हैं।

यहाँ यह स्पष्ट हो जाता है कि इन तत्वों की चमत्कारपूर्ण सादृश्यता का कारण क्या है ? वास्तविकता यह है कि पांचवी कक्षा से अकेले इलेक्ट्रोन को उधार ले लेना कठिन नहीं होता है, किन्तु चौथी कक्षा से इलेक्ट्रोन लेने की कोशिश कीजिये, इसके लिए आपको उस समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी जब तक वह पूरा न भर जाये। और तब तक केवल तीन इलेक्ट्रोनों से ही सतोष करना पड़ेगा (दो जो बाह्य कक्षा में होते हैं, और एक जो पांचवीं कक्षा का आसानी से उधार मिल जाता है) यही कारण है कि कुल 14 लैंन्थेनायड तत्व एक ही 3+संयोजकता प्रकट करते हैं। और इसीलिए वे एक दूसरे से अपने रासायनिक गुणों में जुड़वां भाईयों की भांति एक दूसरे के समान होते हैं।

किन्तु रासायनिक समानता या तत्वों में अन्तर (distinction) केवल इलेक्ट्रोनिक कक्षाओं की बनावट पर ही नहीं निर्भर करता है वरन् उसकी सख्याओं पर भी निर्भर करता है। अवश्य ही, प्रत्येक नयी कक्षा के साथ, प्रत्येक नये आवर्त के साथ परमाणु आकार मे बढ़ता है। इसके परिणामस्वरूप सबसे अन्तिम कक्षा के इलेक्ट्रोन अपने आकर्षित करने वाले नाभिक से इतनी दूर स्थित हो जाते है कि बिल्कुल छोटे दबाव के अन्तर्गत भी उनको अपना परमाणु छोड़ कर बाहर जाने में कोई कठिनाई नहीं होती है। इसी कारण से सबसे अधिक क्षारवीय प्रकृति की तत्व सीजियम, एवं फ्रान्सियम आवर्त-सारणी के बायें नीचे के कोने मे स्थित हैं। और सबसे अधिक अक्षारवीयता प्रकट करने वाला अधातु, फ्लोरीन, इसके विपरीत, दाहिनी ओर ऊपर स्थित है। लैंन्थेनायडें भी इसी कारण से एक दूसरे से समानता प्रकट करते हैं क्योंकि गहराई में स्थित आन्तरिक कक्षा में इलेक्ट्रोनों के प्रवेश के साथ परमाणुओं के आकार में कोई बढ़ाव नहीं होता है, बल्कि बीज केन्द्र के धनात्मक प्रभार मे बढ़ाव के कारण उनके (परमाणु के) आकार में थोड़ा घटाव आ जाता है। यही नहीं, लैंन्थेनायडों के आकारों में इस प्रकार के संकोचन (Compression) के फलस्वरूप उनके बाद पड़ने वाले तत्व हैफनियम (Hafnium) और टेन्टेलम (tantalum) ठीक वही परमाणुओं के आकार रखते हैं जो जिर्कोनियम और नियोबियम के परमाणुओं के होते हैं। और इसीलिए जिर्कोनियम विशेष कर हैफ-नियम से, और नियोबियम टेन्टेलम से, अपने गुणों में समानता प्रकट करता है।

और, अंत मे, कुछ शब्द प्रणाली में हाइड्रोजन की स्थिति के विषय में भी हमें कहना है। हाइड्रोजन को प्रथम वर्ग में रखते हुए यह हमको स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि हम यह केवल एक लक्षण के कारण करते हैं, वह यह कि उसकी कक्षा मे केवल एक इलेक्ट्रोन होता है। पर अवश्य ही, हाइड्रोजन 1

(एक ऋण) संयोजकता भी प्रगट करता है अर्थात वह, हैलोजनों की भांति, ऋणात्मक प्रभार वाला तत्व बनते हुए अपनी कक्षा में एक इलेक्ट्रॉन ग्रहण करता है। इस प्रकार के यौगिकों की पूरी श्रेणी ज्ञात है। उन्हें हाइड्राइड कहा जाता है। उदाहरण के लिये, कैल्शियम हाइड्राइड CaH_2, लिथियम हाइड्राइड आदि हैं। इस लक्षण के अनुसार हाइड्रोजन सातवें वर्ग (*group*) में बैठने का पूर्ण अधिकारी है।

पर आगे क्या है ?

क्या यह कहा जा सकता है कि इस समय आवर्त-प्रणाली पूर्णत: निष्कलंक है ? क्षमा कीजिये, ऐसी बात नहीं है। इन्हीं लैन्थेनायडों को ही ले लीजिये, उनका लैन्थेनम के ही खाने में एक साथ स्थान लेना इलेक्ट्रोनों के आवरणों की बनावट के सिद्धान्त के दृष्टिकोण से सही कहा जा सकता है। किन्तु बावजूद इसके, मेंडेलीफ की सारणी के छोटे आकार में (जो हमारे संलग्न रंगीन चित्र में दिखाया गया है) कोई न कोई तत्व कृत्रिम रूप से शामिल है। आगे ट्रान्स-यूरेनियम तत्वों की स्थिति के बारे में सब कुछ बहुत स्पष्ट नहीं है। यह प्रश्न इस समय बहुत विवाद-पूर्ण है। कुछ वैज्ञानिक यह सुझाव देते हैं कि सातवें आवर्त में एक्टीनायड परिवार को उसी प्रकार पृथक कर देना आवश्यक है जैसे कि लैन्थेनायडों को किया गया और थोरियम, प्रोटेक्टीनियम, यूरेनियम, तथा 11 ट्रान्सयूरेनियम तत्वों को (कुल 14 की संख्या में, जैसा कि लैन्थेनायडों की भी संख्या 14 है) एक ऐक्टीनियम के खाने में स्थान देना चाहिये जैसा कि संलग्न रंगीन चित्र में किया गया है। अन्य अनुसंधान कर्ता उचित समझते हैं कि यूरेनाइडों और क्यूराइडों के परिवार पृथक किये जायें और थोरियम प्रोटेक्टीनियम तथा यूरेनियम को अपने पूर्व-स्थानों पर ही रखा जावे। संक्षेप में यह है कि अभी आवर्त-सारणी के इस भाग में स्पष्टता बहुत कम है। और भविष्य इसे स्पष्ट करेगा।

निस्सन्देह, आवर्त प्रणाली के सामने अब भी बहुत बड़ा भविष्य है। यह भविष्यवाणी करना कि उसमें आगे कौन-कौन सी अनुपूर्तियां एवं संशोधन होंगे बहुत कठिन है। केवल इस बात में सन्देह नहीं हो सकता है कि "भविष्य आवर्त-प्रणाली के अन्त का नहीं उसके विकास का दावा करता है।" मेंडेलीफ ने ये शब्द कहे थे। उसके शब्द बार-बार सही प्रमाणित हो चुके हैं और विज्ञान के प्रसार की दौड़ में आगे भी सही साबित होते रहेंगे।

पानी से हल्की धातुयें

क्या धातु को चाकू से काटना सम्भव है ? और वह भी हाथी दांत के चाकू से जिससे साधारणतः पुस्तकों के पृष्ठ फाड़े जाते हैं ? क्या उसे हथेली से मोम

की भांति दबाकर गोली बनाया जा सकता है ? क्या हाथ की गर्मी से वह पिघल सकता है ? और, अन्त में, क्या धातु को पानी में तैराया जा सकता है ?

प्रथम दृष्टि से ही ये प्रश्न कुछ अजीब से प्रकट हो रहे हैं : दैनिक जीवन में हम कठिनाई से गलने वाले कठोर धातुओं से परिचित हैं....। फिर भी, ऐसे धातु हैं जो मोम की भांति मुलायम, पानी मे न डूबने वाले, तथा हाथ की गर्मी से पिघल जाने वाले होते हैं। और यही नहीं, रासायनिक गुणों के दृष्टिकोण से वे आदर्श धातु हैं : बड़ी सरलता से कैटायन बनाते हैं। पानी से पारस्परिक प्रतिक्रिया करते हुए वे शक्तिशाली क्षार बनाते हैं, इसी कारण उन्हें क्षारक भी कहा जाता है, वे हैं लिथियम, सोडियम, पोटेशियम, रूबीडियम, तथा सायेशियम।

यदि क्षारीय—धातु के एक टुकड़े को किरोसीन के तेल से, जिसमें उसे सुरक्षित करके रखा जाता है, बाहर निकालें और चाकू से काटें तो कटा हुआ स्थान चांदी की भांति श्वेत रंग का दिखाई पड़ेगा किन्तु कुछ देर तक उस टुकड़े को वायु में रखने से वह कटा हुआ चिन्ह काला पड़ जाता है और उसकी चमक समाप्त हो जाती है। धातु वायु की नमी से पारस्परिक प्रतिक्रिया करता हुआ हाइड्रॉक्साइड की परत निर्माण करता है। वह वायु से कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस अवशोषित करके कार्बोनेट बनाता है। क्षारीय धातुयें अत्यन्त सक्रिय होती हैं। इसीलिये उनको किरोसीन के तेल मे सुरक्षित करके रखा जाता है। यदि एक छोटे से टुकड़े को : उदाहरण के लिये, सोडियम को, पानी में डाला जाये तो वह चमकती हुई गोली का रूप ले लेता है और चांदी की मकड़ी की भांति पानी की ऊपरी सतह पर कड़क और चौंधों के साथ बनने वाली हाइड्रोजन के बाबूलों से उत्तेजित होते हुए, भागता है। पर्याप्त मात्रा में ऊष्मा उन्मुक्त होती है। यदि धातु की मात्रा अधिक होती है तो उन्मुक्त ऊष्मा बनने वाली हाइड्रोजन को जला सकती है और विस्फोट तक उत्पन्न कर सकती है।

क्षारीय धातुओं की असाधारण सक्रियता का कारण उनके बाह्य अकेले इलेक्ट्रोन का परमाणु से शिथिल सम्बन्ध है।

तीन क्षारीय तत्व—लीथियम, सोडियम तथा पोटेशियम—पानी में नहीं डूबते हैं। लीथियम का विशिष्ट गुरुत्व 0.534 है, वह पानी से लगभग दो गुना हल्का और ऑस्मियम से, जो सबसे भारी धातु है, लगभग 40 गुना हल्का होता है।

अन्तर्ग्रहीय यान की वाष्प

आस्मिक यान ने पृथ्वी के आकर्षण पर काबू पा लिया है। अब विशाल मोटरों की आवश्यकता नहीं रह गई है। वे बहुत ही अधिक ईंधन मांगते हैं। कास्मास में उनके स्थान पर क्या प्रयोग किया जा सकता है ? आयनों का मोटर।

यह बहुत सरल होता है। उसकी कार्य प्रणाली निम्न प्रकार दी जा सकती है। सूर्य की प्रबल बैटरियां वोलफाम की प्लेटों को सब लाल गर्म कर देती हैं। उनके ऊपर सर्वाधिक आसानी से गलने वाला एवं सर्वाधिक सक्रिय क्षारीय धातु सायेशियम होता है।

वोलफ्राम से विकीर्णित ऊष्मा के प्रभाव से सायेशियम आयोनीकृत हो जाता है। बने हुये आयनों का बादल 10 100 वोल्ट के क्रम के तनाव के (tension) स्थिर विद्युत् क्षेत्र (electrostatic field) में सवेग (momentum) प्राप्त करता है। 12 मिलियन सेंटीमीटर प्रति सेकण्ड की गति से सायेशियम के आयन राकेट के नाजल (Nozzle) से निकलते हैं। इस प्रकार असाधारण शक्ति वाला 12000 किलोग्राम सेकण्ड किलोग्राम[1] का विशिष्ट खिंचाव (specific traction) प्राप्त होता है। किन्तु आयनों की किरण का भार अत्यन्त कम होता है अमरीका के वैज्ञानिक बताते हैं कि साधारणतः इस मोटर का खिंचाव एक किलोग्राम से अधिक न आयेगा।

फिर भी, आधुनिक अन्तर्ग्रहीय उड़ान के लिये यह मोटर ही विशाल गति देने का वादा करता है। जरा ध्यान दीजिये : आयनों वाले मोटर में सायेशियम ईंधन नहीं होता है, वह केवल सूर्य की ऊर्जा का वाहक उसी प्रकार होता है जैसे वाष्प जलते हुये कोयले की ऊर्जा का वाहक होता है।

आयनों की वाष्प पृथ्वी पर भी मानव की बड़ी सेवा करेगी। भविष्य में आधुनिक वाष्प ब्यायलरों, टर्बाइनो, जेनरेटरों, कन्डेन्सरों और ऐसे सर्व साधारण पर साथ ही, कहना न चाहिए, अत्यन्त असुविधाजनक विशाल एवं महंगे ऊष्मा को विद्युत में परिवर्तित करने वाले यन्त्रों का स्थान प्लाज्मा के जेनरेटर ले लेंगे।

प्लाज्मा के जेनरेटरो को कार्य करने का सिद्धान्त अपेक्षतया सरल है। गैस टर्बाइन की टोंटी से पराध्वनिक (Super sonic) गति से कानों को बहरा कर देने वाली आवाज के साथ 3000 सेंटीग्रेड के तापमान तक गर्म आयोनीकृत गैस की धारा फूट निकलती है। टोंटी से बाहर निकलते समय वह शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा सुरक्षित होती है। किन्तु जैसा विदित है, गैसें इस ऊंचे तापमान पर भी बहुत कम आयोनीकृत होती हैं। उनकी वैद्युत संवाहकता की तुलना धातु की वैद्युत संवाहकता से किसी प्रकार नहीं की जा सकती। गैसों की वैद्युत संवाहकता को पर्याप्त ऊंचा करने के लिए यह आवश्यक है कि गैस की धारा में प्रभारित कणों को समाविष्ट किया जावे।

---

1. विशिष्ट खिंचाव (झोंका) वह है जो एक सेकण्ड में एक किलोग्राम ईंधन लगने से प्राप्त होता है।

और इस समय फिर सरलता से प्रायोनीकृत होने वाले, सक्रिय क्षारीय धातु हमारी सहायता करते हैं। सायेसियम (रुबीडियम, पोटैशियम) को गैस की धारा में समाविष्ट करते हैं।

विद्युत-धारा प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक होता है कि चुम्बकीय क्षेत्र को किसी धातु-संवाहक (Metalic Conductor) द्वारा प्रतिच्छेदित किया जावे। यहां धातु की भूमिका विद्युत संवहन करने वाली गैस की धारा अदा करती है।

प्लाज्मा के जेनरेटरों में गैस की ऊष्मा सीधे विद्युत में परिणत हो जाती है।

फलोत्पादक कार्य-क्षमता 50-60 प्रतिशत के लगभग होती है, अर्थात् साधारण जेनरेटरों, वाष्पीय ब्वायलरों, टर्बाइनों, विद्युत जेनरेटरों आदि की धारा की फलोत्पादक कार्य-क्षमता से दो गुना अधिक होती है।

कास्मिक यान के पथ

कास्मिक यान के पथ क्षारीय धातुओं ने अपना भाग्य कास्मिस से जोड़ लिया है। 2 जनवरी 1959 ई० ने सारी मानवता को इस पर विश्वास दिला दिया।

किसी तुषारित (Frosty) शीत निशा में निर्दिष्ट समय पर चन्द्रमा की ओर भागते हुये अदृश्य राकेट से पीला धब्बा (परमाणविक सोडियम की वाष्पों का बादल) फूट निकला। विश्व के प्रथम कृत्रिम पुच्छल तारे का आविर्भाव हुआ। उसकी सहायता से सोडियम का बादल छोड़ने के क्षण राकेट के अक्षांश-रेखांश (Coordinates) ठीक-ठीक निर्धारित किये गये। पृथ्वी से 113 हजार किलोमीटर दूरी पर छोड़े गये उस बादल ने छठी साइज के तारे की चमक प्राप्त कर ली, ऐसे तारे की चमक जो मनुष्य की आंखों से बगैर किसी यन्त्र की सहायता से देखा जा सकता था।

कृत्रिम धूम्रकेतुओं की रचना के लिए सभी क्षारीय धातुयें प्रयोग हो सकती हैं। व सभी सरलता से वाष्पीकृत होती हैं और तेजी से चमकती हैं। मेंडेलीफ प्रणाली का प्रत्येक तत्व अपनी विशेष चमक देता है और अपना विशेष लाक्षणिक स्पेक्ट्रम (वर्णक्रम) प्रस्तुत करता है।

ज्वाला को सोडियम चमकदार पीला वर्ण प्रदान करता है। एक चुटकी भर रसोईघर के नमक को गैस बर्नर की लौ में डालिए और आपको इस पर विश्वास हो जायेगा।

कास्मास में सोडियम के परमाणु सूर्य के स्पेक्ट्रम का पीला भाग, शेष अंश को अवशोषित करते हुए, विक्षेपित (Disperse) करते हैं। पीले रंग का धुम्रकेतु प्राप्त होता है जो अत्यन्त चमकदार होता है, साधारणतः एक किलो-

ग्राम सोडियम से प्राप्त पुच्छल तारे के प्रकाश की मात्रा वही होती है जो 70 हजार किलोवाट शक्ति के विद्युत प्रक्षेपक (Electric Projector) से प्राप्त होती है ।

किन्तु इससे भी बड़े पुच्छल तारे लिथियम का प्रयोग करके प्राप्त किए जा सकते हैं । प्रथमतः लिथियम के परमाणु सूर्य के स्पेक्ट्रम के निश्चित भाग को शक्ति के साथ विक्षेपित करते हैं : एक किलोग्राम में वे सोडियम के परमाणुओं की अपेक्षा तीन गुना अधिक होते हैं । लीथियम का धूम्रकेतु जो एक किलो ग्राम धातु से बनता है, सोडियम द्वारा बने धूम्रकेतु की अपेक्षा 40 गुना अधिक चमकदार होगा। केवल वह पीला न होगा, बल्कि कार्मिन रक्त (Cormine red) वर्ण का होगा । पोटैशियम का धूम्रकेतु गुलाबी–बैंगनी रंग का होगा । क्षारीय धातुओं की सहायता से कास्मिक यान का मार्ग अनुरेखक (Tracer) की सहायता से अनुसरित किया जा सकता है । इसके लिए लिथियम के बादलों को समय के निर्धारित मध्यान्तरों पर छोड़ना आवश्यक होता है ।

प्रकाश से प्रतिक्रिया करते हैं

1888 ई. में प्रख्यात रूसी भौतिक-शास्त्री अ. गे. स्तोलेतोव ने उद्घाटित किया कि विद्युत-चाप (Electric arc) का प्रकाश जिंक प्लेट से इलेक्ट्रोन निष्कासित करता है । इस प्राकृतिक घटना को 'प्रकाश-वैद्युत प्रभाव' कहा गया है । इसकी मात्रा धातु के इलेक्ट्रोनों की गतिशीलता पर निर्भर होती है । इस पर निर्भर होती है कि उनको परमाणु से छुड़ा लेने अथवा परमाणु को आयोनित करने में कितनी आसानी होती है । वह क्षेत्रीय तनाव जिसमें परमाणु का बाह्य इलेक्ट्रोन अपनी कक्षा छोड़ देता है, आयनीकरण विभव (Ionising Potential) कहलाता है ।

क्षारीय धातुओं के आयनीकरण विभव दूसरी धातुओं की अपेक्षा छोटे होते हैं । सायेशियम का आयनीकरण विभव, उदाहरण के लिए, केवल 3.9 वोल्ट होता है । यह आश्चर्य की बात नहीं है कि पोटैशियम, सोडियम और विशेषकर रूबीडियम और सायेशियम प्रकाश के लिये बड़े ग्रहणशील होते हैं । अन्तिम दोनों तत्वों का एक बड़ा अंश फोटो विद्युत सेलों के उत्पादन में उपयोग किया जाता है ।

यह फोटो विद्युत सेल क्या होता है ? यह एक छोटा, विरलीकृत (Rarefied) निष्क्रिय गैस भरा हुआ बल्ब होता है, जिसके भीतरी आवरण का कुछ भाग सायेशियम अथवा रूबीडियम की हल्की परत से ढका होता है । एक अच्छे शीशे की भाँति, बल्ब के इस चाँदी के समान चमकते भाग के दूसरी ओर छल्ला (Ring) या तार की जाली होती है ।

बल्ब का चाँदी के समान चमकता भाग कैथोड होता है और छल्ला या जाली अनोड होता है । जब कैथोड को प्रकाशित किया जाता है, प्रकाश क्वाण्टम्

इलेक्ट्रॉन बाहर निकालते हैं। वे अनोड की ओर चलते हैं और शृंखला बनाते हुए धारा उत्पादित करते हैं।

फोटो विद्युत् सेलों द्वारा उन तारागों की चमक नापी जा सकती है, जो मनुष्य की आंखों से कठिनता से दिखाई पड़ते हैं।

आक्सीजन-रजत-सायेशियम के कैथोड़ अन्धकार में देखते हैं, वे इन्फ्रारेड (अवरक्त) एवं वायेलेट किरणों से तेजी से प्रभावित होते हैं।

फोटो विद्युत सेल ने महान गूंगे (सिनेमा) को वाणी दी, उसके बगैर टेलीविजन असम्भव था। यह स्वचलित उत्पादन की क्रियाओं की सहायता से चलने वाले अनेक आधुनिक कारखानो का अविच्छेद्य अंग बन गया है।

क्षारीय धातु और परमाणविक रीएक्टर

वैज्ञानिकों ने परमाणविक नाभिक को बन्धन-मुक्त किया, ऊर्जा के अटूट गुप्त भण्डार तक पहुँचे और—वहीं पर उनकी मुठभेड़ गम्भीर समस्याओं से हो गई।

यूरेनियम के रीएक्टर को ठंडा करना, उसके द्वारा उन्मुक्त होने वाली ऊष्मा को निरन्तर हटाते रहना अनिवार्य होता है। ऐसे पदार्थ की आवश्यकता पैदा हो गई जो तेजी से एवं प्रभाव पूर्ण ढग से ऊष्मा को ले सके, ठंडा करने वाली प्रणाली के पाईपो में आसानी से चल सके और कुछ सौ डिग्री के तापमान पर भी द्रवावस्था में रह सके। रीएक्टर के ठडा किये जाने वाले भाग का ऐसा ही तापमान होता है।

जल पुराना अनुभवी ऊष्मा खींचने वाला पदार्थ है। उसकी तापीय धारिता प्रसिद्ध है। उसकी ऊष्मीय संवाहकता बहुत खराब है। नलों मे वह चिपकता नहीं है। किन्तु, किन्तु वह 100°c तापमान पर ही वाष्पीकृत हो जाता है। जल में अनेक रीएक्टर सफलतापूर्वक काम करते हैं, किन्तु उसका नीचा क्वथनांक (Boiling Point) इस बात की अपेक्षा करता है कि प्रणाली का ढांचा ऊँचे दबावों पर रखा जावे। इसके साथ ही ऊँचे तापमानों पर जल ढाचे के पदार्थ से परस्परिक रासायनिक प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है।

क्षारीय धातुओं का ऊष्मा खींचने वाले पदार्थ के रूप में उपयोग ढांचे को बहुत सरल बनाने की अनुमति प्रदान करता है। सोडियम, उदाहरण के लिये, तेजी से और प्रभावोत्पादक ढंग से ऊष्मा उठाता है। वह 97·8°c सेंटी ग्रेड पर गलता है और 890°c पर उबलता है। इस प्रकार वह लगभग 800 अंशों की दौड़ में द्रव बना रहता है। किन्तु यह गुण कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं है : सोडियम को ऊँचे तापमानों और नीचे दबावों पर प्रयोग किया जाता है। इसके साथ ही, वह ठण्डा करने वाली प्रणाली के पदार्थ से पारस्परिक रासायनिक

प्रतिक्रिया नहीं उत्पन्न करता है। लिथियम का द्रवावस्था में रहने का प्रक्षेत्र 1150°c तक है। उसका भी प्रयोग ऊष्मा उठाने वाले पदार्थ के रूप में किया जाता है। यह सच है कि पानी की अपेक्षा क्षारीय धातु न्यूट्रानों को धीमा करने में कहीं अधिक कमजोर होते हैं, इसके अतिरिक्त उनकी अभिप्रेरित रेडियो सक्रियता पानी की अपेक्षा ऊंची होती है।

प्रकृति में और शरीर में

पृथ्वी का पपड़ा पोटैशियम और सोडियम की एक समान मात्रायें अपने में रखता है, लगभग 2·5 प्रतिशत भार के अनुसार स्थल में पोटैशियम और सोडियम तत्वों की विशाल तहें प्राप्त होती हैं, किन्तु महासागरों में सोडियम की मात्रा पोटैशियम से 40 गुना अधिक होती है। इसका क्या कारण है? आओ क्षारीय धातुओं के आयनों के अर्ध-व्यासों की ओर ध्यान दें। वे निम्नलिखित आचरण प्रदर्शित करते हैं: जितना ही बड़ा परमाण्विक भार होता है उतना ही बड़ा धातु का आयनिक व्यासार्ध होता है। फलतः, उतनी ही अधिक सरलता से वह प्रत्येक प्रकार के प्रभारित कणों द्वारा प्रभावित होता है। ऐसे कण सदैव मिट्टी में रहते हैं। वे आसानी से विकृत होने वाले आयनों से आकर्षित होते हैं। पोटैशियम, रूबीडियम और सायेशियम के कैटायन इसी प्रकार के आयन होते हैं।

दूसरी ओर से, प्रत्येक आयन विद्युत-क्षेत्र का स्रोत होता है और बाह्य माध्यम के प्रभारित कणों पर वह विकृत करने वाला प्रभाव छोड़ता है, उतनी ही अधिक शक्ति के साथ जितना छोटा उसका आयनिक अर्धव्यास होता है। क्षारीय धातुओं में सर्वाधिक शक्तिशाली विकृत कारी प्रभाव कैटायन लिथियम प्रगट करता है, जिसका आयनिक व्यासार्ध सबसे छोटा (0.78 A°) होता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पोटैशियम, रूबीडियम और सायेशियम मिट्टी को पकड़ते हैं किन्तु लिथियम स्वयं उसमें पकड़ा जाता है। सोडियम के आयन का इष्टतम आकार (0.98A°) होता है। वह शिथिलतापूर्वक विकृत होता है और इसलिये पानी द्वारा सरलता से मिट्टी से धो लिया जाता है।

यह बात पोटैशियम मिट्टी को पकड़ता है बड़ी महत्वपूर्ण है। अवश्य ही उर्वरकों की तीन ह्वेलों में से एक वह है (अन्य दो ह्वेलें फास्फोरस और नाइट्रोजन हैं)। प्रति वर्ष संसार की फसलें मिट्टी से 30 मिलियन टन से ऊपर पोटैशियम निकाल लेती हैं। मीठा चुकन्दर, आलू और तम्बाकू विशेषतः अधिक पोटैशियम चाहते हैं। पोटैशियम के अभाव में हाइड्रोकार्बन सश्लेषित करने की क्षमता कम हो जाती है। मीठ चुकन्दर में शक्कर की मात्रा कम हो जाती है, आलू में स्टार्च का अंश कम हो जाता है। छोटे पौधे पोटैशियम अधिक चाहते हैं, जहां कोशिका-विभाजन (Cell devision) अधिक तीव्रता से होता है। इस

इस तत्व की कमी से पौधा बढ़ना बन्द कर देता है, फल नहीं देता है, और अन्त में रोगी हो जाता है।

पोटैशियम के उर्वरकों में सबसे मुख्य स्थान पोटैशियम क्लोराइड और सिलविनाइट (Sylvinite), पोटैशियम क्लोराइड एवं सोडियम क्लोराइड के मिश्रणों से बनी पहाड़ी चट्टानों, से तैयार किये हुये पोटैशियम लवणों का है। पोटैशियम क्लोराइड जो उर्वरक के रूप में प्रयोग होता है, श्वेत, महीन मणिभीय पाउडर होता है। उसमें 50 प्रतिशत से ऊपर पोटैशियम रहता है।

पोटैशियम सल्फेट मे 52 प्रतिशत पोटैशियम होता है वह प्रत्येक प्रकार की मिट्टी के लिए फलप्रद होता है। और उन फसलों के लिए विशेष लाभदायक होता है जो क्लोरीन के प्रति संवेदनशील होती है, जैसे आलू, फ्लैक्स, भाँग और तम्बाकू।

पीसे हुए सिलविनाइट को भी सीधे उर्वरक के रूप मे प्रयोग किया जाता है। औसतन उसमें 15 प्रतिशत तक पोटैशियम होता है।

बहुत अर्से तक पोटैशियम लवणों का संसार का सबसे बड़ा उत्पादन क्षेत्र जर्मनी में स्ट्रासवग था। क्रान्ति के पूर्व रूस जर्मनी से प्रतिवर्ष 4·5 मिलियन पूड पोटैशियम लवण खरीदता था।

रूसी वैज्ञानिकों ने निरन्तर श्रम करके अपने देश में पोटैशियम के भण्डारों का पता लगाया। और 1912 ई० मे कामा नदी के ऊपरी भागो में 100 मीटर गहराई पर पीलापन लिए हुए खनिज प्राप्त हुआ जो सिलविनाइट-पोटैशियम क्लोराइड सिद्ध हुआ। क्रान्ति के उपरान्त अकेडेमीशियन एन. एस. कुर्नाकोव के निरीक्षण में सोलीकाम्स्क के उद्गम क्षेत्र का अनुसन्धान किया गया। वह संसार का एक महत्वपूर्ण पोटैशियम का उद्गम क्षेत्र प्रगट हुआ।

. 1927 ई० मे सोलीकाम्स्क मे खुदाई प्रारम्भ की गई और 1930 ई० में उसने सिलविनाइट के प्रथम अंश उत्पादित किये।

हाल ही में बायलो रूस के पोटैशियम लवणों के सबसे धनी क्षेत्रो मे कार्य प्रारम्भ किया गया है। यहां खनिज लवणों के बहुत बड़े भंडार पाये जाते हैं। उनका सर्वाधिक तेजी से उपयोग करने पर भी वे सैकड़ों वर्षों तक के लिये पर्याप्त होंगे। 1961 ई० में सोलीगोर्स्की उद्यम-समूह (Combine) ने कच्चा पोटैशियम लवण प्रदान किया।

पृथ्वी के पपड़े में लिथियम सोडियम की अपेक्षा 400 गुना कम है। उसने अपना नाम इस आधार पर प्राप्त किया कि वह पहले-पहले खनिज से प्राप्त हुआ था और पौधों की राख से नहीं, जिससे उस समय उसका निकट सम्बन्धी पोटैशियम प्राप्त हुआ था। ग्रीक भाषा में 'लिथियोस' का अर्थ है 'पत्थर',

तथापि, कुछ पौधे भी लिथियम अपेक्षतः अधिक मात्रा में रखते हैं। इस प्रकार, बटर कप, थिसिल, कार्नफ्लावर (वामीलीस्तनीक) में वह अन्य पौधों की अपेक्षा कई गुना अधिक होता है।

पृथ्वी के पपड़े में सायेशियम उतनी ही मात्रा में है, जितना पारा (7.10–4 प्रतिशत)। रूबीडियम सायेशियम की अपेक्षा दस गुना अधिक है। वे अनेक पहाड़ी चट्टानों मे, पोटैशियम लवणो की परतों में, सागरीय जल में, पौधों में, जीवो के शरीर में प्राप्त होते हैं। उन्हें उनके खनिजों, लेपिडोलाइट, पोलूजाइट से प्राप्त किया जाता है। रूबीडियम सागरी जीवों में संग्रहीत होता है। वह पेड़ों के कांटों मे एव लाल मदिरा में बहुत होता है। वह रक्त के लाल कार्पसुलो-एरियोसाइटों में भी सकेन्द्रित होता है। सायेशियम मांसल तंतुओं मे संचित होता है।

सोडियम तथा पोटैशियम जीवों के शरीर में अपेक्षतः अधिक मात्राओं में रहते हैं और उनमे महत्वपूर्ण, यद्यपि भिन्न-भिन्न प्रकार की, भूमिकायें अदा करते हैं।

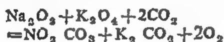
मनुष्य के शरीर में कुल 175 ग्राम पोटैशियम होता है, जिसमे कोशिकाओं से बाहर द्रवो में (प्लाज्मा, रक्त, लसीका Lymph) मेरू रज्जु द्रव में) केवल दो ग्राम से कुछ ऊपर होता है।

किन्तु सोडियम इसके विपरीत, कोशिकाओं के बाहर द्रवो में केन्द्रीभूत होता है, जहां उसकी मात्रा पोटैशियम से 28 गुना अधिक होती है। मांस तन्तुओं में सोडियम पोटैशियम की अपेक्षा 5 गुना कम होता है।

प्रौढ़ जीवों के शरीर मे पोटैशियम की मात्रा सोडियम की अपेक्षा अधिक होती है, किन्तु भ्रूण के मांस-तन्तुओं में सोडियम की मात्रा पोटैशियम से अधिक होती है, उनमे इन तत्वो का अनुपात सागरीय जल में उनके अनुपात के लगभग होता है। कुछ वैज्ञानिक इस तथ्य को सागर में जीव की प्रथमोत्पत्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण मानते हैं। ग्लाइकोजन (मधुजन) एव एल्बूमिन के संश्लेषण में भी पोटैशियम भाग लेता है। इस तत्व की कमी से मनुष्य सारे शरीर में कमजोरी अनुभव करता है, और हृदय की साधारण कार्य-क्षमता में रुकावट आती है। सोडियम, दूसरी ओर शरीर में अम्ल एवं क्षार के संतुलन को नियन्त्रित करने के लिये, ढांचे की मांस-पेशियों की क्रिया एवं हृदय की सामान्य नाड़ी स्पन्द (Pulse) कायम रखने के लिये आवश्यक होता है।

अद्भुत व्यवसाय

स्मरण कीजिये, जूल बर्न के वीरों ने भली प्रकार मुंह बन्द, 'नायुतिलीस' में, जो बर्फ के फन्दे में फंस गया था, किस प्रकार सांस ली होगी। उनको अपनी नौका की वायु से फालतू कार्बन-डाई-आक्साइड निकाल कर उसमें आक्सीजन लाना था। पर यह नहीं किया जा सकता था। हमारे समय में वायु से पुनरुद्धारण (Regeneration) की समस्या सोडियम और पोटेशियम पर आक्साइड यौगिकों की सहायता से हल कर ली गई है। सोडियम-पर-आक्साइड का पोटेशियम सुपर-पर-आक्साइड के साथ मिश्रण, कार्बन-डाई-आक्साइड का अवशोषण करता हुआ आसानी से आक्सीजन की अनुरूप (equivalent) मात्रा उन्मुक्त कर देता है :



$$Na_2O_2 + K_2O_4 + 2CO_2$$
$$= NO_2\ CO_3 + K_2\ CO_3 + 2O_2$$

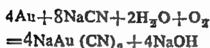
इस प्रकार मनुष्यों द्वारा सांस लेकर छोड़ी गई वायु पूर्णतः पुनरुद्धारित हो जाती है।

ये दोनों पदार्थ (सोडियम-पर-आक्साइड एवं पोटैशियम सुपर-पर-आक्साइड धातु की शुष्क आक्सीजन के प्रवाह में जलाने से प्राप्त होते हैं। बिकने वाले सोडियम पर आक्साइड का वर्ण पीतिमा लिये होता है किन्तु बहुत शुद्ध प्रतिकारक (Reagent) रंगहीन होते हैं। साधारण दशाओं में पोटैशियम सुपर पर आक्साइड तेज पीला, फूला हुआ (fleffy) मणिभीय पाउडर होता है। दोनों यौगिक अत्यन्त शक्तिशाली आक्सीकारक पदार्थ (oxidisers) हैं। पहले सोडियम पर-आक्साइड का उपयोग शक्तिशाली ब्लीचिंग पाउडर के रूप में किया जाता था। इस समय भी उसे विरंजन चूर्णों (bleaching powders) और धोने के साथ मिला कर उपयोग करते हैं।

कुछ रंगों के उत्पादन में, स्टार्च के विश्लेषण में, बारूद के उत्पादन में, कागज बनाने के कारखाने में, काष्ठ की लुब्दी को रंगहीन करने में हाइड्रोजन पर-आक्साइड स्थान ठोस प्रतिस्थापकों (Substitutes) के रूप में क्षारीय धातुओं के पर-आक्साइड ले रहे हैं।

पर-आकसाइडों का उत्पादन सोडियम और पोटेशियम के प्रमुख ग्राहकों में एक है। क्षारीय धातुओं से साइनाइडों का उत्पादन भी इस सम्बन्ध में उससे पीछे नहीं है।

साइनाइड लवणों में सोने और चांदी के जटिल घुलने वाले यौगिक बनाने की क्षमता है। 1844 ई. में रूसी वैज्ञानिक पे. एर. बाग्रातिग्रोन ने सोना और चांदी को उनके खनिजों से पृथक करने के लिये सोडियम-सायनाइड का उपयोग करने का सुझाव दिया। वायु की उपस्थिति में सोडियम-सायनाइड का घोल निम्न प्रतिक्रिया सम्पन्न करता है :



$$4Au + 8NaCN + 2H_2O + O_2$$
$$= 4NaAu(CN)_2 + 4NaOH$$

सायनाइड लवण अत्यन्त विषैले होते हैं उनको कृषि-पीड़कों के साथ संघर्ष करने में उपयोग किया जाता है। सोडियम-सायनाइड का प्रयोग फौलाद के ऊपरी धरातल के दृढ़ीकरण और प्लास्टिक, कृत्रिम रालों, वार्निशों और रंगों के उत्पादन में भी प्रयोग किया जाता है। साधारणतः सोडियम-सायनाइड 300° सेन्टीग्रेड के तापमान पर गले हुये सोडियम को शुष्क गैसीय अमोनियम के साथ शोधन (Treatment) करने के उपरान्त 800°C पर कार्बन की प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। संक्षेप में इस प्रक्रम (Process) की प्रतिक्रिया निम्न प्रकार की होती है :



$$2Na + 2NH_3 + 2C = 2NaCN + H_2$$

वर्तमान समय में धोने के साधनों के उत्पादन में सोडियम का अंश बढ़ रहा है।

इण्डिया रबर के उत्पादन में सोडियम की बड़ी मात्रा उपयोग की जाती है। कुचुक (इंडिया रबर) के बनाने का आधार डाइवाइनिल (Divinyl) होता है, किन्तु केवल उत्प्रेरक की सहायता से कुचुक में उसका बहुलीकरण (Polymerisation) हो सकता है। और सर्वोत्तम उत्प्रेरक सोडियम धातु होता है। प्रतिक्रिया, उतनी ही तीव्रता से चलती है जितना अधिक विस्तृत सोडियम का धरातल होता है, जितना अधिक डाइवाइनिल का पदार्थ उसके सम्पर्क में आता है। इस कारण से सोडियम की पतली परतें लोहे की सलाखों के ऊपरी धरातल पर लगा देते हैं। साधारणतः एक टन कुचुक के उत्पादन में तीन किलोग्राम सोडियम व्यय होता है।

किन्तु वर्तमान समय में धातु सोडियम का मुख्य अंश लेड-टेट्राइथाइल के उत्पादन में व्यय होता है, जो प्रसिद्ध एन्टी-डिटोनेटर है।

सबसे महत्वपूर्ण यौगिक

हमारा तात्पर्य क्षारीय धातुओं के हाइड्राक्साइडों अथवा कास्टिक क्षारों से है। उनको कास्टिक इसलिए कहा जाता है क्योंकि वे जीवित तन्तुओं को नष्ट

कर देते हैं यानी, खा लेते हैं। ये प्रबल क्षार होते हैं। वे जैविय तंतुओं से नमी खीच लेते हैं और अल्बुमीन से संयोग करके यौगिक बनाते हैं तंतु सूज जाते हैं। और देर तक प्रतिक्रिया होने पर जलने का दाग पड़ जाता है। कास्टिक सोडा गली हुई अवस्था मे कांच और चीनी मिट्टी के बर्तनो को खा जाता है और वायु की उपस्थिति में प्लेटीनम के बर्तनों को खा लेता है। क्षारीय धातुओं के कुल हाइड्रोक्साइड पानी मे तेजी से घुलते हैं।

व्यवहार (Practice) में कास्टिक सोडा सोडियम क्लोराइड के घोल में विद्युत्‌विश्लेषण द्वारा प्राप्त किया जाता है। कास्टिक पोटाश को पोटैसियम क्लोराइड के घोल के विद्युत्‌विश्लेषण से प्राप्त करते हैं। संसार में कास्टिक सोडा का उत्पादन कुछ मिलियन टन है वह रसायनिक उद्योगों की अनेक शाखाओं में प्रयोग किया जाता है। कास्टिक सोडा के पतला किये हुए (dilute) घोल के 140° C सेन्टीग्रेड पर वनस्पतीय पदार्थ के प्रभाव से सेलुलोज (Cellulose) प्राप्त होता है, जो उद्योग की विभिन्न शाखाओं मे महत्वपूर्ण कच्चे माल के रूप मे प्रयोग किया जाता है।

साबुन बनाने का उद्योग क्षारों की बड़ी मांग करता है। साबुन सोडियम और पोटैसियम के वसीय अम्लों (fatty acids) से प्राप्त लवण होते हैं।

ऊंची किस्म के नहाने वाले तरल साबुन और विशेष प्रकार के द्रव औषधीय साबुन बनाने में कास्टिक पोटाश का प्रयोग किया जाता है।

कार्बनिक रगो के उद्योग, टैक्सटाइल उद्योग, खनिज तेलों के परिशोधन आदि में कास्टिक क्षारों को एक बहुत बड़ी मात्रा का उपयोग किया जाता है।

सोडा और शीशा (कांच)

आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व मिश्र देश के निवासियों ने शुद्ध श्वेत रेत को सोडा तथा खड़िया के साथ पिघला कर शीशा प्राप्त किया था। प्राचीन मिश्र के निवासियो ने सोडा की झीलो से सोडा प्राप्त किया था। प्रकृति में वह उस स्थान पर बनता है जहां मिराबिलाइट (mirabilite) की तहें होती हैं। मिराबिलाइट Na_2So_4 होता है। कुछ विशेष प्रकार के बैक्टीरिया मिराबिलाइट को सोडियम सल्फाइड (Na_2S) में अवकृत (Reduce) कर देते है। कार्बनडाइ-आक्साइड तथा जल के प्रभाव से सोडियम-सल्फाइड सोडा मे परिणत हो जाता है। सोडा की झीलों के पेंदे में एवं तट पर खनिज सोडा $Na_2CO_3.NaHCO_3.2H_2O$ बन जाता है।

अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक कांच और साबुन के कारखाने, पश्चिमी योरोप के टेक्सटाइल उद्योग प्राकृतिक सोडा का उपयोग करते थे। स्पेन के भूमध्य

सागरीय तट पर क्षार रखने वाले पेड़ों को जला कर प्राप्त सोडा का सर्वाधिक उपयोग किया जाता था।

रूस में अठारहवीं शताब्दी में काफी बड़ी मात्रा में पोटाश K_2CO_3 तैयार किया जाता था वह भी शीशे (कांच के उद्योग में प्रयुक्त होता था, एक पूड (36 पौंड या 16.38 किलोग्राम) पोटाश प्राप्त करने के लिये 120 वर्गमीटर क्षेत्र का जंगल जलाना पड़ता था। अस्त्राखान और स्पेन का सोडा भी मशहूर माना था।

वनस्पतीय पदार्थों से सोडा प्राप्त करने की विधि अठारहवीं शताब्दी के अन्त में पुरानी एवं दकियानूसी हो गई थी। इस विधि से प्राप्त सबसे अच्छे किस्म के सोडा–स्पेन के आरीला सोडा—में केवल 25–30 प्रतिशत मूलभूत पदार्थ (सोडा) होता था।

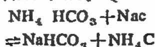
अठारहवीं शताब्दी के मध्य में कांच, साबुन एवं कपड़े के उद्योगों की मांगों को सोडा उद्योग पूरा नहीं कर पा रहा था। 1775 ई० में पेरिस की विज्ञान परिषद ने रसोई के नमक Nacl से सोडा उत्पादन करने की विधि निकालने के लिये प्रतियोगिता घोषित की। 15 वर्षों बाद पेरिस के लेख्य–प्रमाणक (Notary) को एक लिफाफा मिला, जिसमें ग्लाबर साल्ट Na_2SO_4 से कृत्रिम सोडा उत्पादन करने की विधि का वर्णन था। इस पेटेन्ट (Patent) का अन्वेषक रसायन प्रेमी लेब्लान था, जो ओर्लेअ के ड्यूक का घरेलू डाक्टर था। उसकी विधि के अनुसार ग्लाबर लवण, जो रसोई के नमक पर सल्फरिक अम्ल के प्रभाव के फलस्वरूप प्राप्त होता था 1000°C के तापमान पर कार्बन तथा कैल्शियम-कार्बोनेट के साथ गल कर अल्याव बन जाता था।

सोडा के अल्याव को कैल्शियम–सल्फाइड के साथ विक्षालित (lixiviate) करते हैं, अर्थात् उसको पानी से व्यवहृत करते हैं। सोडा घोल के रूप में पृथक हो जाता है।

लेब्लान की विधि से उन्नीसवीं शताब्दी के सत्तर वर्षों तक सोडा प्राप्त किया गया। कपड़े खिड़की के शीशों और साबुन के दाम आधे हो गये। लेब्लान के समय तक खिड़की के शीशे फ्रांस में विलास (Luxury) की वस्तु समझे जाते थे। किन्तु यह विधि बहुत अधिक आदर्श नहीं कही जा सकती थी इसमें रद्दीमाल (Scrap) बहुत निकलती थी। ईंधन की बहुत बड़ी मात्रा व्यय होती थी, मशीन अत्यधिक बड़ी होती थी, प्रतिक्रिया मुख्यत: ठोस पदार्थों में ही चलती थी।

1861 ई. में बेल्जियम के उद्योग पति सोल्वे ने सोडा उत्पादन की अमोनियम विधि का सुझाव उपस्थित किया। यह विधि, जो अधिक सस्ती और सरल थी, लेब्लान विधि की कमियों से मुक्त थी, रसोई के नमक Nacl के घोल

में अमोनिया और अधिकता में कार्बन डाइ-आक्साइड समाविष्ट किया जाता है। बनने वाली अमोनियम-बाई-कार्बोनेट, विनिमय (आदान प्रदान की) अभिक्रिया करती हुई सोडियम-बाई-कार्बोनेट में परिणत हो जाती है :



$$NH_4\ HCO_3 + Nac$$
$$\rightleftharpoons NaHCO_3 + NH_4C$$

गर्म करने से सोडियम-बाई-कार्बोनेट सरलता से सोडियम-कार्बोनेट यानी सोडा में परिणत हो जाता है।

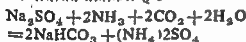


$$2Na\ HCO_3 = Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

Na_2CO_3 अजल सोडियम-कार्बोनेट के रूप में बिकता है, जिसे कैल्शियमाइण्ड सोडा कहा जाता है।

हमारे समय में सोल्वे की विधि से विशाल मात्राओं में सोडा उत्पादित किया जाता है। सारे संसार में प्रतिवर्ष सोडा का उत्पादन कुछ मिलियन टन है।

अमोनियम विधि अच्छी है किन्तु कमियों से रहित नहीं है। इस विधि में सोडियम-क्लोराइड पूरा इस्तेमाल नहीं हो पाता है, कार्बन-डाई-आक्साइड गैस अमोनियम और चूना बेकार जाते हैं। 1939 ई० में सोवियत वैज्ञानिक अ. पे. बेलोपोलस्की ने मिराबिलाइट से सोडा उत्पादन करने की विधि निकाली। यह विधि पहले ही से कच्चे माल के जटिल उपयोग की अपेक्षा करती है। इसका आधार निम्नलिखित प्रतिक्रिया है :



$$Na_2SO_4 + 2NH_3 + 2CO_2 + 2H_2O$$
$$= 2NaHCO_3 + (NH_4)2SO_4$$

एक साथ दो मूल्यवान पदार्थ प्राप्त होते हैं—सोडा और अमोनियम-सल्फेट। बेलोपोलस्की की विधि ने अभी औद्योगिक उत्पादन में स्थान नहीं पाया है।

कुल सोडा का पांचवां भाग कास्टिक सोडा के बनाने में उपयोग किया जाता है लगभग $\frac{1}{5}$ भाग अल्युमिनियम के उत्पादन में जाता है। बाक्साइट खनिज से अल्युमिनियम-आक्साईड प्राप्त करने के लिए उसे सोडा द्वारा व्यवहृत किया जाता है।

सोडा बनाने के प्रक्रम में जो मध्यवर्ती उपज सोडियम-बाई-कार्बोनेट की होती है उसे औषधि बनाने और खाने के उद्योग में प्रयोग किया जाता है। पेय सोडा, जैसा कि उसे दैनिक जीवन में साधारणतः कहा जाता है, को बहुत शुद्ध होना आवश्यक होता है ताकि उसमें विषैली मिलावटें संखिया आदि न रह जायें।

कुल प्राप्त होने वाले सोडा के एक तिहाई भाग से ऊपर कांच के उद्योग में इस्तेमाल होता है।

क्षारीय मिट्टी के तत्व

धातु कैल्शियम और उसके अनुरूप तत्व-स्ट्रान्शियम, एवं बेरियम – सर्व प्रथम आज से केवल लगभग 150 वर्ष पूर्व प्राप्त हुए, पर कैल्शियम के यौगिक अत्यन्त प्राचीन काल से मानव की सेवा कर रहे हैं।

कैल्शियम की अपेक्षा स्ट्रान्शियम, एवं बेरियम तथा उनके यौगिकों का कहीं अधिक कम महत्व था और आज भी कम महत्व है।

रेडियम अपने रसायनिक गुणों में क्षारीय मिट्टी के तत्वों के वर्ग से ही जिसके बारे में चर्चा चल रही है सम्बन्ध रखता है, किन्तु इस तत्व को विज्ञान में नये युग का प्रवर्तक, उसके रसायनिक गुणों ने नहीं, बल्कि उसकी रेडियो सक्रियता ने बनाया है।

मिट्टी या तत्व

कैल्शियम, स्टाशियम और बेरियम के लिये "क्षारीय मिट्टियों के तत्वों की संज्ञा उस समय से चली आ रही है, जब हम सब उन यौगिकों को, जिनको आज आक्साइडें कहा जाता है, मिट्टियो के नाम से सम्बोधित करते थे। ये पदार्थ गर्म करने से परिवर्तित नहीं होते थे, पानी में बहुत कम घुलते थे और जो घोल मिलता था वह क्षारीय होता था। उस समय की धारणा के अनुसार यही मिट्टियों के गुण समझे जाते थे।

चूने की मिट्टी कैल्शियम-आक्साइड से मानव अति प्राचीन काल से परिचित है। कार्बन-डाइ-आक्साइड से संयोजित होने की इसकी क्षमता के कारण, तथा उसके अनेक अम्लो के साथ संयोजित होने और साथ ही प्रतिक्रिया करके अघुलन शील लवण देने के कारण कैल्शियम-आक्साइड को भी 'मिट्टियों का सम्बन्धी' कहा गया। किन्तु स्ट्रान्शियम और बेरियम के यौगिक, रसायन शास्त्रियो के हाथ मे अपेक्षतया बहुत बाद मे आज से लगभग 190 वर्ष पूर्व आये। 1774 ई. मे शीले ने प्राकृतिक मैगनीज-डाइ-आक्साइड—पाइरोल्यूसाइट (Pyrolusite)—का अनुसन्धान किया और ज्ञात किया कि उसमे कोई उस समय तक अज्ञात, ऊँचे विशिष्ट गुरुत्व का पदार्थ विद्यमान है, जिसे भारी कान्त (Heavy Spar) अथवा बेराइटिस (Barytes) का नाम दिया गया। बेराइटिस नाम ग्रीक भाषा के शब्द "बारुस" से लिया गया है जिसका अर्थ है भारी या भार। और तीस वर्षों के अनन्तर स्काटलैंड में, स्ट्रांशेन ग्राम के निकट दूसरा उसी प्रकार का पदार्थ स्ट्रान्शियानाइट (Strontianite) प्राप्त हुआ। बाद को यह प्रतिपादित हुआ कि वैज्ञानिकों को इस पदार्थ मे बेरियम और स्ट्रान्शियम के सल्फेट मिले थे और पिछले तत्व स्ट्रॉशियम को, जैसा कि स्वयं विदित है, उसको प्रथम भौगोलिक उत्पत्ति के आधार पर नाम प्राप्त हुआ।

अठारहवीं शताब्दी के अंत तक जो विधियाँ विज्ञान में प्रयोग की जाती थी उनके द्वारा 'मिट्टियों' को और अधिक सरल पदार्थों में तोड़ना असम्भव था। इसलिये अन्तुआन लवाजियेर ने 'रसायन का प्रारम्भिक ज्ञान' नाम की अपनी पुस्तक में 1789 ई. मे Ca O, Sr O, Ba O, को तत्वों की श्रेणी में रखा था। फिर भी उसने उसी समय कह दिया था कि यह धारणा अवश्य बदलेगी और विज्ञान को हठी "मिट्टियों" को सरलतम पदार्थों मे तोड़ने की विधि प्राप्त होगी, लवाजियेर सही साबित हुआ।

अनुसन्धान मे नई विधियों का प्रयोग सदैव विज्ञान में क्रान्तिकारी विकास लाता है। ऐसा ही इस समय भी हुआ जब अंग्रेज वैज्ञानिक हेनरी डेवी ने 1808 ई. में सर्वप्रथम विद्युत धारा का प्रयोग रासायनिक पदार्थों पर उसका प्रभाव जानने के लिये किया। "मिट्टियों" के ऊपर आक्रमण ने, जिससे अन्य प्रख्यात वैज्ञानिक बेर्जेलियूस भी भाग ले रहा था, अद्भुत विजयें प्राप्त कीं। मिट्टियो मे एक के बाद दूसरे शुद्ध तत्व निकलने लगे—बेरियम, स्ट्राँशियम, और कैल्शियम इसीलिए कहा गया क्योंकि फ्रेंच भाषा में काल्क का अर्थ चूना होता है।)

यह स्पष्ट हुआ कि क्यों शुद्ध क्षारीय मिट्टी के तत्व प्रकृति मे नहीं मिलते हैं, क्योंकि वे मनुष्य को सरलता से नहीं उपलब्ध होते हैं। वे इतने सक्रिय होते हैं कि अक्षरशः वायु के सब अंशों से (निष्क्रिय गैसों को छोड़कर) नाइट्रोजन तक से संयोजित होते हैं।

प्रायः हमारे मस्तिष्क में धातु मुख्यतः स्थायी, कठोर, दृढ़ बनावट वाला पदार्थ होता है। किन्तु धातुओं के विस्तृत परिवार में अत्यन्त सक्रिय और नितांत निष्क्रिय, पानी से भी हल्के और पारा से भी भारी धातु प्राप्त होते हैं। धातुओं के गुणों की विविधताओं का चित्र वास्तव मे अनन्त है।

कैल्शियम, स्ट्राँशियम तथा बेरियम निकटतम सम्बन्धी हैं, तथापि, कैल्शियम अपने अपने व्यवहारों में इस परिवार से पृथकता प्रकट करता है और सबसे पहले इस बात में कि वह अत्यन्त विस्तृत रूप मे प्रकृति मे फैला है।

कैल्शियम और पृथ्वी का पपड़ा

कैल्शियम सिलिकेट चट्टानों का अनिवार्य अंग है, जो पृथ्वी के पपड़े में प्राप्त खनिजों में सबसे बड़ा समूह बनाती हैं। इससे अपेक्षतया कम मात्रा मे वह कैल्शियम कार्बोनेट $CaCO_3$ अथवा कैल्शियम सल्फेट $CaSO_4$ के रूप में प्राप्त होता हैं। इससे भी कम मात्रा मे वह कैल्शियम फास्फेट $Ca_3\ (PO_4)_2$ के रूप में मिलता है।

किन्तु कैल्शियम के इन यौगिकों के बारे में विस्तृत रूप से वर्णन करना आवश्यक है।

प्राकृतिक कैल्शियम-कार्बोनेट असाधारण रूप से बहु स्वरूपीय यौगिक होता है। सब से पहले मणिओं की बनावट के आधार पर कैल्शियम-कार्बोनेट दो प्रकार के खनिज बनाता है—कैल्साईट (calcite) और आरागोनाईट (aragonite)।

आराकोनाईट, विशेषकर, सौन्दर्य की दृष्टि से प्रकृति की असामान्य सृष्टि, स्टैलैक्टाईट (Stalactite) तथा स्टैलैग्माईट (Stalagmite) को निर्माण करने वाला पदार्थ होता है, जिनमें कभी-कभी प्राकृतिक कन्दरायें परिपूर्ण पाई जाती हैं।

कैल्साइट कई किस्मों में पाया जाता है। पाठकों में से बहुतों ने वोल्गा तथा दूसरी नदियों के किनारे खड़िया की वर्तमान पहाड़ियां देखी होंगी। खड़िया अत्यन्त सूक्ष्म सीपियों से बनी होती है और कभी-कभी कुछ चूने के पत्थरों के ढेर बड़ी सीपियों से बने होते हैं, जो प्रत्यक्ष आंखों से देखी जा सकती है। खड़िया (चाक) और चूने के पत्थर कैल्साइट के सबसे अधिक विस्तृत रूप में प्राप्त होने वाले स्वरूप हैं। संगमरमर भी अपनी रासायनिक बनावट से कैल्शियम-कार्बोनेट होता है और मणिओं की रचना के दृष्टिकोण से कैल्साइट होता है। किन्तु चूने के पत्थर एवं खड़िया की तुलना में उसकी प्रकृति में बनने की परिस्थितियां दूसरी होती हैं जिनके कारण वह बाह्य स्वरूप में भी और गुणों में भी कैल्साइट की अन्य किस्मों में भिन्नता रखता है। इस बहु स्वरूपीय यौगिक का एक अन्य स्वरूप भी है—'आइसलैंड का स्पार,—कहलाने वाला स्वरूप। उसके मणिभ पारदर्शी होते हैं। और एक दिलचस्प गुण प्रकट करते हैं, जिसे भौतिक-शास्त्र में 'द्विधावर्तन, (Double refraction) कहा जाता है।

पृथ्वी के स्थल भाग में चूने के पत्थरों की परतों का कुल क्षेत्र 40 मिलीयन वर्ग किलोमीटर है। सोवियत संघ के क्षेत्र का दोगुना क्षेत्र यह होता है।

कैल्शियम के भौगर्भीय इतिहास के पृष्ठ

जर्मन भूरसायन-शास्त्री, गोल्डस्मिथ की धारणाओं के अनुसार पृथ्वी के ऊपर पपड़े की तुलना ब्लास्ट फर्नेस (Blast furnace) में पिघले हुए लोहे के ऊपर स्थित धातुमल से दी जा सकती है। यद्यपि यह तुलना, निस्सन्देह, पूरी तौर से ठीक नहीं होती है, फिर भी, पृथ्वी का पपड़ा और पिघलाऊ भट्टे का धातुमल दोनों कैल्सियम, सोडियम, और पोटेशियम के सिलिकन, अल्युमिनियम, और आक्सीजन के साथ अपेक्षाकृत हल्के यौगिकों—अल्युमिनो-सिलिकेटों और सिलिकेटों—से बने होते हैं। यह अकारण ही नहीं है कि पृथ्वी की बाह्य परत को कभी-कभी सिअल (Sial) कहा जाता है जो (Si) से सिलिकन तथा अल (Al) से अल्युमिनियम की प्रधानता व्यक्त करता है, किन्तु इन यौगिकों में मैग्नीशियम बेरियम, बेरियम और स्ट्राँशियम भी होते हैं।

यदि हम अपने ग्रह की किशोरावस्था में उसे देख सकें तो हम उसके पपड़े में अपनी सुपरिचित कार्बोनेट की चट्टानें चूने के प्रस्तर आदि न पायेंगे। कारण यह है कि ये चट्टानें अल्यूमिनो सिलिकेटो से बहुत कम उम्र की हैं।

गत भोगर्भीय युगो के ज्वालामुखियों की तूफानी सक्रियता ने पृथ्वी के वायुमण्डल को कार्बन-डाई-आक्साइड से संतृप्त कर दिया था। प्रचुर मात्रा में कार्बन-डाई-आक्साईड रखने वाला ऊष्म एवं वायु मडल, ग्रैनाइट गिरि-पिण्डों की प्रत्येक दराज मे घूमते हुए गर्म जल की धाराओं, ने मिलियर्डों (अरबों) वर्षों में कैल्शियम तथा अन्य धातुओं को कैद से बाहर निकालते हुए, सिलिकेटों और अल्यूमिनो सिलिकेटो की विशाल मात्राओं को अघुलनशील यौगिकों-चिकनी मिट्टी व रेत मे परिणत करते हुए और कैल्शियम और उसके हमराहियों को अपेक्षतया अधिक घुलने वाले यौगिकों—कार्बोनेटो अथवा सल्फेटों—के रूप में साथ लेते हुए अपना विध्वंसकारी कार्य सम्पन्न किया। निस्सन्देह, अल्युमिनों-सिलिकेटों के विध्वंस की क्रिया क्षणिक नही थी। केवल कहानियो मे ही पहाड़ों को 'टुकड़े टुकड़े हो जाओ' कहते हुए क्षणमात्र में रेत में बदल देना सम्भव हो सकता। पर सैंकड़ों मिलियन वर्षों में विध्वंस की धीमी गति ने भी अपने को गुणित (multiply) करते हुए अपना विध्वंसकारी कार्य सम्पन्न किया।

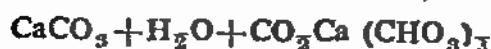
पृथ्वी पर जीवन के आविर्भाव के समय से कैल्शियम के इतिहास में जीवन-धारियों ने भी अपनी भूमिका अदा करना प्रारम्भ कर दी।

हम पहले ही बता चुके हैं कि अल्युमिनो सिलिकेटों से कार्बोनेटो व सल्फेटों के बनाने की कैल्शियम की चाल बड़ी धीमी होती है। किन्तु प्रकृति में एक अपेक्षाकृत तेज गति भी विद्यमान है जिसमे कैल्शियम और कैल्शियम का चक्र (जैसा कि प्रकृति में विद्यमान कैल्शियम के चक्र को सर्वसम्मति से कहा जाता है) भाग लेते हैं।

चक्र है या नहीं ?

कोई ऐसा जलाशय न मिलेगा जिसमें कैल्शियम के लवण न घुले हों। ये लवण तग खाडियों और खनिज स्रोतों के पानी में अधिकता से प्राप्त होते हैं। समुद्र में कैल्शियम के लवणों का अंश 1·6 प्रतिशत होता है और उसके सबसे प्रमुख साथी कार्बन और गन्धक होते हैं (CO_3^{2-}, SO_4^{2-} आयनो के रूप में)।

कैल्शियम के 'भ्रमण' की विशेषताओं को ठीक से समझने के लिए हमे कैल्शियम कार्बोनेट के पानी के घोलों में उपस्थित संतुलन को अध्ययन करना होगा—



$$CaCO_3 + H_2O + CO_2 Ca(CHO_3)_2$$

जब चूने के पत्थर मे कार्बन डाइ-आक्साइड से संतृप्त जल प्रवेश करता

है, तो उपरोक्त प्रतिक्रिया का संतुलन (Equilibrium) दाहिनी ओर घुलनशील कॅल्शियम-बाइ-कार्बोनेट बनाने की ओर झुक जाता है, इसका अर्थ है कि कम घुलने वाला $CaCO_3$ घुलनशील लवण में परिवर्तित हो जाता है और पानी के घोल मे चला जाता है। यही लवण (जो कभी किसी के हाथ में नहीं देखा गया है, क्योंकि वह केवल घोल की दशा में ही रह सकता है) प्रकृति में कॅल्शियम के 'भ्रमण' को सबसे महत्वपूर्ण कड़ी बनाता है।

प्रतीत होता है कि हमारा तर्क अत्यन्त अधिक सैद्धान्तिक है : पर क्या कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस पानी में ज्यादा घुलती है ? पानी अपने साथ कितना कॅल्शियम ले जा सकता है ? किन्तु यह बेकार ही नहीं कहा गया है कि बूंद-बूंद करके घड़ा भर जाता है : प्रतिवर्ष नदियां समुद्रों और महासागरों में 600 मिलियन टन कॅल्शियम ले जाती हैं।

महासागर के गर्म जल में कार्बन-डाइ-आक्साइड की घुलनशीलता कम हो जाती है और उसका एक अंश गैस के रूप में उड़ जाता है। टूटे हुए सन्तुलन को पुनर्स्थापित करने के लिये बाइकार्बोनेट "फालतू" कार्बन-डाइ-आक्साइड अणु विमुक्त कर देता है और साधारण अघुलनशील कॅल्शियम कार्बोनेट $CaCO_3$ में परिणत होता हुआ अवक्षेपित (*Precipitate*) हो जाता है (हमारी प्रतिक्रिया के सन्तुलन की सुई बाईं ओर "घूम" जाती है)। इस प्रकार महासागरों के पेंदो मे चूने के पत्थरों की विशाल तहें जमती रहती हैं। स्पष्ट है कि क्योंकि चट्टानें तलछटी शैल (*Sedimentary Rocks*) की श्रेणी की हैं और चूंकि अवपतन रसायनिक क्रिया से होता है इसलिये इन चट्टानों को रसायनिक उत्पत्ति वाली चट्टानें कहा जाता है। यदि कॅल्शियम कार्बोनेट के साथ-साथ मैगनीशियम-कार्बोनेट भी अपपतित होता है तो डोलोमाइट ($CaCO_3$ $MgCO_3$) की परतें जमती हैं।

पर, बाईं कार्बोनेट जीवित शरीरों के कार्यों से, जैव-क्रियाओं द्वारा भी चूने की चट्टानो में परिवर्तित हो सकता है। असंख्य सागरीय जीवधारी अपने कठोर आवरणों को बनाने के लिये, पानी में उपस्थित बाइ-कार्बोनेट को विघटित करते हुए, कॅल्शियम-कार्बोनेट का इस्तेमाल करते हैं। इन जीवधारियों की मृत्यु के पश्चात् कठोर आवरण सागरो के पेन्दे में जमा होता रहता है। इस प्रकार की रचनायें मिलियनों वर्ष चलती हुई खड़िया एवं शंखों और सीपियों की चट्टानें देती है।

वलनिक उच्चावचन (*Orogenesis*) की क्रियायें उनको समुद्र के धरातल से ऊपर उठाती हैं। ऊंचे तापमानों और दबावों की दशाओं में रहकर चूने की चट्टानें घनी हो जाती हैं और अपना ढांचा बदलते हुए संगमरमर में परिणत हो

जाती हैं। यह कायान्तरित शैल (Metamorphic Rocks) होते हैं (मेटामार्फोसिस का अर्थ है रूपान्तरण) समुद्र से ऊपर उठ कर चूने की चट्टानें पुनः पानी, कार्बन-डाइ-ग्राक्साइड गैस एवं ऊष्मा का आक्रमण सहन करते हैं और कैल्शियम के भ्रमण का दूसरा अन्तहीन चक्र प्रारम्भ होता है। यही है जिससे प्रकृति में कैल्शियम के चक्र की बात कभी-कभी कही जाती है।

किन्तु स्मरण कीजिये कि कैल्शियम की मात्रा अल्यूमिनो-सिलिकेटों के विध्वंस से प्रारम्भ हुई थी और कैल्शियम फिर लौट कर कभी अल्युमिनो सिलेकेटों का रूप नहीं ग्रहण करता है। इसका अर्थ यह है कि यह क्रिया अनुत्क्रमणीय (Interveısible) होती है और वह जिसे हम साईकिल, चक्र अथवा चरखी वाली क्रिया का नाम देते है, केवल सुनिश्चित भौगर्भीय अवधि का ही गुण व्यक्त करता है।

कैल्शियम, इसके अतिरिक्त, कार्बन के चक्र में भी विशाल भूमिका अदा करता है : तलछटी शैलों (Sedimentary Rocks) मे पृथ्वी के पपड़े 99.82 प्रतिशत कार्बन विद्यमान होता है जिसका अर्थ है कि वह काफी बड़े अंश में कैल्शियम से ही सम्बन्धित होता है।

यदि यह कल्पना कर ली जावे कि वनस्पति और जीव जगत अपनी जैवीय प्रक्रियाओं-प्रज्वलन एवं अन्य क्रियाओं—वायु मण्डल में कार्बन-डाई-ग्राक्साइड की सम्पूर्ति नहीं करेगा तो मौजूदा कुल कार्बन-डाई-ग्राक्साइड को कैल्शियम एवं अन्त धातुओं से संयोजित होने में केवल 1800 वर्ष लगेंगे।

अच्छा, कैल्शियम के करीब सम्बन्धियों—बेरियम और स्ट्रान्शियम—का क्या हाल है ? उनका भाग्य भी कैल्शियम के अनुरूप ही है। ये तत्व भी सल्फेटों और कार्बोनेटों के रूप में पानी में अवक्षेपित हो जाते हैं और तलछटी शैलों (Sedimentary rocks) का निर्माण करते हैं। साधारणतः वे भी उन्हीं मार्गों का अनुसरण करते हैं जिनका कैल्शियम करता है।

निर्माण करने वाला तत्व

जब मानव ने प्रकृति दत्त सुविधाओं से असंतुष्ट होते हुए अपने लिये प्रस्तरों के आवास-स्थान बनाना आरम्भ किया, तो मालूम होता है कि सर्वप्रथम निर्माण करने वाले पदार्थ के रूप में चूने की चट्टानों का प्रयोग किया। अवश्य ही, अन्य कठोर चट्टानों की अपेक्षा चूने का प्रस्तर अधिक मात्रा में प्राप्त होता है और चट्टानों की अपेक्षा अधिक सरलता से कार्य करने योग्य होता है।

मिस्र के प्रख्यात पिरामिडों का निर्माण चूने के शिलापट्टों से ही किया गया था। सोवियत संघ के दक्षिण के नगर जैसे ओडेसा, एवपातोरिया,-चूने के पत्थरों

से बनाये गये थे। और मास्को—आप जानते ही हैं कि उसे श्वेत प्रस्तर का नगर इसलिए कहा जाता था क्योंकि उसकी दीवालें मास्को के निकट प्राप्त होने वाले चूने के पत्थरों से बनी थी।

प्राचीन कालीन प्रस्त्र पत्थरों को एक दूसरे से बगैर किसी पदार्थ की सहायता से जोड़े हुए या बांध हुए बनाये जाते थे। जोड़ की दृढ़ता पत्थरों की घिसाई और आदर्श फिटिंग (Fitting) द्वारा लाई जाती थी। यह कल्पना करना भी कठिन है कि इसे पूरा करने के लिये कितनी चरम निपुणता की आवश्यकता थी। मनुष्य ने बहुत बाद में जोड़ने वाले पदार्थ तैयार करना प्रारम्भ किया है। और इसके लिये भी कैल्शियम ही उसकी सहायता में आया।

यह प्राकृतिक जिप्सम $CaSO_4 \cdot 2H_2O$ 150°C तक गर्म किया जावे, तो उसका मणिभीकरण जल (water of crysrallisation) अंशतः पृथक हो जावेगा। प्राप्त होने वाला हाइड्रेट जिसमें मणिभीकरण जल की मात्रा कम हो जाती है, $2CaSO_4H_2O$ पुनः अपने खोये हुए जलीय अंश को लेने की क्षमता रखता है। व्यवहार में इस जले हुए जैसा कि उसे कहा जाता है जिप्सम अथवा सिलखड़ी (प्लास्टर) को पानी में घंघोलते हैं, और प्राप्त होने वाला पदार्थ प्लास्टर आदि के कामों में जुड़ाई करने वाले पदार्थ के रूप में इस्तेमाल होता है। जितनी ही अधिक मात्रा में पानी मणिभीय हाइड्रेट के अणु में प्रवेश कर जाता है उतनी ही अधिक मात्रा में पदार्थ में दृढ़ता आती है।

यदि जिप्सम को 500°C से ऊपर गर्म किया जावे तो वह पूर्णतः निर्जलित (dehydrated) हो जावेगा और पुनः जलीय अणुओं को अपने में लेने की उसकी क्षमता समाप्त हो जावेगी। इसलिए ऐसे जिप्सम को मृतः जिप्सम की संज्ञा दी गई है। यदि उसे गर्म करना जारी रखा जाये तो 1000°C पर और उसके ऊपर एक नया जुड़ाई करने वाला पदार्थ बनता है जिसे हाइड्रॉलिक जिप्सम (hydraulic cement) के नाम से पुकारा जाता है। यह अत्यन्त जटिल पदार्थ होता है। इतने ऊंचे तापमान पर टेम्परिंग करने से न केवल उससे जलपूर्ण रूप से निकल जाता है बल्कि अंशतः सल्फूरिक ऐनहाइड्राइड भी निकल जावेगा जो जलीय अंश की अपेक्षा अणु से अधिक शक्ति से जुड़ा होता है। इस समय ऐसा लवण प्राप्त होता है जिसमें मूल कैल्शियम-आक्साइड की मात्रा एसिडिकआक्सा-इड SO_3 की मात्रा से अधिक हो जाती है। साधारण $CaSO_3$ लवण अब नहीं रह जाता है उसकी मूल बनावट का निकटतम फार्मूला निम्न प्रकार दिया जा सकता है : $Ca\,SO_4 Y\,CaO$·

यदि हाइड्रालिक जिप्सम में पानी डाला जाये तो वह पुनः पानी से संयुक्त हो कर मूल $CaSO_4$ लवण बनायेगा। इस प्रकार बनने वाले मणिभ एक दूसरे से अन्तर्ग्रंथन करते हुए अत्यन्त दृढ पदार्थ बनाते हैं, जिस पर पानी का कोई

प्रभाव नहीं पड़ता है। (आखिर उसे 'हाइड्रालिक-जिप्सम' इस कारण ही नहीं कहा गया है) । तापमानों के कम्पनो (vibrations) का भी उस पर कोई प्रभाव नही पड़ता है। यह जुड़ाई करने वाला पदार्थ मनुष्य को अति प्राचीन काल से ज्ञात है। मिश्र में अब से 4 हजार वर्ष पूर्व इसका प्रयोग किया जाता था।

मानव प्राचीन काल से चूने का भी प्रयोग जुड़ाई करने वाले पदार्थ के रूप में करता आया है। हमारे समय में प्रतिवर्ष दसियों मिलियन टन चूना व्यय होता है चूना तैयार करने के लिए बड़ी-बड़ी भट्टियों में चूने के पत्थरों को लगभग 900°C के तापमान पर जलाया जाता है। चूने को जुड़ाई करने वाले पदार्थ में परिणत करने के लिए उसे पानी से बुझाते हैं।



$$CaO + H_2O = Ca(OH)_2$$

यदि पानी बहुतायत में डाल दिया जाता है तो 'चूने का पानी' बन जाता है। यदि उसमें रेत मिलाते हैं और इस प्रकार मिलाने वाला पदार्थ (कारीगर इसे गारा कहते हैं) भवन-निर्माणों में पत्थरों और ईंटों के जोड़ने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

इस पदार्थ में किस प्रकार पकड़ने की शक्ति एवं दृढ़ता पैदा होती है? इस कार्य में वायुमण्डलीय कार्बन-डाई-आक्साइड का अवशोषण मुख्य भूमिका अदा करता है।



$$Ca(OH)_2 + CO_2 = CaCO_3 + H_2O$$

अंशतः पदार्थ में उपस्थित रेत द्वारा सिलिकेटों का भी निर्माण होता है :



$$Ca(OH)_2 + SiO = Ci\ SiO_3 + H_2O$$

यह समझ लेना आसान है कि क्यों चूने के गारे में कठोरता धीमे-धीमे आती है: एक तो वायु में अधिक मात्रा में इकट्ठा CO_2 नहीं मिल पाती है, दूसरे, जो अधिक मुख्य है यह है कि कार्बनडाई-आक्साईड के अवशोषण के साथ पानी उन्मुक्त होता है जिसके सूखने के लिए काफी समय चाहिए। यह सही है कि कठोर हो जाने के बाद भी चूने की दृढ़ता बहुत ऊंची नहीं होती है।

हमारे समय के सर्व-प्रमुख जुड़ाई करने वाले पदार्थ, सीमेंट में ये कमियां नहीं होती हैं। यह मूलतः सिलिकेटों अथवा अल्यूमिनेटों का मिश्रण होता है। सीमेंट बनाने के लिये चूने के पत्थर (CaO के स्रोत) तथा मिट्टी (एसिडिक आक्साइडो SiO_2 एवं Al_2O_3 के स्रोत) को कच्चे माल के रूप में इस्तेमाल करते हैं। कच्चे माल को ध्यान पूर्वक महीन कूट लेते हैं और धीमे-धीमे हल्की झुकी हुई, घूमती हुई, भट्टी में डालते हैं जिसमें दूसरी ओर से ईंधन के रूप में कोयले का चूरा या गैस धारावत् प्रविष्ट किया जाता है। ये भट्टियां काफी विशाल आकारों की होती है–150 मीटर लम्बी और 3.6 मीटर व्यास वाली। ऐसी भट्टियाँ एक घंटे में 23 टन तक सीमेंट दे सकती हैं।

भट्टी मे ईंधन जलने के समय तापमान 1500^0C तक पहुंच जाता है। प्रारम्भिक मिश्रण धीमे-धीमे सरकता है और जलता है। चूने का पत्थर विघटित होते हुए कॅलशियम आक्साइड (CaO) बनाता है। कॅलशियम की आक्साइड मिट्टी के अगभूत अंशो से प्रतिक्रिया करती हैं और कॅलशियम के सिलिकेट एव अल्यूमिनेट प्रदान करती हैं। विदलित (Crumpled) उपज-किसट्टर (Clinker)-को ठंडा करते हैं और पीसते हैं, जिसके बाद हरीतिमा लिये भूरा सीमेंट का पावडर प्राप्त होता हैं। इस प्रकार प्राप्त सिलिकेटों की सीमेट में CaO (लगभग 60 प्रतिशत), SiO_2 (25 प्रतिशत), Al_2O_3 (लगभग 10 प्रतिशत) तथा Fe_2O_3 (लगभग 5 प्रतिशत होते हैं।

कभी-कभी प्रारम्भिक कच्चे माल के रूप में चूने का पत्थर न लेकर जिप्सम के साथ कार्बन और प्राम सोर से मिट्टी (clay) मिलाकर प्रयोग करते हैं। इस मिश्रण को भी जलाने से सीमेंट प्राप्त होती हैं किन्तु निकलने वाली गैसो में गंधकीय (सल्फर-डाइ-आक्साइड गैस) होती है जो जिप्सम से बनती है और जो साथ ही साथ उसी समय सल्फूरिक एसिड (गधकीय अम्ल) के बनाने में इस्तेमाल की जा सकती हैं।

आधुनिक भवन-निर्माण में सीमेंट की बहुत बडी मांग हैं। सब से पहले: उसे पानी से मिलाये जाने पर अच्छी पकड देनी चाहिये। किन्तु, यह पकड़न, 'तात्कालिक' भी नही होनी चाहिये क्योंकि गारे को काम करने वाले स्थान तक ले जाना और वहां उसे लगाना आवश्यक होता है। तकनीकी परिस्थितियां अनुबन्धित करती हैं कि सीमेंट का कठोर होना गारा बनाये जाने के 45-60 मिनट के बाद प्रारम्भ होना चाहिये। यह भी अनुमति नहीं दी जा सकती हैं कि क्रिया बहुत विलम्ब से चले। यदि पकड़न 12 घंटों में आ जाती है तो इसे साधारण दशा माना जाता है, इसके बाद आगे भी पदार्थ की दृढ़ता बढती रहती हैं।

सीमेट की उत्तमता अथवा उसकी किस्म निर्धारित करने के लिये लगाये गये (इस्तेमाल किये गये) सीमेंटीय पदार्थ को चार महीने बाद दबाव सहन कराया जाता है। सिलेकेटीय सीमेंटो की अच्छी किस्मे 600 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर तक का बोझ सहन कर लेती है।

सीमेट के गारे के कठोर होने की क्रिया मे भी सिलखड़ी (प्लास्टर) की पकड़न (कठोरता से जकड़ने) की दशायें उपस्थित होती हैं। कॅलशियम सिलिकेट पानी से संयोजित होते हुए कठोर मणिभीय हाइड्रेट बनाते हैं। यहां अन्य अधिक जटिल रसायनिक एवं भौतिक रसायनिक परिवर्तन भी उपस्थित होते हैं। यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि सीमेंट (उसे पोर्टलैंड सीमेंट भी कहते हैं) के कठोर

होने के लिये यह आवश्यक होता है कि तापमान अत्यधिक नीचा न जाने पावे। यही कारण है कि जाड़ों में (अधिक ठंडे देशों में) निर्माण होने वाले भवनों को गर्म रखने के लिए विशेष उपाय काम में लाये जाते हैं।

यदि जलाने के समय प्रयोग की जाने वाली मिट्टी के साथ SiO_3 की थोड़ी मात्रा मिली होती है तो ऐल्युमिना सीमेंट प्राप्त होती है जिसकी बनावट विभिन्न होती है CaO (लगभग 40 प्रतिशत) Al_2O_3 (लगभग 40 प्रतिशत) Fe_2O_3 (10 – 15 प्रतिशत) और केवल 5 – 10 प्रतिशत SiO_2 इस सीमेन्ट में सिलिकेट का अंश प्रमुख नहीं होता है। इसमें कैल्शियम अल्युमिनेट प्रमुख अंश में होता है। यदि प्रारम्भिक कच्चे माल के रूप में इस्तेमाल होने वाली मिट्टी (Clay) में आवश्यकता से अधिक SO_2 मिला होता है तो चार्ज के साथ लौह पाषाण (iron stone) मिला दिया जाता है जिसके फलस्वरूप SiO_2 निकल कर लोहे से संयोजित होता हुआ सिलिकेट बनाता है।

अल्युमिना सीमेंट की अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता उसकी शीघ्र पकड़न लाने की शक्ति है। इसके अतिरिक्त कैल्शियम अल्यूमिनेट CaO Al_2O_3 का पानी के साथ संयोजन ऊष्मा उन्मुक्त करता है और यह अत्यन्त मूल्यवान गुण है। जाड़ों की ऋतु में इस सीमेन्ट का प्रयोग निर्माण होने वाले भवनों को गर्म रखने के उपायों की आवश्यकता समाप्त कर देता है, गारा बनने के 48 घण्टे बाद ही कठोर होने वाली सीमेंट की दृढ़ता 500-600 किलोग्राम प्रतिवर्ग सेन्टीमीटर पहुंच जाती है।

हमारे समय में सीमेंट का महत्व पत्थर और ईंटों के जोड़ने तक ही सीमित नहीं रह गया है। सानी हुई सीमेन्ट में मिट्टी ककड़, धातु मल मिला देने से स्वतन्त्र निर्माण करने वाला पदार्थ-ककरीट-तैय्यार हो जाता है। विशेष यन्त्रों, ककरीट मिश्रकों (Concrete mixers) द्वारा तैय्यार किया हुआ मिश्रण कोई भी आकृति बना सकता है। ककरीट के कारखानों में इस प्रकार, शिलापट्ट, मोटे, बड़े ब्लाक, जटिल पार्थिवकाओं के अंश निर्माण किये जाते हैं। लौह ढांचा (Steel framework) इस्तेमाल करने से कंकरीट की वस्तुओं की यान्त्रिक दक्षता बहुत अधिक उत्तम हो जाती है। वर्तमान समय में हमारे देश (सोवियत संघ) के भवन-निर्माण उद्योग द्वारा लौह-कंकरीट की वस्तुयें बहुत अधिक मात्रा में उत्पादित की जाती हैं।

हम बता चुके है कि अल्यूमिना सीमेंट पकड़न के समय ऊष्मा उन्मुक्त करती है। यह लाभकारी गुण किसी अवसर पर बहुत ही अनुपयुक्त सिद्ध होता है। जब गारा पतली परतों में लगाया जाता है तब उस परिस्थिति में ऊष्मा आसानी से तथा समान रूप से वाह्य वायुमण्डल में निकलती रहती है। उदाहरण के लिये, विशाल जल-विद्युत स्टेशन के निर्माण की कल्पना कीजिये। यहां

निर्माण होने वाले जल बंध (weir) के बनाने में कंकरीट की विशाल मात्राओं को साँचे में कुछ समय तक स्टैक करके रखना पड़ता है। स्पष्ट है कि ऐसे समय उन्मुक्त होने वाली ऊष्मा के निकास में रुकावट पड़ जाती है और कंकरीट के अन्दर का तापमान 80°C या इससे ऊपर उठ जाता है। इन दशाओं में पानी का संयोजन ऐसी तरह से होता है कि हाइड्रेटेड-अल्यूमिनेट के बड़े मणिभ निर्माण होते हैं, जिनसे निर्माण की दृढ़ता तीन चौथाई कम हो जाती है। फिर क्या किया जावे ?

स्मरण कीजिये की प्राकृतिक जिप्सम बहुत ऊँचे तापमान पर जलने जलाने से मृत जिप्सम होता है ; किन्तु "मृत" वह केवल जल से व्यवहार करने में होता है। यदि इस जिप्सम का (इसे अन्हाइड्राइट कहा जाता है) 25-30 प्रतिशत अल्यूमिना सीमेन्ट में मिला दिया जावे तो पानी उपस्थिति में यह कैल्शियम अल्यूमिनेट से पारस्परिक प्रतिक्रिया करता हुआ लगभग $3\ CaO, Al_2O_3\ 3\ Ca\ SO_4\ HO_2$ की बनावट वाला दृढ़ यौगिक प्रदान करता है। इस प्रतिक्रिया के लिये ऊँचे तापमान की आवश्यकता होती है। अल्यूमिना सीमेन्ट के कठोर होने के समय ऊष्मा उन्मुक्त होती है और जैसा कहा गया है तापमान ऊँचा हो जाता है जो उपरोक्त प्रतिक्रिया के लिये अनुकूल परिस्थिति है। इस प्रकार वह ऊष्मा जो निर्माण की दृढ़ता को हानि पहुँचाती, मृत जिप्सम की उपस्थिति मे कंक्रीट पदार्थ के भीतर ही उपयोग में आ जाती है। इसके अतिरिक्त, अन्हाइड्राइट-अल्यूमिना सीमेंट एक और महत्वपूर्ण गुण प्रगट करता है। वह सागरीय जल में, जिसमें विभिन्न प्रकार के लवण बहुतायत से होते हैं, और, जो इसी कारण से बन्दरगाहों के निर्माणों पर विशेष आक्रमण का प्रभाव डालता है, स्थायी रहता है।

इसलिये कि कंक्रीट के निर्माण दृढ़ हों केवल उन्हें उत्तम सीमेंट से बनाना ही काफी नहीं होता है। सीमेंट को लगाने वाले स्थान पर लगाकर उसे संघनित (Condense) करना भी आवश्यक होता है। अभी कुछ समय पूर्व तक कंक्रीट का यह संघनन केवल हाथों से कुटाई के द्वारा किया जाता था। अब इस कार्य को विशेष प्रकार के कम्पन यन्त्रों (vibraters) द्वारा किया जाता है, जो कंक्रीटीय पदार्थ को अपने कम्पन हस्तांतरित करते हुए उसे संघनित होने और बैठने के लिये विवश कर देते हैं।

वर्तमान समय में कंक्रीट की बनी वस्तुओं की माँगों में अत्यन्त विविधता होती है। कुछ समय पूर्व से गृह-निर्माण मे फेनिल कंक्रीट (foamed concrete) का उपयोग किया जाने लगा है, जिसके तैयार करने में विशेष तरीकों से अधि-

कतम छिद्रल (Porocity) रखने वाला पदार्थ प्राप्त किया जाता है। ऐसे पदार्थ की बनी चद्दरें ऊष्मा और ध्वनि की कुसंवाहक होती हैं। रेशेदार मैगनीशियम सिलीकेट-ऐस्वेस्टास से मिली हुई सीमेंट की सहायता से मूल्यवान छत पाटने का पदार्थ बनाना सम्भव हो सकता है, जिससे पतली हल्की छत की चद्दरें (Roofing Slates) तैयार की जाती है। इस प्रकार की ऐस्बो-सीमेंट से विभिन्न प्रकार के पाइप भी बनाये जाते हैं। ऐस्बो-सीमेंट की चीजें बनाने में इस समय सोवियत संघ संसार में प्रथम स्थान रखता है और हर प्रकार की सीमेंटों के उत्पादन में सोवियत संघ तेजी से सर्वांगीण पूंजीवादी देशों को पकड़ रहा है।

जीवों के शरीर में कैल्शियम

"भवन-निर्माण का तत्व" (कैल्शियम) विभिन्न जीवधारियों के जीवन में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

यदि अधिकांश निम्न श्रेणी के जीवों के कठोर कवच के निर्माण का सर्वाधिक प्रचलित तत्व कैल्शियम कार्बोनेट है, तो ऊंची श्रेणी के जीव अपने हड्डी के कठोर ढांचे के निर्माण में कैल्शियम फास्फेट $Ca_3\ (PO_4)_2$ का उपयोग करते हैं। मानव-शरीर में इस पदार्थ का अंश भार के अनुपात से लगभग तीन प्रतिशत होता है।

कहा जा सकता है कि यह कोई बहुत अधिक मात्रा नहीं है किन्तु जरा हड्डी-विहीन मानव की कल्पना कीजिये, तो आपको प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना के स्थान पर एक मानवाकार जेली मछली (Jelly-fish) प्राप्त होगी–यह है "इन तीन प्रतिशत" का महत्व! पर यह जेली फिश भी अपमान योग्य नहीं है क्योंकि यह उन पोलिपों की निकटतम सम्बन्धी होगी जो सागरों एवं महासागरों में नाविकों का भय यानी मूंगा की चट्टान-निर्माण करते हैं।

कैल्शियम की कमी होने से ढांचे की दृढ़ता में कमी आ जाती है, अस्थि भंग का भय उत्पन्न हो जाता है, मुर्गियाँ छिलका विहीन अण्डा देने लगती हैं। इसीलिये जीवों के भोजन में पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम रखने वाले लवण होना आवश्यक है। पशु–पालन में चारा के रूप में पिसी हुई चाक या हड्डियों का तैयार किया हुआ चूर्ण, जिसमें कैल्शियम फास्फेट होता है, दिया जाता है।

कैल्शियम की भूमिका शारीरिक निर्माण में केवल हड्डियों के बनाने तक ही सीमित नहीं होती है। कैल्शियम–आयन रुधिर में रहते हैं, जो हृदय की सक्रियता को बल देते हैं : रक्त में कैल्शियम आयनों का अभाव धीमे-धीमे हृदय गति रोक देता है।

कैल्शियम विहीन रक्त वायु में थक्का बनाने (Coagulation) की ।

पूर्णतः खो देता है । कैल्शियम के अभाव में केन्द्रीय तन्त्रिका केन्द्र (Central Nervous System) की सक्रियता भी भंग हो जाती है । वनस्पतियों के शरीरों की रचना में कैल्शियम विशेष रूप से आवश्यक होता है । इसलिये इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि दूध में कैल्शियम लवण बहुत अधिक मात्रा में रहते हैं ।

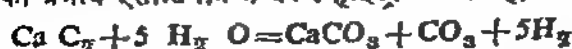
यह ज्ञात हुआ है कि कुछ मोलस्क प्राणी (Shellfish) केवल अपने कठोर बाह्य कवच बनाने के समय ही कैल्शियम कार्बोनेट नहीं संग्रहित करते हैं बल्कि वे अपनी तहों के भीतर किसी प्रकार आ जाने वाले विदेशीय (alien) पदार्थों (उदाहरण के लिये रेत के छोटे कण) के चारों ओर भी कैल्शियम कार्बोनेट मोती के रूप में संग्रह करते हैं । यह कौतूहल-जनक है कि मानव शरीर में भी बाहर से मुक्ता शुक्ति (Pearl oyster) में कार्बोनेट की तहें बनने की भांति ही क्रिया हो सकती है । इस प्रकार ट्यूबरकुलोसिस (क्षय रोग) रोग से प्रभावित स्थान का कैल्सीकरण (Calcification) उपस्थित होता है । दिल की कुछ बिमारियों में उसके चारों ओर के मास तन्तु भी कैल्सीकृत भी हो सकते हैं, जिससे हृदय एक पतें कवच से ढक जाता है ।

कैल्शियम की अन्य विशेषतायें

कैल्शियम केवल निर्माता ही नहीं है । औद्योगिक एवं राष्ट्रीय व्यवस्था में कुल मिलाकर, किसी ऐसे विभाग को बताना कठिन है, जिसमें कैल्शियम का कोई न कोई यौगिक मनुष्य के काम में न आता हो । उदाहरण के लिए, कैल्शियम आक्साइड और कार्बन के मिश्रण को बिजली की भट्टी में खूब तेज, लाल गर्म करने से महत्वपूर्ण तकनीकी उपज, कैल्शियम कार्बाइड मिलता है : $CaO + 3C = CaC_2 + CO$ जब यह पानी से प्रतिक्रिया करता है तो एसीटिलीन (acetylene) बनता है, $CaC_2 + 2H_2O = Ca(OH)_2 + C_2 + H_2$

पहले एसीटिलीन को प्रकाश प्राप्त करने के लिए केवल ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता था । जब एसीटिलीन के जलाने के लिए वायु का प्रयोग न करके शुद्ध आक्सीजन का प्रयोग होने लगा जिससे लौ का तापमान तीन हजार डिग्री तक हो जाता है, तब एसीटिलीन बर्नरों को धातुओं के काटने और झलाई (welding) करने में प्रयोग करने लगे । प्रसिद्ध रूसी रसायन वैज्ञानिक अ ई. फावोर्स्की के शोधनों के फलस्वरूप एसीटिलीन के लिए रसायनिक उद्योग में विस्तृत मार्ग खुल गया ।

दिलचस्प बात यह है कि ऊंचे तापमान पर कैल्शियम-कार्बाइड पर जलीय-वाष्प का प्रभाव एसीटिलीन न देकर हाइड्रोजन देता है.



$$CaC_2 + 5H_2O = CaCO_3 + CO_2 + 5H_2$$

इस विधि से तकनीकी उद्देश्यों के लिए हाइड्रोजन का उत्पादन किया जा सकता है।

कैल्शियम कार्बाइड, वायु की नाईट्रोजन से संयोजित होते हुए सियानामाइड बनता है।



$$Ca\ C_2 + N_2 = Ca\ CN_2 + C_2$$

इस यौगिक का भी प्रयोग विस्तृत रूप से किया जाता है। पहली बात यह है कि सियानामाइट का निर्माण ही प्रथम ढंग है जिसके द्वारा वायुमण्डलीय नाईट्रोजन को मनुष्य अपने उपयोग में बांध सका। पानी की वाष्प के प्रभाव से सियानामाइड अपनी नाईट्रोजन अमोनिया के रूप मे ही उन्मुक्त कर देता है। यह क्रिया सियानामाइड के मिट्टी में मिला देने पर भी धीमे-धीमे चलती रहती है; $Ca\,CN_2 + 3H_2O = CaCO_3 + 2NH_3$ यह सियानामाईड को सीधे खाद के रूप में प्रयोग किये जाने की अनुमति देता है। सियानामाइड से एक अधिक मूल्यवान पदार्थ— यूरिया-प्राप्त किया जा सकता है, जो प्लास्टिक उद्योग में और खाद के रूप में भी प्रयोग किया जाता है, तथा पशु-पालन में ऐल्ब्यूमीन युक्त चारे का काम देता है। सियानामाईड का एक और अद्‌भुत उपयोग कृषि में किया जाता है। यदि कपास के खेतों को इस पदार्थ से उपचरित (treat) किया जाता है तो पौधे पत्तियां छोड देते हैं। इससे कपास को मशीनों से काटने व इकट्ठा करने का रास्ता खुल जाता है।

उद्योगों में चूने का विस्तृत रूप से प्रयोग होता है। सोडा, ब्लीचिंग पाउडर पोटैशियम-क्लोरेट के उत्पादनों तथा खेती मे हानिकारक कीटों को मारने के लिए रसायनिक-विष के उत्पादन में चूने का प्रयोग किया जाता है।

कैल्शियम के अधिकाश लवण पानी से सयोजित होते हुए मणिभीय हाइड्रेट बनाते हैं। कैल्शियम-क्लोराइड में यह गुण बहुत स्पष्ट रूप से प्रगट होता है। वह जल के छः अणुओं तक से सयोजित हो सकता है। इसलिये कैल्शियम-क्लोराइड बहुत ही आर्द्रतावशोषी (hygroscopic)-पदार्थ होता है। यह बड़ी तेजी से वायुमण्डल या कार्बनिक विलायकों में उपस्थित नमी को सोख लेता है। इसीलिये उसका उपयोग जल-अवशोषक के रूप में किया जाता है। इस लवण के उपयोग का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र ठंडे मिश्रणों (Cold mixtures) के तैयार करने में है। 32.5 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराइड का घोल—51°C (ऋण इक्यावन अंश सेंटीग्रेड) पर जमता है। इस लवण में तर किये काष्ठ-पदार्थ अदाह्य बन जाते हैं। कैल्शियम क्लोराइड महत्वपूर्ण औषधि भी है।

कांच की लगभग सभी किस्मों की रचना में कैल्शियम रहता है, किन्तु साधारण शीशा केवल किरणों का न्यूनाधिक सीमित वर्ण पट ही अपने से

बेरियम की साधारण बेरियम-ग्राक्साइड के प्रतिरिक्त बेरियम पर ग्राक्साइड बनाने की क्षमता भी एक उपयोगी गुण है। तकनीक में इस यौगिक को बेरियम ग्राक्साइड से होकर 600°c के तापमान पर वायु की धारा निकलने की क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।



$$2BaO + O_2 = 2BaO_2$$

बेरियम-पर-ग्राक्साइड पर जल के प्रभाव से हाइड्रोजन-पर-ग्राक्साईड प्राप्त किया जाता है।

$BaO_2 + 2H_2O = Ba(OH)_2 + H_2O_2$ 600^0 सेंटीग्रेड के तापमान से ऊपर गर्म होने पर बेरियम-पर-ग्राक्साइड विघाटित हो जाता है और ग्राक्सीजन उन्मुक्त करता है।

$2BaO_2 = 2BaO + O_2$ क्षारीय मिट्टी वाले तत्वों के सल्फाइड स्फुर दीप्त *(Phosphorescent)* पदार्थों की रचना में रहते हैं। इन धातुग्रों के गन्धक से यौगिक, जिनमें धातु के एक परमाणु के साथ गन्धक का एक ग्रणु नहीं, कई ग्रणु रहते हैं (बहुसल्फाइड Polysulphid) चमड़े के उद्योग में चमड़े से बाल ग्रलग करने के लिए काम मे लाए जाते हैं।

कास्मास में कैल्शियम

हमने ग्रौर ग्रापने देखा है कि कैल्शियम पृथ्वी की सबसे महत्वपूर्ण पदार्थों में एक है। पृथ्वी पर गिरने वाले उल्का पिण्डों के ग्रध्ययन हमें विश्वास दिलाते हैं कि हमारा ग्रह ही इसके लिए कोई ग्रपवाद नहीं है, दूसरे ग्राकाशीय पिण्डों में भी कैल्शियम मौजूद है। उल्का-पिण्डों के प्रस्तरों के विश्लेषणों ने प्रगट किया है कि उनमें बहुत काफी कैल्शियम की मात्रा (ग्रौसतन 1.8 प्रतिशत) होती है।

कैल्शियम ग्रपनी उपस्थिति ब्रह्माण्ड में ग्रौर तारों के जगतों के वर्णपटों *(Spectrums)* के ग्रध्ययन के समय प्रगट करता है। कैल्शियम के परमाणु सौर ज्वालाग्रों *(Solar prominence)* ग्रौर ग्रनेक तारों में मौजूद हैं। वे दूसरे हल्के तत्वों के साथ ग्रन्तर्नक्षत्रिय ग्राकाश को भरते हैं। इस परिस्थिति ने ज्योतिष शास्त्रियों के हाथ में दूरस्थ नक्षत्रों की दूरी ज्ञात करने का एक ग्रस्त्र प्रदान किया है।

कुल जलते हुए गर्म पिण्ड ग्रपनी किरणों का वर्णपट देते हैं, जिसमें उस पदार्थ में विद्यमान तत्वों की चमकदार रेखायें ग्रलग-ग्रलग प्रगट हो जाती हैं। पर यदि विकिरण के स्रोत तारा तथा स्पेक्ट्रास्कोप के मध्य उन्हीं तत्वों में से कोई

निकलने देता है। (अल्ट्रावायलेट (पारजंबु) रश्मियों को वह लगभग बिल्कुल ही नहीं निकलने देता है। काट्ंज शीशा में यह कमी तो नही होती है पर वह वर्ण पट की इन्फ्रा-रेड (अवरक्त) किरणों को रोक लेता है। प्रकाश सम्बन्धी यन्त्रों के बनाने के लिये फ्ल्यूराइट (Fluorite) – कैल्शियम फ्लोराइड–की पारदर्शी किस्में बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं। वे अल्ट्रावायलेट एवं इन्फ्रारेड दोनों रश्मियो को अपने से निकलने देती हैं।

यह केवल संयोग नही है कि हमने अभी तक धातु–कैल्शियम के बारे में कुछ नही कहा है। इस हल्की चमकदार धातु को वैज्ञानिको द्वारा शुद्ध रूप में प्राप्त किये जाने के समय से अब तक लगभग डेढ़ शताब्दी बीत जाने के बावजूद कैल्शियम का प्रयोग मूलतः यौगिकों के रूप में ही होता है। अजल कैल्शियम क्लोराइड का विद्युत विश्लेषण करके धातु कैल्शियम प्राप्त की जाती है। उसका थोड़ा उपयोग धातु-उद्योग में होता है। अपनी विशेष सक्रियता के कारण जब वह गले हुए धातु में डाला जाता है तो वह धातु में उपस्थित मिलावटों से जिनमें गैस भी सम्मिलित होती है, तेजी से संयोजित हो जाता है और इस प्रकार धातु की गुणावस्था (quality) को उत्तम बनाता है।

भाइयों का योगदान

स्ट्राॅन्शियम, एवं कैल्शियम के यौगिको का प्रयोग आतिशबाजी (pyrotechnic) में किया जाता है। स्ट्राॅन्शियम रक्तिम बेरियम हरे और कैल्शियम लाल नारंगी वर्ण की लौ देता है। इसी गुण को रसायनिक विश्लेषण के समय इन तत्वों की खोज करने के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है।

यदि सल्फूरिक अम्ल या उसके लवणों को रखने वाले घोल में बेरियम-क्लोराइड मिलाया जावे तो तुरन्त श्वेत अविलेय बेरियम-सल्फेट अवक्षेपित हो जाता है, जिसके तोलने से प्रारम्भिक घोल मे उपस्थित सल्फेट आयनों की मात्रा प्राप्त की जा सकती है।

बेरियम-सल्फेट को श्वेत रंग के रूप में रंगने में भी काम लेते हैं। एक्सरे तकनीक और चिकित्सालयो में, इसका उपयोग प्रतिनिर्देशक पदार्थ (Contrasting material) के रूप में किया जाता है, उदाहरण के लिए आमाशय का अनुसन्धान करने के लिए रोगी को बेरियम-सल्फेट का मलीदा दिया जाता है। और चूंकि बेरियम एक्सरे विकिरण को अंशतः अवशोषित कर लेता है आमाशय की दीवालें दृश्यमान हो जाती हैं। यह जान लेना महत्वपूर्ण है कि इस लवण का जैवीय शरीर पर कोई कुप्रभाव नहीं होता है, जबकि बेरियम के घुलनशील लवण अत्यन्त विषैले होते हैं, इस प्रकार बेरियम-क्लोराइड, को पौधों के हानिकारक कीटों का नाश करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

बेरियम की साधारण बेरियम-आक्साइड के अतिरिक्त बेरियम पर आक्साइड बनाने की क्षमता भी एक उपयोगी गुण है। तकनीक में इस यौगिक को बेरियम आक्साइड से होकर 600°c के तापमान पर वायु की धारा निकलने की क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।



$$2BaO+O_2=2BaO_2$$

बेरियम-पर-आक्साइड पर जल के प्रभाव से हाइड्रोजन-पर-आक्साईड प्राप्त किया जाता है।

$BaO_2+2H_2O=Ba(OH)_2+H_2O_2$ 600° सेंटीग्रेड के तापमान से ऊपर गर्म होने पर बेरियम-पर-आक्साइड विघटित हो जाता है और आक्सीजन उन्मुक्त करता है।

$2BaO_2=2BaO+O_2$ क्षारीय मिट्टी वाले तत्वों के सल्फाइड स्फुरदीप्त (Phosphorescent) पदार्थों की रचना में रहते हैं। इन धातुओं के गन्धक से यौगिक, जिनमे धातु के एक परमाणु के साथ गन्धक का एक अणु नहीं, कई अणु रहते हैं (बहुसल्फाइड Polysulphid) चमड़े के उद्योग में चमड़े से बाल अलग करने के लिए काम में लाए जाते हैं।

कास्मास में कैल्शियम

हमने और आपने देखा है कि कैल्शियम पृथ्वी की सबसे महत्वपूर्ण पदार्थो मे एक है। पृथ्वी पर गिरने वाले उल्का पिण्डों के अध्ययन हमें विश्वास दिलाते हैं कि हमारा ग्रह ही इसके लिए कोई अपवाद नही है, दूसरे आकाशीय पिण्डों में भी कैल्शियम मौजूद है। उल्का-पिण्डों के प्रस्तरो के विश्लेषणों ने प्रगट किया है कि उनमें बहुत काफी कैल्शियम की मात्रा (औसतन 1.8 प्रतिशत) होती है।

कैल्शियम अपनी उपस्थिति ब्रह्माण्ड में और तारों के जगतों के वर्णपटों (Spectrums) के अध्ययन के समय प्रगट करता है। कैल्शियम के परमाणु सौर ज्वालाओं (Solar prominence) और अनेक तारों में मौजूद हैं। वे दूसरे हल्के तत्वो के साथ अन्तर्नक्षत्रिय आकाश को भरते हैं। इस परिस्थिति ने ज्योतिष शास्त्रियों के हाथ में दूरस्थ नक्षत्रों की दूरी ज्ञात करने का एक अस्त्र प्रदात किया है।

कुल जलते हुए गर्म पिण्ड अपनी किरणों का वर्णपट देते हैं, जिसमें उस पदार्थ में विद्यमान तत्वो की चमकदार रेखायें अलग-अलग प्रगट हो जाती हैं। पर यदि विकिरण के स्रोत तारा तथा स्पेक्ट्रास्कोप के मध्य उन्ही तत्वो में से कोई

भी ठंडी अवस्था में मौजूदा होता है तो वह ठीक उसी तरंग दीर्घता के प्रकाश का
अवशोषण करने लगता है, जो वह स्वयं गर्म होने की अवस्था में विकीर्णित
करता है। विकिरण के वर्णपट की चमकदार धारी के स्थान पर अवशोषण से
उत्पन्न काली धारी प्रगट हो जाती है। जितनी ही अधिक संख्या में तत्व के ठण्डे
परमाणु प्रकाश की धारा से मिलते हैं उतनी ही अधिक अवशोषण की धारी
काली होगी। यदि यह मान लिया जाये कि कैल्शियम के परमाणु अन्तर्नक्षत्रीय
आकाश में औसतन समान रूप से वितरित हैं, तो अवशोषण की रेखायें उतनी
ही अधिक काली होंगी जितनी अधिक तारे की दूरी पर्यवेक्षक से होगी।

इस प्रकार कैल्शियम ने विज्ञान की एक और अच्छी सहायता की। इसमें
सन्देह नहीं की हम जितना ही अधिक आगे जायेंगे उतना ही अधिक अ. ए.
फेर्स्मान के शब्दों में "विश्व के सर्वाधिक सक्रिय एवं गतिशील परमाणुओं में से
एक" कैल्शियम के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। यकीनन कैल्शियम इस
समय भी ज्योतिष की अनेकों सेवायें करता है। किन्तु इसमें सन्देह नहीं है—
और ज्योतिष-शास्त्री भी इस बात में हमसे सहमत हैं-कि पहले की भांति आगे
भी उसकी सबसे बड़ी और लाभकारी सेवा हमारे घर पर ही होगी। यह कम
महत्व की बात नहीं है कि इसी कैल्शियम तत्व की बदौलत ही मनुष्य पृथ्वी पर
दृढ़ता से खड़ा है।

आधारों का आधार

१

कभी वैज्ञानिक कार्बन का साधारण इतिहास लिखेंगे। उस तत्व का इतिहास जिसके बिना पृथ्वी पर, और हो सकता है दूसरे ग्रहों पर भी, जीवन सोचा ही नहीं जा सकता है। किन्तु उसकी जीवनी का एक तथ्य कदाचित् ही कभी विश्वास के साथ प्रतिपादित किया जा सके। यह उत्तर कोई नहीं दे सकता कि आज से कितने हजार पूर्व आदिम मानव ने सर्व-प्रथम कार्बन से परिचय प्राप्त किया था। सम्भवतः जब उसने प्रकृति से अग्नि प्राप्त करने का रहस्य छीना। यह रसायनिक तत्व उसके सामने प्रथम अलाव के जलते हुये कोयले के रूप में आया।

गहरे अतीत में कार्बन के सबसे निकटवर्ती भाई सिलीकन के चिन्ह भी लुप्त हो जाते हैं। अपने स्वतन्त्र रूप में सिलीकण कुछ कम डेढ़ सौ वर्ष पूर्व प्राप्त किया गया था। पर उसके यौगिकों से मानव का परिचय हमारे युग से अनन्त काल पूर्व उस समय हो चुका था जब उसने अपने हाथ में पत्थर का कुल्हाड़ा उठाया था।

यदि कार्बन ने पृथ्वी पर कार्बनिक जैवीय-शरीरों की सृष्टि की, तो सिलिकन ने अकार्बनिक जगत का आधार, पृथ्वी पर प्राप्त होने वाले खनिज और कच्ची धातुओं की है। एक शब्द में उसे 'पृथ्वी की कठोरता' को अधार भूत सीमेंट कहा जा सकता है। प्रकृति की सृष्टि की विलक्षण मनमौज के अनुसार कार्बन और सिलिकन तत्वो के देश के मानचित्र एक ही मध्यान्ह (Meridian) रेखा मे पड़ते हैं। मेंदेलीफ की आवर्त सारिणी के चौथे वर्ग मे पड़ते हैं।

जीवन का मुख्य तत्व

प्रथम दृष्टि मे कितना ही विरोधाभासी (Paradoxical) क्यों न लगे, पृथ्वी के पपड़े मे दूसरे तत्व की तुलना में कार्बन का अंश कम है—कुल तत्व O 14 प्रतिशत। यह आक्सीजन, सिलिकन, अल्युमिनियम, सोडियम, मैगनीशियम अथवा लौह की मात्रा से बहुत कम है किन्तु यह आसानी से अनुमान किया जा सकता है कि यदि हमारे ग्रह से कुल कार्बन का अंश निकाल दिया जावे तो स्वरूप क्या होगा। कुल जीवन चूने के प्रस्तरों से निर्मित पर्वत श्रेणियां एवं पठार गायब हो जायेंगे। पृथ्वी मृत मरुभूमि में परिणत हो जायेगी। न कोयला होगा, न मिट्टी का तेल होगा, और जलवायु भी अत्यन्त कठोर हो जायेगी।

एक ही तीन सूरतों में

पृथ्वी के धरातल पर कार्बन यौगिकों के रूप में तथा स्वतन्त्र रूप में प्राप्त होता है स्वतन्त्र कार्बन तीन अपररूपों (Allotropic Modifications) में प्राप्त होता है। अपररूपता (Allotropism) आवर्त सारणी के धातु और अधातु दोनों प्रकार के तत्वों में काफी अधिक पाई जाती है। एक ही तत्व के परमाणु विभिन्न प्रकार की मणिभीय जालियों के ढाँचे बनाते हुए रह सकते हैं। ऐसी दशा में तत्व के विभिन्न स्वरूपों को उसके अपररूप कहा जाता है।

कार्बन के तीन अपररूप होते हैं हीरा, ग्रेफाइट तथा अमणिभ (Amorphous) कार्बन (अर्थात् कज्जल अथवा लकड़ी का कोयला) इनमें सबसे विरल (Rare) किन्तु सबसे विलक्षण अपररूप हीरा है। शुद्ध हीरा पारदर्शी रंग हीन, अत्यन्त चमकीला होता है। मिलावटों से हीरे में प्रायः विभिन्न रंग आ जाते हैं, काला हीरा भी प्राप्त होता है वह कार्बन के दूसरे अपररूप ग्रेफाइट द्वारा अधिकता से गन्दा किया होता है। हीरे की महाकठोरता मनुष्य को कुछ हजारों वर्षों से ज्ञात है और प्रकृति में उससे अधिक कठोर अन्य पदार्थ नहीं है।

बोर अजोन (बोर्नाइट) को छोड़कर हीरे के उपकल्प (Substitute) के रूप में प्रयोग किये जाने वाले कुल ज्ञात खनिजों एवं कठोर अलवायों से हीरा 4–5 गुणा अधिक कठोर होता है। हीरे की छेनी, कठोरतम अलवाय की छेनी की अपेक्षा एक हजार गुना अधिक समय तक बगैर खांचे बनवाये हुए (without groving) काम करती है। इसी कारण हीरे की छेनिया तकनीक के अनेक क्षेत्रों में अनिवार्य हैं। यदि पृथ्वी मे सूराख करने वाले बरमा को मार्ग में कठोर चट्टानें मिल जाती हैं तो हीरा उसकी सहायता करता है। सूराख करने वाले बरमा (Anger) मे हीरे का शीर्ष लगा देते हैं। शीर्ष, निस्सन्देह, फौलाद का बना होता है, किन्तु उसकी निचली काटने वाली धरातल पर हीरे के मणिभों के टुकड़े विशेष रूप से जड़े हुए होते हैं। कुछ ही समय पूर्व सोवियत वैज्ञानिकों तथा इन्जिनियरों ने अतिरिक्त गहराइयों (Super depths) तक पृथ्वी में छेद (bore) करने का निश्चय लिया है। वे 15-18 किलोमीटर की गहराइयों तक वेधन करेंगे और पृथ्वी के पपड़े के नये रहस्यों का उद्‌घाटन करेंगे। हीरे के बरमे की सहायता से वे वेधन करने के मार्ग में पड़ने वाली कठोरतम् चट्टानों पर काबू पा सकेंगे।

तकनीक के अनेक विभागों में अभी तक कोई अन्य पदार्थ हीरा का स्थान नहीं ले पाया है। किन्तु रत्न-जटित आभूषणों के रूप में अपने पुराने उपयोग में वह बहुत समय से दूसरे अधिक सस्ते मूल्यवान पत्थरों एवं कांच द्वारा भी प्रतिस्थापित किया जा रहा है क्योंकि आभूषणों में हीरे की महान कठोरता कोई भी भूमिका

नही प्रदा करती है, जबकि साधारण कांच प्राकृतिक हीरे की अपेक्षा कहीं अधिक सरलता से तराशा तथा विभिन्न रंगो से सजाया जा सकता है।

यह सत्य है कि हीरा अत्याधिक शक्ति से प्रकाश को वर्तित (Refract) करता है और उसे विभिन्न रंगों में विपाटित करता हुआ अत्यधिक चमक भी देता है। किन्तु ऐसे प्रस्तर हैं जो इस व्यवहार में हीरे से जरा भी कम नहीं हैं। इसलिये भविष्य ऐश्वयंशाली हीरे के साथ नहीं है, जिसमें हीरे का लगभग दो तिहाई भाग तराश डाला जाता है, वरन् श्रमिक हीरे के साथ है, जिसका महत्व इसमें नही है कि वह कैसा है—काला है या पीला है या पानी की भांति पारदर्शी है, वरन् इसमें है कि वह सदैव दृढ़ रहता है और आज तक कुल दूसरे पदार्थों पर विजयी रहा है।

हीरा जैसे कि दूसरे बहुत से उपयोगी खनिजों के विषय में होता है, बुनियादी और सेकण्डरी डिपाजिट (secondary deposits) कहलाने वाले उद्गम क्षेत्रों में प्राप्त होता है। वह विशाल तापमानों और दबावों के अन्तर्गत अत्याधिक गहराईयों में बनता है। कभी-कभी अत्यन्त गहराई में स्थित मैग्मा (शैल मूल) ऊपर की ओर फोड़ कर बाहर निकल आता है और संकरी, ऊपर की ओर फैलती हुई कैम्बरलाइट नलिकाओं के रूप मे जम जाता है। इस प्रकार के निकास बहुत पुराने समय से अफ्रीका और ब्राजील में मिलते हैं। कुछ समय पूर्व सोवियत संघ में याकूतिया प्रान्त में भी कैम्ब्ररलाईट में हीरो की औसत प्राप्ति एक टन में एक ग्राम से अधिक नही होती है और कठोर चट्टानो को तोड़कर हीरो को निकालना एक कठिन कार्य होता है। प्रायः हीरों को सेकण्डरी डिपाजिट वाले उद्गमों से प्राप्त किया जाता है। वे उसी समय बनते हैं जब बुनियादी उद्गम का ऊपरी भाग टूट कर पानी से धो दिया जाता है।

वैज्ञानिकों को कृत्रिम हीरा प्राप्त करने में बड़ा परिश्रम करना पड़ा है।

प्रथम प्रयोग पिछली शताब्दी के अन्त में किए गये। उनमें सफलता नहीं मिली। प्रयोगशालाओं में वही दशायें उपस्थित करना आवश्यक था जो पृथ्वी के गहरे गह्वर में होती हैं: ऊंचा तापमान और विशाल दबाव। इस कारण नई तकनीक निकालने की आवश्यकता पड़ी। 1956 ई. में अंग्रेज वैज्ञानिक कृत्रिम हीरा संश्लेषित करने में सफल हुए। उन्होने 100 हजार वायुमडल से ऊपर का दवाव और तीन हजार डिग्री का तापमान प्रयोग किया। 1961 ई. में सोवियत वैज्ञानिको ने, जो कीव में अत्यन्त कठोर पदार्थो के संश्लेषण के लिए बनाये गये सस्थान के वैज्ञानिक कार्यकर्ता थे, अखिल सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की बाइसवी कांग्रेस को उपहार में देने के लिए दो हजार कैरट कृत्रिम हीरा तैयार किया (1 कैरट=0·2 ग्राम)।

हीरा की विशाल कठोरता का कारण क्या है ? कार्बन के परमाणुओं का पारस्परिक जोड़ विशाल दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध है। हीरे में प्रत्येक कार्बन का परमाणु अन्य चार कार्बन के परमाणुओं से जुड़ा होता है जिससे सममितीय चतुष्पार्श्वीय (symmetrical tetrahedron) आकृति प्राप्त होती है। हीरे के ऊपरी धरातल से एक भी कार्बन का परमाणु विलग करने के लिए कम से कम दो कार्बन-कार्बन के जोड़ों को तोड़ना आवश्यक होगा। इस प्रकार का दृढ़ रसायनिक जोड़, तथा परमाणुओं की पारस्परिक स्थिति, हीरे के मणियों को आश्चर्यजनक कठोरता प्रदान करते हैं।

किन्तु हीरे की मणिभीय जाली के भीतर केवल उलट फेर कर दीजिए और उसकी दृढ़ता विलीन हो जायेगी। सुन्दर चमकदार हीरे के मणिभ के स्थान पर हमें मुलायम खनिज प्राप्त हो जायेगा। यह है ग्रेफाइट।

ग्रेफाइट की मणिभीय जाली में भी प्रत्येक कार्बन का परमाणु चार दूसरे कार्बन के परमाणुओं से जुड़ा होता है। किन्तु हीरे की दशा के विपरीत इसमें ये सब परमाणु एक ही समतल में होते हैं। ये पाँच परमाणुओं में समतलीय जोड़ आपस में शिथिलता से जुड़े होते हैं जिससे ग्रेफाइट की पपड़िया आसानी से उधेड़ी जा सकती हैं, उसके अलग-अलग समतल एक दूसरे के साथ-साथ चलते हैं। ग्रेफाइट का यह गुण उसे ठोस ग्रीज (चिकना करने वाला पदार्थ) के रूप में प्रयोग किए जाने की अनुमति देता है।

ग्रेफाइट का रंग भूरा होता है और वह पूर्ण रूप से अपारदर्शी होता है। वह बिजली का सुसंवाहक है।

प्रकृति में ग्रेफाइट की पूरी की पूरी खानें मिलती हैं। उसे कृत्रिम रूप से प्राप्त किया जा सकता है। शुद्ध कोयले को कुछ हजार डिग्री तक बगैर वायु दिये हुए गर्म कीजिए तो ग्रेफाइट प्राप्त होगी। यदि इन्हीं दशाओं में (लगभग 2000°C तापमान पर) हीरा रखा जाये तो वह ग्रेफाइट में परिणित हो जायेगा, यह इस बात का प्रमाण है कि साधारण परिस्थितियों में कार्बन की सबसे अधिक स्थायी बनावट ग्रेफाइट है।

आधुनिक समय में ग्रेफाइट का बहुत अधिक उपयोग औद्योगिक क्षेत्र में किया जाता है। उससे विभिन्न प्रकार के शक्तिमान सम्पर्क विद्युत भट्टियो के लिए एलेक्ट्रोड, प्रोजेक्टरों के लिए कोल (Coals), धातुओं के गलाने के लिए खड़िया (Crucible) अन्ततः साधारण पेन्सिलों की अन्दर की बत्तियां बनाई जाती हैं। किन्तु इन सबसे अधिक शुद्ध ग्रेफाइट का (हजारों टन) उपयोग परमाणविक रीएक्टरों में किया जाता है।

वैज्ञानिकों ने खोज की है कि शुद्ध ग्रेफाइट यूरेनियम के विभाजन (Fission) के समय बनाने वाले न्यूट्रानों को लगभग बिलकुल ही नहीं अवशोषित करता है, और साथ ही साथ बहुत भली प्रकार उनको धीमा कर देता है। इसके अतिरिक्त ग्रेफाइट सस्ता होता है। आसानी से काम में लाया जा सकता है, रीएक्टर के ऊंचे तापमान तथा विकिरणों से भयभीत नहीं होता है। उसके ये सब गुण उसे परमाणविक उद्योग का अनिवार्य पदार्थ बना देते हैं।

कार्बन का तीसरा अपर रूप प्रकृति में साधारण कज्जल तथा पत्थर और लकड़ी के कोयले के रूप में पाया जाता है। यह सच है कि पत्थर का कोयला बिलकुल शुद्ध कार्बन नहीं होता है उसकी अच्छी किस्म एन्थ्रासाईट (Anthracite) में 95 प्रतिशत से अधिक कार्बन नहीं होता है : शेष अंश मिलावटों का होता है। कार्बन और हाइड्रोजन के यौगिक, गंधक और न जलने वाले पदार्थ (सिलीकन के विभिन्न यौगिक) जो जलाये जाने पर राख और लंगर (Slag) छोड़ते हैं।

कोयले का उपयोग विस्तृत रूप से धातु उद्योग में कच्चे लोहे (Castrion) को गलाने के लिये किया जाता है। जितनी अधिक ऊंची उत्तमता (Quality) का कोयला होता है उतना ही अधिक शुद्ध ढला लोहा (Castiron) प्राप्त होता है। इसीलिये कोयले को कोक में परिणत करते हुए मिलावटों से मुक्त करने का प्रयत्न करते हैं।

कोयले से कोक तैयार करने के लिये वायुहीन माध्यम में बहुत तेज गर्म करते हैं। उड़ने वाले कार्बनिक एवं गंधक का अंश वाष्प (Vapour) बन जाता है और कोक-गैस बनाते हैं, जो स्वयं भी एक मूल्यवान कच्चा माल है। गर्म किये जाने के बाद प्राप्त पत्थर का कोयला कोक कहलाता है और यही धातु उद्योगों में प्रयोग होने के लिये भेजा जाता है।

बहुत अरसे से कच्चे लोहे और फौलाद के गलाने के लिये लकड़ी के कोयले का उपयोग किया जाता था। पहले जब पत्थर के कोयले से कोक नहीं बना सकते थे कुल कच्चा लोहा लकड़ी के कोयले की सहायता से ही बनाया जाता था। इंगलैण्ड के लगभग कुल वन धातु उद्योग में प्रयोग किये जाने के लिये कोयले में परिणत कर डाले गये।

लकड़ी के कोयले ने गैसों का [illegible] प्राप्त की। यह गुण अनेक [illegible] किन्तु [illegible] का कोयला सबसे [illegible] तापमान पर वायु के 200 [illegible] विषैली गैसों (क्लोरीन, [illegible]) [illegible] सोख सकता है। [illegible]

(gasmask) में जटिल रसायनिक फिलटरों को प्रतिस्थापित (Substitute) करते हुए लकड़ी के कोयले का सफलता पूर्वक उपयोग किया जाता है।

यदि कोयले को द्रव वायु से ठंडा किया जावे तो उसकी अवशोषण शक्ति लगभग दस गुना बढ़ जाती है। इस गुण का उपयोग प्रयोग शालाओं में वेकुअम (शून्यक) प्राप्त करने के लिए किया जाता है। कोयले के ठंडे किये हुए टुकड़े बर्तन में रखे जाते हैं, जिससे हवा पंप द्वारा निकाल ली जाती है और प्रत्येक टुकड़ा उस नमी और उन गैसों को अपने में पी लेता है जिनको पंप से नहीं निकाला जा सकता है और जिनका निकालना आवश्यक होता है इस बची हुई नमी और गैसों के कोयले के टुकड़ों द्वारा "पी" लिये जाने से बर्तन में शून्यक (vacuum) बड़ी तीव्रता से बढ़ता है।

इसके अतिरिक्त कार्बन सबसे अधिक कठिनता से गलने वाले पदार्थों में से एक है वह लगभग 3700° सेंटीग्रेड पर गलता है।

रसायनिक दृष्टिकोण से कार्बन कम सक्रिय तत्वों में है। किन्तु वह 'निष्क्रिय' केवल साधारण दशाओं में रहता है। पर्याप्त ऊँचे तापमान उसे बहुत से तत्वों-धातु एवं अधातु-से प्रतिक्रिया करने को बाध्य कर देते हैं।

तीनों अपररूपकों में सबसे अधिक सक्रियता अमणिभ कार्बन प्रकट करता है। थोड़ा ही गर्म किये जाने पर वह वायु में कार्बन-डाई-आक्साइड (कार्बोनिक एसिड गैस CO_2) बनता हुआ तेजी से आक्सीजन से संयोजित होता है। यदि प्रज्वलन के समय आक्सीजन अपर्याप्त होती है तो कार्बन मोनोक्साइड (CO) प्राप्त होता है। गंधक के साथ कार्बन अत्यन्त महत्वपूर्ण यौगिक, कार्बन सल्फाइड बनाता है, जो चर्बियों, तैलों और रालो का सर्वोत्तम विलायक है। कार्बन के रसायनिक गुणों के बारे में हम आगे भी बतायेंगे।

कार्बन का सबसे महत्वपूर्ण यौगिक

वह न केवल सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, वरन् सबसे अधिक व्याप्त भी है। कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस वायु मंडल मे है (0·03 प्रतिशत), नदियों और सागरों के पानी में घुले हुए रूप में है, ज्वालामुखियों के उद्गारों के समय विशाल मात्राओं में निकलती है, और अन्ततः पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान है। यह अद्भुत बात है कि वीनस (शुक्र) ग्रह में वह पृथ्वी की अपेक्षा अतुलनीय मात्रा में अधिक है।

वायुमंडल से निरन्तर कार्बोनिक एसिड गैस पौधों द्वारा खाई जाकर आर्गेनिक पदार्थों में परिणत होती रहती है। पौधों को जीव खाते हैं, जो साँस द्वारा कार्बन-डाइ-आक्साइड निकालते हैं, और इस प्रकार कार्बन पुनः वायुमंडल मे पहुंच जाता है। प्रकृति में कार्बन का चक्र चलता रहता है। परन्तु यह चक्र

बहुशाखीय भी होता है। कार्बोनिक एसिड गैस की काफी मात्रा हमारे वायुमंडल में ज्वालामुखी पर्वतों के उद्गारों के समय आती है। साथ ही महासागरीय जल में कार्बोनेटों के रूप में घुली बहुत सी कार्बोनिक एसिड गैस जीवों द्वारा अपने हड्डी के ढांचों तथा कठोर आवरणों के बनाने में उपयोग कर ली जाती।

पृथ्वी के इतिहास के पुराने युगों में कार्बन की विशाल मात्रायें जीवन के चक्र से बाहर निकल कर मोटे तलछटी शैलों (sedimentary rocks) के नीचे कैलसाइट, पत्थर के कोयले और मिट्टी के तेल की तहों के रूप में तहखानों में दफन हो गईं।

पिछली शताब्दी के दौरान मानव ने उपयोगी खनिजों की विशाल मात्रायें प्राप्त करके उन्हें जलाते हुए वायुमण्डल में कार्बन-डाई-आक्साइड की आमद में बढ़ोती की है। वायु मंडल में कार्बन-डाइ-आक्साइड का अंश इस समय शनैः शनैः बढ़ रहा है। किन्तु कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस का उपयोग केवल पौधों के भोजन के रूप में ही नहीं है, वह पृथ्वी को ढकने वाला "कम्बल" भी है। सूर्य की रश्मियों को, जो पृथ्वी के धरातल को गर्म करती हैं, वह सरलता से आने देता है किन्तु पृथ्वी की ओर से बाह्यान्तरिक्ष की ओर विकीर्णित होने वाली इन्फ्रा रेड (अवरक्त) किरणों को वह रोक लेता है। यदि वायु मण्डल में कार्बोनिक-एसिड गैस का अभाव हो जाये तो हमारे ग्रह की जलवायु बहुत अधिक ठंडी और शुष्क हो जायेगी। इस प्रकार मानव की क्रियाशीलता, जो हमारे वायुमंडल के कार्बन-डाई-आक्साईड गैस CO_2 के अंश को बढ़ाती है, समय के साथ साथ पृथ्वी को अधिक गर्म और नम जलवायु की ओर ले जा रही है।

कार्बोनिक-एसिड गैस इतनी अहानिकर मानव शरीर के लिये नहीं है जितनी कि वह प्रथम दृष्टि में प्रगट होती है। जब वायु में उसकी मात्रा 3 प्रतिशत से अधिक होती है तब वह शरीर पर गम्भीर हानिकर प्रभाव डालती है। 10 प्रतिशत कार्बनडाई-आक्साइड गैस का सान्द्रण, श्वास क्रिया रोकते हुए, लगभग तात्कालिक मृत्यु उपस्थित करता है।

दैनिक जीवन में CO_2 'शुष्क बर्फ' के नाम से उपयोग किया जाता है, जो ठोस (जमा हुआ) कार्बन डाई-आक्साइड होता है। वह ठंडक लाने के लिये प्रयोग होता है। इसका उपयोग विस्फोट के कामों में भी किया जाता है। इस काम के लिये उसे विस्फोटक पदार्थ के ऊपर रखा जाता है। ऊंचे तापमान पर शुष्क बर्फ CO_2 गैस में परिणत हो जाती है और विशाल आयतन प्राप्त कर लेती है जिससे विस्फोट की शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

काले सोने का आधार

मिट्टी का तेल प्रकृति में मिलने वाले कार्बन में विभिन्न यौगिकों का एक जटिल मिश्रण है। यह काला चिकना द्रव होता है जिसकी अपनी विशेष गंध

होती है। इसकी रचना में हाइड्रो कार्बन (hydro carbon) तथा अधिक जटिल कार्बनिक यौगिक समाविष्ट होते हैं। मिट्टी का तेल रसायनिक कारखानों में साफ किया जाता है। पहले उसमें से सबसे हल्के अणु बेन्जीन को निकालते हैं, तब उससे भारी अणु किरोसीन को और अंत में चिकना गाढा तेल निकालते हैं। जो बच जाता है उसे तेल कहते हैं। यह ईंधन के रूप में फौलाद को उबालने के समय खुले मुंह की मार्टिन भट्टियों में प्रयोग किया जाता है तथा स्टीमरों और विद्युत स्टेशनों में जलाने (heating) के लिये काम आता है। काले तेल में विद्यमान पदार्थों को विस्फोट, रंग और वार्निश के सामान बनाने के काम में लाया जाता है।

प्रायः कहा जाता है कि पृथ्वी के गर्भ में मिट्टी के तेल की पूरी "झीलें" एवं "सागर" भरे हैं। वास्तव में, अधिकतर यह होता है कि सूराख करने पर मिट्टी का तेल चश्मे की भांति फूट कर बहने लगता है। इस प्रकार का एक चश्मा चौबीस घंटों में 100 से 1000 टन तक मिट्टी का तेल निकाल सकता है। किन्तु, वह नीचे टंकियों नुमा तेल भंडारों में कदापि नहीं इकट्ठा रहता है, वरन् स्पंज की भांति झंझरीदार चट्टानों में भरा रहता है। और केवल पृथ्वी की ऊपरी परतों और घुली गैसों के दबाव से छिद्र मिलने पर स्वयं ऊपर आ जाता है। किन्तु यदि मिट्टी के तेल का दबाव उस संस्तर (Stratum) पर पर्याप्त नहीं होता है तो सक्शन पम्पों द्वारा उसे ऊपर खींचा जाता है। उस दशा में आवश्यक संस्तरीय दबाव, यानी चट्टान की परत में स्थित मिट्टी के तेल का दबाव स्थापित करने के लिये पहले वहां का पानी पंप से बाहर निकाला जाता है।

यदि पत्थर के कोयले की व्युत्पत्ति प्राचीन पौधों से होने में वैज्ञानिकों को कोई सन्देह नहीं है, तो मिट्टी के तेल की व्युत्पत्ति के प्रश्न पर वे आज तक एक राय क्यों नहीं हो सके हैं। कुछ अनुसंधानकर्ता, जिनमें मेंडेलीफ भी सम्मिलित है, इस राय के हैं कि मिट्टी का तेल खनिज पदार्थों, तथा पृथ्वी के गर्भ से बहकर आये हुए धातुओं के कार्बाइडों, और पानी से बना है। यदि यह सही है तो मिट्टी के तेल के उद्गम विशेषकर पृथ्वी के पपड़े की दरारों के पास होने चाहिये यानी उन स्थानों पर जहां ज्वालामुखी सक्रिय हों किन्तु मिट्टी के तेल के दस हजार ज्ञात उद्गमों में केवल 30 पृथ्वी के पपड़े की दरारों के पास हैं शेष तलछटी शैलों (Sedimentary rocks) में प्राप्त होते हैं, जो कभी मैग्मा (शैल मूल) को छूते तक नहीं।

इसीलिए इस समय अधिकांश वैज्ञानिकों का दूसरा मत है। प्रकटतः मिट्टी का तेल प्राचीन पशु तथा वनस्पति संसार के अवशेषों से बना है। यदि इस प्रकार

के अवशेष किसी ऐसे माध्यम में पड़ जाते हैं जिसमें ऑक्सीजन होता है तो वे विघटित होते हुए पत्थर का कोयला निर्माण करते हैं। किन्तु यदि ये अवशेष ऐसे माध्यम में पड़ जाते हैं, जिसमें सुरक्षित कार्बनिक पदार्थों में ऑक्सीजन का अभाव होता है तो वे मिट्टी का तेल बनाते हैं। इसमें कोयला उसी स्थान पर सुरक्षित पड़ा रहता है जहां वह बनता है किन्तु मिट्टी का तेल पृथ्वी के भीतर स्थानान्तरित होता है और फैलते हुए समाप्त हो सकता है यदि उसे संग्रहित होने की अनुकूल दशायें नहीं प्राप्त होती हैं, अर्थात यदि मुलायम मिट्टी के उन्नतोदर लेन्स (convex lense) बनाने वाले स्थान नहीं मिलते है, जिसमें वह पैवस्त होकर ठहर जाता है।

जब ऊपर स्थित चट्टानों की तहें गैसों के लिए भी अभेद्य होती हैं तो बनने वाले हाइड्रो-कार्बनों (hydro carbons) में सबसे हल्के—मीथेन, ईथेन, तथा अन्य—भी पृथ्वी के गर्भ में संचित हो जाते हैं और प्राकृतिक गैस का उद्गम निर्माण करते हैं, जो सबसे सस्ता और उत्तम रसायनिक कच्चा माल है।

इनआर्गेनिक (अकार्बनिक) रसायन में कार्बन

यौगिकों की विविधता एवं संख्या की दृष्टि से कार्बन मेंडेलीफ प्रणाली के शेष कुल तत्वों को एक साथ मिलाकर भी बहुत पीछे छोड़ देता है।

हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाईट्रोजन, गंधक और फास्फोरस से मिलते हुए, वह प्रकृति में प्राप्त होने वाले एवं प्रयोगशालाओं में संश्लेषित किये जाने वाले लगभग सभी आर्गेनिक पदार्थ निर्माण करता है। बीस लाख से ऊपर कार्बन के यौगिक ज्ञात हो चुके है और सैद्धान्तिक दृष्टि से तो वे अनन्त हैं। वैज्ञानिक नेस्मेयानोव की अलंकारपूर्ण भाषा में 'आर्गेनिक रसायन की भाषा की वर्णमाला में, कुल छः अक्षर हैं किन्तु उसका शब्द कोष निरन्तर बढ़ रहा है और इस समय भी 100 मोटी जिल्दों में कठिनता से आ सा सकता है।'

कार्बन रखने वाले यौगिकों की विविधता उसके परमाणुओं की एक दूसरे से अत्यन्त दृढ़ जोड़ बनाने की क्षमता पर निर्भर है। कार्बन के परमाणुओं की बनी शृंखलायें बहुत बड़ी लम्बाई तक जा सकती हैं और पूर्णतया स्थाई रह सकती हैं, जब कि दूसरे तत्वों परमाणुओं से बनी छोटी शृंखलायें भी बहुत ही अधिक अवसरों पर अस्थायी होती हैं। इस प्रकार उदाहरण के लिये, ऑक्सीजन परमाणुओं को इस प्रकार की सबसे बड़ी शृंखला दो परमाणुओं की होती है। और जो यौगिक ऐसी शृंखला से बने होते हैं कम स्थायी होते हैं। जहां तक कार्बन का सम्बन्ध है 70 कार्बन परमाणुओं की शृंखला का पूर्ण स्थायी यौगिक प्राप्त किया गया है।

किन्तु, अकार्बनिक रसायन में भी कार्बन एक प्रमुख स्थान रखता है। विशेषतः कार्बन-डाइ-आक्साइड और उसकी उपजों की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

कार्बोनिक-एसिड गैस पानी में घुलती हुई उसके अणुओं से संयोजित होकर दुर्बल कार्बोनिक एसिड बनाती है।

शुद्ध कार्बोनिक एसिड का प्राप्त करना सम्भव नहीं है क्योंकि वह बहुत अस्थायी होता है। इसके विपरीत कार्बोनिक-एसिड के लवण कार्बोनेट और बाइ-कार्बोनेट स्थायी यौगिक होते हैं। उनमें सबसे महत्वपूर्ण सोडियम कार्बोनेट या सोडा है जिसका कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में बड़ा उपयोग होता है। इसी के समान पोटेशियम का यौगिक K_2CO_3 है जो पोटाश कहलाता है। कुल पोटेशियम के लवणों के समान ही एक बहुत मूल्यवान उर्वरक है। यदि धातु कार्बोनिक एसिड के अणु के एक ही हाइड्रोजन परमाणु को विस्थापित करता है तो बाइकार्बोनेट लवण प्राप्त होता है। सबसे प्रसिद्ध बाइकार्बोनेट-सोडियम बाइकार्बोनेट $NaHCO_3$ है जो खाने वाला सोडा है।

दूसरा महत्वपूर्ण यौगिक जो कार्बन आक्सीजन से मिलकर बनाता है कार्बन मोनोआक्साईड CO है।

जैसा कि हम कह चुके हैं, जब कोयले के जलने के समय आक्सीजन की मात्रा उसको पूरी तरह से जलाने के लिये पर्याप्त नहीं होती है तो कार्बन मोनो-आक्साइड बनता है। वायु की कमी के समय में भट्टी के नीचे के भाग में, जहाँ आक्सीजन उस समय बाकी रहती है, साधारण रूप से प्रज्वलन जारी रहता है और कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस बनती है: $C+O_2=CO_2$, किन्तु उसके ऊपरी भाग में जलता हुआ कोयला वायु के सम्पर्क में न आकर कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस के सम्पर्क में आता है, और कोयला कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस से आक्सीजन की मात्रा ले लेता है और कार्बन मोनोआक्साइड निर्माण करता है। $C+CO_2=2CO$.

कार्बन मोनोआक्साइड को कभी-कभी कोयले की गैस भी कहा जाता है क्योंकि वह बहुत विषैली होती है। उसका विषैला प्रभाव भट्टी के धुंआ निकलने के मार्ग को समय से पूर्व बन्द कर देने पर प्रायः देखा जाता है। कार्बन मोनो-आक्साइड के विष के प्रभाव से मानव-रक्त वायु से आक्सीजन खींचने और फिर उसे शरीर के तन्तुओं को हस्तांतरित कर देने की क्षमता खो देता है। इससे मृत्यु हो सकती है।

दूसरी ओर (स्थायी यौगिक CO_2 की आक्सीजन की मात्रा के अनुपात कम आक्सीजन रखने वाली कार्बन मोनोआक्साइड बड़ी उत्सुकता से दूसरे

परमाणुओं अथवा परमाणु समूहों से संयोजित होती है। रसायन शास्त्री इसको 'संयोजन करने की प्रतिक्रिया की ओर झुकाव' कहते हैं। उदाहरण के लिये, 500°C के तापमान पर या केवल प्रकाश में कार्बन मोनोआक्साइड क्लोरीन के दो परमाणुओं से संयोजित हो जाती है : $CO + Cl_2 = COCl_2$ और कुख्यात विषैला पदार्थ फास्जीन बनती है। फास्जीन बहुत से जटिल कार्बनिक यौगिकों के प्राप्त करने के लिये अत्यन्त मूल्यवान रीएजेन्ट है। ऊंचे तापमान और बड़े दबाव पर कार्बन मोनोआक्साइड धातु से संयोजित होती है। इस प्रकार विशेषतः लोहे का उड़नशील यौगिक-लोह कार्बोनील $Fe(CO)_5$ के प्राप्त करने में सफलता होती है।

कार्बन मोनोआक्साइड के प्रज्वलन के समय ऊष्मा की बड़ी मात्रा उन्मुक्त होती है। इसीलिये विभिन्न गैस जेनरेटरों वाले प्लांटो में इसे प्राप्त करके ईंधन-गैस के रूप में प्रयोग करते हैं।

भूगर्भीय गैसीकरण (Gasification) के समय कोयला बहुत बड़े अंश में कार्बन मोनोआक्साइड में परिणत हो जाता है, जो बाद में पाइपों के जरिये ऊपर लाया जाता है और उपयोग किया जाता है।

कार्बन मोनोआक्साइड की सहायता से सम्भवतः हाइड्रोसियनिक एसिड HCN प्राप्त हो सकता है, उदाहरण के लिये, अमोनिया से पारस्परिक प्रतिक्रिया कराके $CO + NH_3 = HCN + H_2O$ हाइड्रोसियनिक एसिड की गणना सर्वोच्च विषैले पदार्थों में की जाती है।

ऊंचे तापमानों में कार्बन बहुत सी धातुओं से संयोजित हो जाता है और कार्बाइडें बनाता है। सर्वाधिक प्रसिद्ध वोल्फ्राम की कार्बाइडें WC तथा W_2C हैं। अतिरिक्त कठोर (Super Hard) मिश्रधातु, जिनकी कठोरता हीरे की कठोरता के समीप तक पहुंचती हैं, के बनाने में वोल्फ्राम की कार्बाइडें अनिवार्य होती हैं।

कार्बन के हाइड्रोजन से बने यौगिकों में सर्वाधिक सरल यौगिक, जो कार्बनिक एवं अकार्बनिक यौगिकों की मिलने वाली सीमा पर स्थित है, मीथेन गैस CH_4 है। उसे ऊंचे तापमान पर सीधे कार्बन और हाईड्रोजन का मेल करा कर प्राप्त करते हैं। प्रकृति में कार्बनिक पदार्थों के विघटन के समय यदि वायु नहीं पहुंचती है तो मीथेन बनती है। प्राकृतिक ईंधन की गैसों में मीथेन का मुख्य अंश होता है।

मीथेन में हाइड्रोजन के परमाणु पूर्णतः अथवा अंशतः हैलोजन के परमाणुओं से प्रतिस्थापित (Replace) किये जा सकते हैं। यदि तीन हाइड्रोजन परमाणुओं को तीन क्लोरीन के परमाणुओं से प्रतिस्थापित किया जाता है तो क्लोरोफार्म (CHCl) प्राप्त होता है, जो चिकित्सालयों में विस्तृत रूप से प्रयोग

होता है । और यदि हाइड्रोजन के चारों परमाणु क्लोरीन प्रमाणुओं से विस्थापित हो जाते हैं तो कार्बन टेट्राक्लोराइड बनता है तो अत्यन्त उत्तम अदाह्य (Lin-combustible) विलायक होता है । कार्बन और हैलोजनों के मेल से बने $CCl_2F_2CClF_3$ आदि के समान यौगिकों के विभिन्न मिश्रणों का टेकनिकल नाम फ्रिआन (Frion) है । उनका उपयोग रेफरीजरेटरों की तकनीक में किया जाता है ।

इस प्रकार से, और अपने इन्आर्गेनिक यौगिकों की विविधता के कारण ही, कार्बन को आवर्त सारणी के कुल तत्वो के मध्य एक प्रमुख स्थान प्राप्त है ।

सिलिकन—इन्आर्गेनिक प्रकृति का भगवान

सिलिकन एक प्रमुख रसायनिक तत्व है, जिसके परमाणु विस्तृत रूप से पृथ्वी पर फैले हैं । यद्यपि हमारे ग्रह का आवरण असमान विभिन्न खनिजो की विशाल मात्राओं से बना है, सिलिकन उनमें से अधिकांश में प्रमुख स्थान रखता है । पृथ्वी के पपड़े मे उस की तोल का लगभग तीस प्रतिशत सिलिकन का अंश होता है । सिलिकन कुल पौधों में है । वह विशेषकर अधिक मात्रा में हार्सटेल (horse-tail) और बास में होता है ।

थोड़ी मात्रा में सिलिकन जीवों के शरीरों में भी पाया जाता है । कुछ अणु जीव (organısm) सागरीय जल में घुले सिलिकन अम्ल से अपने छोटे शरीरों के हड्डी के ढाचे निर्माण करते हैं । मानव शरीर में सिलिकन 0 I प्रतिशत से कम होता है और उसकी जैवीय भूमिका अभी तक अज्ञात है ।

सिलिकन का परमाणु भी कार्बन के परमाणु की भाँति ही चार संयोजकतायें रखता है । इसका अर्थ है कि वह भी एक संयोजकता वाले हाइड्रोजन या क्लोरीन आदि के चार परमाणुओं से संयोजित हो सकता है ।

सिलिकन की विशाल रसायनिक सक्रियता इस तत्व को प्रकृति में स्वतन्त्र रूप से नहीं प्राप्त होने देती ।

सिलिकन के एक परमाणु और आक्सीजन के दो परमाणुओ के इलेक्ट्रोनिक आवरण बड़ी सफलतापूर्वक मेल करते हैं और सिलिकन-डाई-आक्साइड बनाते हैं । यह अत्यन्त कठिनता से गलने वाला, कठोर, रसायनिक दृष्टि से कम सक्रिय पदार्थ होता है । सिलिकन डाई-आक्साइड प्रकृति में विभिन्न रूपों में प्राप्त होता है । सबसे अधिक वह श्वेत स्फटिक शिराओं (Quartz veins) के रूप में मिलता है, जो अधिक मुलायम खनिजों को काट देता है, या पहाड़ी चट्टानों के घिसन से प्राप्त श्वेत स्फटिक रेत के रूप में मिलता है ।

विरल रूप मे (rarely) मिलावटों द्वारा विविध रङ्गों से अलंकृत स्फटिक

की अन्य विभिन्न किस्में भी प्राप्त होती हैं, जैस्पर (सूर्यकांत) अगेट (अकीक) कैल्सीडोनी (Chalcedony), ट्रिडिमाइट, क्रिस्टोबलाइट (Cristobalite)।

साधारणतः, स्फटिक आपस में खूब गुन्थ कर जुड़े हुए श्वेत, अर्ध पारदर्शी छोटे मणिभों से बना होता है। वह अत्यन्त दृढ़ होता है। अधिकांश दूसरे खनिजों की अपेक्षा वह अधिक दृढ़ होता है। पर्वतीय चट्टानों के ऋतुक्षरण (Wearhering) के समय वह सबसे अन्त में ध्वस्त होता है और 'अवशेषों' के रूप में स्फटिक शिरायें छोड़ता है जिनके ध्वस्त होने पर स्फटिक रेत प्राप्त होती है। इस रेत में प्रायः सोना (रेत के रूप में अथवा कुछ किलोग्राम तक के भार के डलों के रूप मे) पाया जाता है। स्फटिक के विशेष रूप से दृढ़ संचित रूप जैस्पर (सूर्यकांत) एवं अगेट (अकीक) हैं। जैस्पर और अगेट से सुन्दर सजावटों का सामान और कुछ तकनीकी पुरजे—रसायनिक ओखली, बहुत ठीक (शुद्ध) तोलने वाले तराजुओं के प्रिज्म, घड़ियों और तोलने के यन्त्रों मे प्रयोग होने वाले कठोर पत्थर—बनाये जाते हैं।

प्रायः प्रकृति में स्फटिक के बड़े पारदर्शी मणिभ भी प्राप्त होते हैं जैसे—बिल्लौर। मैडागास्कर में प्राप्त होने वाले बिल्लौरों में एक आठ मीटर लम्बा था।

पहले बिल्लौर केवल सजावटों के लिये इस्तेमाल होता था, किन्तु अब वैज्ञानिकों ने इस सुन्दर खनिज के अनेक असामान्य गुण खोज निकाले हैं। और उसका उपयोग अब विज्ञान एवं तकनीक में बड़े विस्तृत रूप से होने लगा है। यदि बिल्लौर के मणिभ से काटी गई प्लेट को निश्चित दिशा में टेढ़ा (bend) किया जावे तो उसके धरातल पर विद्यु त्-प्रभार आ जावेगा। इस गुण के कारण बिल्लौर को दाब-वैद्यु तीय (Piezo electric) पदार्थ कहा जाता है। इस प्रकार के गुण केवल स्फटिक ही में नही होते हैं, दूसरे पदार्थों (उदाहरण के लिये सेग्नेतीव लवण) में भी पाये जाते हैं। किन्तु स्फटिक (Qutriz) मे वे विशेष यान्त्रिक गुणों से सफलता पूर्वक संयुक्त होते हैं। वह अधिक दृढ़, चिमड़ा और लचीला होता है। यदि स्फटिक की स्वरित्र द्विभुज (tuning-fork) बनाई जाती है और उसे शून्यक (vacuum) मे रखा जाता है तो वह घण्टों कम्पन (oscilation) करती रहती है। स्फटिक पर लगभग कोई प्रभाव तापमान से नही पड़ता है। और उसका प्रसरण गुणांक (Coefficient of expansion) बहुत ही तुच्छ होता है।

यदि धातु की पर्त से ढकी हुई स्फटिक की प्लेट की धरातलों पर प्रत्यावर्ती विद्यु दाह (Alternating electric current) डाली जाये तो प्लेट में दोलन (oscilation) उत्पन्न हो जायेगा। दोलन प्रतिध्वनि (Resonance) प्राप्त करने पर शक्ति ग्रहण करते हैं, वैद्यु त मैदान की आवृत्ति (frequency), उसके स्वन्यत

दोलन (oscilation) की आवृत्ति के बराबर हो जाती है। स्फटिक की दाब—वैद्युतीय प्लेटें विस्तृत रूप से तकनीक में प्रयोग की जाती हैं। उनकी सहायता से रेडियो स्टेशनों की तरंग दीर्घता (wave length) में स्थिरता लाई जाती है व कर्णातीत (ultrasonic) ध्वनि प्राप्त की जाती है। दाब वैद्युतीय प्लेटें अत्यन्त ऊँची परिशुद्धता की "स्फटिक" घड़ियों के बनाने में काम आती हैं, जो विशाल दबावों, उदाहरण के लिये हथियारों की नालों में पैदा होने वाले दबावों के नापने में प्रयोग की जाती हैं।

वैज्ञानिकों ने यह प्रतिपादित किया है कि स्फटिक न केवल दिखाई पड़ने वाले प्रकाश के लिये पारदर्शी हैं, वरन् पारजम्बु (ultra violet) किरणों को भी वह अच्छी प्रकार अपने से बाहर निकलने देता है। इसीलिये बिल्लौर के मणिभों से बहुत बड़ी परिशुद्धता रखने वाले प्रकाशीय (optical) उपकरणों के पुरजे—लेन्स और प्रिज्म—तैयार किये जाते हैं।

सिलिकन का द्विआक्साइड (Dioxide) सरलतम यौगिक है, किन्तु वह प्रकृति में सर्वाधिक फैला हुआ सिलिकन का यौगिक नहीं है। सिलिकन की अत्यन्त अधिक विशाल मात्रायें खनिजो के अंशो में समाविष्ट हैं, जो पृथ्वी के पपड़े का *आधार बनाते हैं : बैसाल्ट (basalt), नाइस (gneiss) तथा अन्य।*

मनुष्य सिलिकन रखने वाले अधिकाश खनिजो का विस्तृत रूप से उपयोग करता है। अभ्रक (mica) तथा ऐस्बेस्टास (Asbestos) अपने गुणों के कारण हमारे लिये बिल्कुल अनिवार्य पदार्थ बन गये हैं। अभ्रक के मणिभ पतली परतों मे सरलता से उधेड़े जा सकते हैं। उसे विभिन्न गरमाने वाले तारों, ऊँची उत्तमता के विद्युत–कन्डेन्सरों, परमाणु भौतिकी (atomic physics) मे उपयोग किये जाने वाले प्रभारित कणों के मीटरों की छोटी से छोटी खिड़कियों (slits) के बनाने में उपयोग किया जाता है। प्राचीन समय में जब मनुष्य खिड़कियों के लिये शीशे नही बना सकता था, खिड़कियो मे माइका की प्लेटें लगाई जाती थीं।

अस्बेस्टास एक श्वेत तन्तुमय (रेशेदार) खनिज है, जो 1000^0c से ऊपर तक के तापमान सहन कर सकने वाला, ऊष्मा और बिजली का उत्तम विसंवाहक अथवा पृथग्न्यास (Insulator) होता है। ऐस्बेस्टास से अदाह्य गत्ता (Card-board) एवं न जलने वाला कपड़ा तय्यार किया जाता है। ऐस्बेस्टास का सीमेंट से मिश्रण, एस्बोसीमेन्ट एक उत्तम भवन निर्माण कराने वाला पदार्थ होता है जिसमें सीमेंट की दृढ़ता तथा ऐस्बेस्टास के लचीले पन दोनो का सुमेल उपस्थित होता है।

सिलिकन के गुण

बहुत समय तक वैज्ञानिक सिलिकन को पर्याप्त शुद्ध रूप में नहीं प्राप्त कर

सके और न उसके गुणों का अनुसन्धान कर सके। इस समय शून्यक (vacuum) में आसवन (Distillation) के द्वारा या अन्य उपायों से 99.999 प्रतिशत परिशुद्ध सिलिकन प्राप्त किया जा सकता है। शुद्ध सिलिकन भूरा, फौलाद के रंग का कठोर मणिभ बनाता है, जिसमें परमाणुओं की स्थिति उसी प्रकार होती है जैसी हीरे में। किन्तु हीरा उत्तम इन्सुलेटर (विसंवाहक) है और सिलिकन अर्ध चालक है। अतिरिक्त शुद्धता रखने वाला सिलिकन ऊंची सक्रियता वाले सौर फोटो इलेक्ट्रिक सेलों के, जिनका फलोत्पादक सक्रियता गुणांक बहुत ऊंचा होता है बनाने में अनिवार्य होता है।

सिलिकन की सौर फोटो इलेक्ट्रिक सेल (Solar photo electric cell) सिलिकन की अत्यन्त-पतली अर्ध पारदर्शी पर्त से ढकी हुई धातु की एक प्लेट होती है। सूर्य का प्रकाश सिलिकन के परमाणुओं से इलेक्ट्रोनों को बाहर निकालता है, जो विद्युत धारा निर्माण करते हैं। कास्मिक यानों को विद्युत्-ऊर्जा की रसद सिलिकन के फोटो इलेक्ट्रिक सेल वाली और बैटरियाँ प्रदान करती हैं।

सिलिकन से अर्ध चालकीय द्वियग्र (Diod) एवं त्रियग्र (Triode) निर्माण किये जाते हैं। रेडियो तकनीक में इनका उपयोग रिसीवर, प्रवर्धक (amplifier), रडार तथा अन्य विभिन्न उपकरणों में किया जाता है।

साधारण तापमान पर सिलिकन निष्क्रिय पदार्थ होता है। किन्तु गर्म होने पर वह लगभग सभी तत्वों से संयोजित होता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण उसके प्राकृतिक यौगिक खनिजें जिनके बारे में हम उल्लेख कर चुके हैं, तथा सिलिकन अम्ल H_2SiN_3 के असंख्य लवण हैं। यह अत्यन्त दुर्बल अम्ल है, जो पानी में साधारण घोल न बना कर कलायद्रव (Colloidal) घोल बनाता है। कलायद्रीय घोल विलायक में लटके हुए (Suspended) विलेय के अत्यन्त सूक्ष्म कणों से बनता है। प्रकाश में वह धुंधला दिखाई पड़ता है, किन्तु उसके कण नीचे में नहीं बैठते हैं क्योंकि विलेय के कण बहुत ही सूक्ष्म होते हैं। सिलिसिक एसिड के लगभग सभी लवण पानी में अविलेय होते हैं। उनमें से कुछ—फेल स्पार (स्फतीय) प्रकृति में बहुतायत से पाये जाते हैं, केवल सोडियम सिलिकेट Na_2SiO_3 ही पानी में अच्छी प्रकार घुलता है। उसका पानी में घोल द्रव-शीशा (liquid glass) कहलाता है और सरेस बनाने तथा काष्ठ और वस्त्रों के भिगोने के लिए अग्नि संरक्षी पदार्थ बनाने में काम आता है।

शीशा अथवा कांच

यदि सिलिकन न होता तो कांच भी न होता। इस समय विभिन्न प्रकार के कांच ज्ञात हो गये हैं।

दोलन (oscilation) की आवृत्ति के बराबर हो जाती है। स्फटिक की दाब—वैद्युतीय प्लेटें विस्तृत रूप से तकनीक में प्रयोग की जाती हैं। उनकी सहायता से रेडियों स्टेशनों की तरंग दीर्घता (wave length) में स्थिरता लाई जाती है व कर्णातीत (ultrasonic) ध्वनि प्राप्त की जाती है। दाब वैद्युतीय प्लेटें अत्यन्त ऊँची परिशुद्धता की "स्फटिक" घड़ियों के बनाने में काम आती हैं, जो विशाल दबावों, उदाहरण के लिये हथियारों की नालों में पैदा होने वाले दबावों के नापने में प्रयोग की जाती हैं।

वैज्ञानिकों ने यह प्रतिपादित किया है कि स्फटिक न केवल दिखाई पड़ने वाले प्रकाश के लिये पारदर्शी हैं, वरन् पारजम्बु (ultra violet) किरणों को भी वह अच्छी प्रकार अपने से बाहर निकलने देता है। इसीलिये बिल्लौर के मणिभों से बहुत बड़ी परिशुद्धता रखने वाले प्रकाशीय (optical) उपकरणों के पुरजे—लेन्स और प्रिज्म—तैयार किये जाते हैं।

सिलिकन का डिआक्साइड (Dioxide) सरलतम यौगिक है, किन्तु वह प्रकृति में सर्वाधिक फैला हुआ सिलिकन का यौगिक नहीं है। सिलिकन की अत्यन्त अधिक विशाल मात्रायें खनिजों के अंगों में समाविष्ट हैं, जो पृथ्वी के पपड़े का आधार बनाते हैं : बैसाल्ट (basalt), नाइस (gneiss) तथा अन्य।

मनुष्य सिलिकन रखने वाले अधिकांश खनिजों का विस्तृत रूप से उपयोग करता है। अभ्रक (mica) तथा ऐस्बेस्टास (Asbestos) अपने गुणों के कारण हमारे लिये बिल्कुल अनिवार्य पदार्थ बन गये हैं। अभ्रक के मणिभ पतली परतों में सरलता से उधेड़े जा सकते हैं। उसे विभिन्न गरमाने वाले तत्वों, ऊँची उत्तमता के विद्युत-कन्डेन्सरों, परमाणु भौतिकी (atomic physics) में उपयोग किये जाने वाले प्रभारित कणों के मीटरों की छोटी से छोटी खिड़कियों (slits) के बनाने में उपयोग किया जाता है। प्राचीन समय में जब मनुष्य खिड़कियों के लिये शीशे नहीं बना सकता था, खिड़कियों में माइका की प्लेटें लगाई जाती थीं।

ऐस्बेस्टास एक श्वेत ततुमय (रेशेदार) खनिज है, जो 1000°c से ऊपर तक के तापमान सहन कर सकने वाला, ऊष्मा और बिजली का उत्तम विसंवाहक अथवा पृथग्न्यास (Insulator) होता है। ऐस्बेस्टास से अदाह्य गत्ता (Card-board) एवं न जलने वाला कपड़ा तय्यार किया जाता है। ऐस्बेस्टास का सीमेंट से मिश्रण, एस्बोसीमेन्ट एक उत्तम भवन निर्माण कराने वाला पदार्थ होता है जिसमें सीमेंट की दृढ़ता तथा ऐस्बेस्टास के लचीलेपन दोनों का गुणैक्य उपस्थित होता है।

सिलिकन के गुण

बहुत समय तक वैज्ञानिक सिलिकन को पर्याप्त शुद्ध रूप में नहीं प्राप्त कर

सके और न उसके गुणों का अनुसन्धान कर सके। इस समय शून्यक (vacuum) में आसवन (Distillation) के द्वारा या अन्य उपायों से 99 999 प्रतिशत परिशुद्ध सिलिकन प्राप्त किया जा सकता है। शुद्ध सिलिकन भूरा, फौलाद के रंग का कठोर मणिभ बनाता है, जिसमें परमाणुओं की स्थिति उसी प्रकार होती है जैसी हीरे में। किन्तु हीरा उत्तम इन्सुलेटर (विसंवाहक) है और सिलिकन अर्ध चालक है। अतिरिक्त शुद्धता रखने वाला सिलिकन ऊंची सक्रियता वाले सौर फोटो इलेक्ट्रिक सेलों के, जिनका फलोत्पादक सक्रियता गुणांक बहुत ऊंचा होता है बनाने में अनिवार्य होता है।

सिलिकन की सौर फोटो इलैक्ट्रिक सेल (Solar photo electric cell) सिलिकन की अत्यन्त-पतली अर्ध पारदर्शी पर्त से ढकी हुई धातु की एक प्लेट होती है। सूर्य्य का प्रकाश सिलिकन के परमाणुओं से इलेक्ट्रोनों को बाहर निकालता है, जो विद्युत धारा निर्माण करते है। कास्मिक यानों को विद्युत्-ऊर्जा की रसद सिलिकन के फोटो इलेक्ट्रक सेल वाली सौर बैटरियां प्रदान करती हैं।

सिलिकन से अर्ध चालकीय द्विध्रुव (Diod) एवं त्रिध्रुव (Triode) निर्माण किये जाते हैं। रेडियो तकनीक में इनका उपयोग रिसीवर, प्रवर्धक (amplifier), रडार तथा अन्य विभिन्न उपकरणों में किया जाता है।

साधारण तापमान पर सिलिकन निष्क्रिय पदार्थ होता है। किन्तु गर्म होने पर वह लगभग सभी तत्वों से संयोजित होता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण उसके प्राकृतिक यौगिक खनिजें जिनके बारे में हम उल्लेख कर चुके हैं, तथा सिलिकन अम्ल H_2 Si N_3 के असंख्य लवण हैं। यह अत्यन्त दुर्बल अम्ल है, जो पानी में साधारण घोल न बना कर कलायडल (Colloidal) घोल बनाता है। कलायडीय घोल विलायक में लटके हुए (Suspended) विलेय के अत्यन्त सूक्ष्म कणों से बनता है। प्रकाश में वह धुंधला दिखाई पड़ता है, किन्तु उसके कण नीचे में नहीं बैठते हैं क्योंकि विलेय के कण बहुत ही सूक्ष्म होते है। सिलिसिक एसिड के लगभग सभी लवण पानी में अविलेय होते हैं। उनमें से कुछ—फेल स्पार (स्फतीय) प्रकृति में बहुतायत से पाये जाते हैं, केवल सोडियम सिलिकेट $Na_3Si\ O_2$ ही पानी में अच्छी प्रकार घुलता है। उसका पानी में घोल द्रव-शीशा (liquid glass) कहलाता है और सरेस बनाने तथा काष्ठ और वस्त्रों के भिगोने के लिए अग्नि संरक्षी पदार्थ बनाने में काम आता है।

शीशा अथवा कांच

यदि सिलिकन न होता तो कांच भी न होता। इस समय विभिन्न प्रकार के कांच ज्ञात हो गये हैं।

साधारण शीशा (खिड़कियों और बोतलों का शीशा) सिलिसिक अम्ल का एक जटिल लवण $Na_2 Ca Si_6 O_{14}$ या $Na_2O. CaO 6Si O_2$ होता है। उसे विशाल भट्टियों में रेत $Si O_2$ चूने का पत्थर $Ca CO_3$ तथा सोडा Na_2CO को गला कर प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार के शीशे में लोहे मिलावटों से प्रायः पीतिमा युक्त हरा रङ्ग आ जाता है। यदि रंगीन शीशा प्राप्त करना होता है तो गले हुए शीशे में विभिन्न मिलावटें--कोबाल्ट नीला रंग लाने के लिये, क्रोमियम हरा रङ्ग लाने के लिये आदि-- मिलाते हैं। विशेष चमकों वाले सजावट के शीशे (बिल्लोरी शीशे) बनाने के लिये सीसा के लवण मिलाये जाते हैं।

साधारण शीशा में एक बड़ी कमी होती है: वह चोट लगने से सरलता से टूट जाता है और असमानता से गर्म होने पर चिटख जाता है। हमारा कांच का उद्योग (सोवियत संघ) मोटर कारों, बसों आदि के लिये विशेष प्रकार का दृढ़ीकृत न टूटने वाला शीशा निकालता है। दृढ़ीकरण (tempering) के फलस्वरूप ऐसे शीशे की बाहरी पर्तें शक्ति पूर्वक सदाबित (Compressed) तथा अन्दर की पर्तें खिंची हुई (Streched) होती हैं, जिससे यह साधारण शीशे की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है और यदि किसी प्रकार टूटता भी है तो उसके टुकड़े कुन्द होते हैं।

रसायनिक बर्तनों को बनाने के लिए ऊष्मा से दृढ़ता दिखाने वाले पायरेक्स शीशा (Pyrex glass) का उपयोग किया जाता है। और विशेष ऊंचे तापमानों पर काम करने के लिए स्फटिक कांच (शुद्ध SiO_2) काम में लाया जाता है। वह गर्म करने से लगभग बिलकुल ही नहीं बढ़ता है इसलिए उसे लाल तप्त करके ठंडे पानी में डाला जा सकता है। वह कड़केगा (Crack) नहीं। कुछ किस्म के शीशों में धातु के तार सरलता से झाले (Solder) जा सकते हैं। ऐसे शीशों का प्रयोग बिजली के लैंपों और रेडियो वाल्वों के बनाने में किया जाता है।

विशेष ध्यान से ठीक विशेष नुस्खे के अनुसार—प्रकाशीय (optical) शीशे को 'पकाया' जाता है। दूरबीन या कैमरा के अभिदृश्यक (objectives) केवल उसी समय अच्छे प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करते हैं जब प्रकाशकीय शीशा पूर्णरूप से पारदर्शी होता है पालिश करने (grinding) के समय प्रकाशकीय शीशा से बनी वस्तुयें अपनी बनावट न बदल दें इसके लिए तैयार वस्तुओं को ध्यानपूर्वक तापानुशीतित (Anneal) -- बहुत धीमे-धीमे ठंडा—किया जाता है। सर्वाधिक अच्छे परिणाम देने वाले अभिदृश्यक वे होते हैं जिनके लैंस दो प्रकार के शीशों से वक्रित (Curved) किये जाते है, क्राउन प्रकाश कांच तथा फ्लिंट कांच। हल्के

क्राउन कांच से उत्तल (Convex) लेन्स तथा भारी फ्लिन्ट कांच अवतल (Concave) लेन्स बनाते हैं। इस प्रकार का मेल अभिदृश्यक (objective) को प्रत्येक रंग की रश्मियों को एक बिन्दु पर संकेन्द्रित करने में सहायता देता है और प्रतिबिम्ब के किनारों पर रंगीन पट्टियां नहीं बनने देता।

मृत्कला (Ceramics)

अस्मरणीय काल से मानव अपने जीवन में मिट्टी के बर्तन प्रयोग करता आया है। मिट्टी से बनाई गई वस्तु का सबसे पुराना उदाहरण ईंट है। मिट्टी और रेत के सम मिश्रण से ईंट तैयार करते हैं, सुखाते हैं, और फिर पकाते हैं। इस प्रकार पकने के बाद उपरोक्त मिश्रण ईंट का रूप ले लेता है, जो न पानी में घुलता है न पानी सोखता है।

मनुष्य अतीत काल से कुम्हार के धंधे–मिट्टी के बर्तन बनाने की दस्तकारी—से परिचित है। कुम्हार धीमे घूमते हुए चाक पर सनी हुई मिट्टी का धक्का रखता है और हथेली की प्रवीण चालों द्वारा आकार हीन मिट्टी के पिण्ड से मटका, तश्तरी, अन्य बरतनों की दीवालें खींचता है। तैयार बर्तन में डिजाइन अथवा नमूना बनाने के बाद, उसे पतले तागे से काट देता है और सूखने के लिए रख देता है। हर प्रकार की मिट्टी की वस्तुयें तैयार करने में उनको आग से पकाने की क्रिया अनिवार्य है। जितने ही ऊंचे तापमान पर वे पकाये जाते हैं उतने ही उत्तम कोटि के वे होते हैं।

चीनी मिट्टी (China clay) और फेयंस (Faience) के बर्तन एक ही प्रकार की श्वेत मृत्तिका—केओलिन (Kaolin)($Al_2O_3 . 2SiO_2 . H_2O$) से बनाये जाते हैं, किन्तु चीनी मिट्टी के बर्तनों को अधिक ऊंचे तापमान पर पकाया जाता है और इस कारण वे अर्ध पारदर्शी हो जाते हैं। चीनी की मिट्टी और फेएन्स के बर्तनों के ऊपर सरलता से गलने वाले (fusible) के शीशे की पर्त—ग्लेज (glaze) चढ़ा दी जाती है।

वर्तमान तकनीक में मृत्तिका से बनी वस्तुयें विशाल भूमिका अदा करती हैं। वे विस्तृत रूप से बिजली और रेडियो उद्योगो मे उपयोग की जाती हैं। चीनी मिट्टी की विभिन्न किस्में निकाली गई हैं, जिनमें शुद्ध केओलिन के अतिरिक्त, अनेक अन्य रसायनिक पदार्थ शामिल होते हैं और ऊंचे विसंवाही (Insulating) गुण उपस्थित होते हैं।

सिलिकन की अन्य दिलचस्पियां

शीशा और सिरेमिक के अतिरिक्त दूसरे बहुत से महत्वपूर्ण एवं लाभकर यौगिक सिलिकन बनाते हैं। सिलिकन का कार्बन से यौगिक—कार्बोरेंडम (Carborandum) SiC सिलिकन-डाइ-आक्साइड (SiO_2) और, कार्बन के

मिश्रण को तापनशीतन (anneal) करके प्राप्त किया जाता है। वह केवल हीरा से कठोरता में कम होता है, और घिसाई करने वाले (grinding) तथा एमरी (रेगमाल करने वाले) चक्र बनाने के काम में आता है जिनसे कठोर से कठोर फौलाद पर काम किया जा सकता है।

कार्बन के समान ही सिलिकन भी अपने परमाणुओं की शृंखला बना सकता है। सिलिकन के यौगिक SiH_4—सिलेन (Silane), Si_2H_6 तथा इसी प्रकार Si_6H_{14} तक ज्ञात है, किन्तु वे हाइड्रोकार्बन यौगिकों की अपेक्षा कहीं अधिक कम स्थायी होते हैं और वायु में स्वयं जलने की क्षमता प्रगट करते हैं। इस जगह भी, जैसा कि सदैव, सिलिकन की अपना सबसे स्थायी यौगिक SiO_2 बनाने की चेष्टा प्रगट होती है। कार्बोरेंडम के उदाहरण से यह स्पष्ट है कि सिलिकन और कार्बन का जोड़–Si–C अत्यन्त दृढ होता है। वैज्ञानिकों ने इसका लाभ उठा कर तेलों, वार्निशों और अन्य पदार्थों के अणुओं की रचना में सिलिकन के परमाणुओं को कुछ कार्बन परमाणुओं के स्थान पर समाविष्ट किया है, जिससे कार्बन–सिलिकन की मिश्रित दृढ़ शृंखलायें प्राप्त की जा सकी हैं। इस प्रकार के यौगिकों को सिलिको-आर्गेनिक कहा जाता है। वे अत्यन्त दृढ होते हैं और ऊंचे तापमान से भयभीत नहीं होते हैं। वर्तमान समय मे सिलिको-आर्गेनिक यौगिको का उपयोग ताप स्थायी (heat stable) तेलो, वार्निशों एवं एनमेलो (Enamels) के बनाने में होता है। विद्युत् मोटरों में, जिनमें सिलिको-आर्गेनिक पृथग्न्यास (Insulators) में तार से वाइंडिंग की जाती है, उसी प्रकार के साधारण वाइन्डिंग वाले मोटरों की अपेक्षा दो गुनी अधिक शक्ति होती है।

सिलिकन के परमाणुओं के एक दूसरे से जोड़ की अदृढता यह बताती है कि कार्बन के यौगिकों के बगैर जीवन असम्भव है। सिलिकन के परमाणु कभी, किन्हीं भी परिस्थितियों मे बगैर कार्बन के परमाणुओं के ऐसी बड़ी और जटिल शृंखलायें नहीं बना सकते हैं जैसी कार्बन के परमाणु बनाते हैं। इसी कारण यह वैज्ञानिक परिकल्पना कि "दूसरे संसारों" में सिलिकन के यौगिकों के आधार पर बिल्कुल दूसरे प्रकार का जीवन हो सकता है, बहुत कम आधार रखती है।

सिलिकन के योगिकों की भूमिका मानव जीवन में तीव्र गति से बढ़ रही है। प्रस्तर, सीमेंट, चीनी मिट्टी के सामान, कम जीने वाले धातु को विस्थापित (displace) कर रहे हैं, शीशा और एनेमेलों का उपयोग दिन प्रतिदिन बढता जा रहा है, वर्तमान प्रस्तरों की ढलाई के अध्ययन में सफल प्रयोग किये जा रहे

हैं, रेडियो तकनीक में शुद्ध सिलिकन अनिवार्य अंग बन रहा है, दैनिक जीवन में तारस्थ यी सिलिको-आर्गेनिक यौगिक समाविष्ट हो रहे हैं :

जीवन-हीन और जीवन

नाइट्रोजन की खोज अंग्रेज प्रकृति वैज्ञानिक, डेनियल रदरफोर्ड ने 1772 ई. में की थी। वैज्ञानिक वायुमण्डल से पृथक्कृत (Isolated) घण्टी की वायु का "अनुसंधान कर रहा था, जिसमें कुछ देर जीवित रह कर एक चूहा मर चुका था। जीवों का श्वसन (Respiration)" उसने लिखा, "न केवल स्वस्थ वायु को स्थिर वायु ('कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस) में बदल देता है, वरन् स्थिर वायु के कास्टिक पोटाश के द्वारा अवशोषण किये जाने के बाद: शेष अंश यद्यपि चूने के पानी को दूधिया नहीं बनाता है (CO_2 के गुण से विभिन्नता प्रगट करते हुए)—आग की ज्वाला को बुझाता है और जीवन को समाप्त कर देता है।"

नाइट्रोजन का सर्वप्रथम लक्षण नकारात्मक पक्ष से प्राप्त हुआ है।

कदाचित ही किसी अन्य तत्व का भाग्य नामकरण के समय इतना फूटा रहा हो जितना कि नाइट्रोजन का। यूनानी भाषा में "अज़ोतिकोस" (नाइट्रोजन) के अर्थ हैं "जीवन हीन"। जर्मनी में इसे और भी सीधे तरीके से "गला घोट पदार्थ" (stickstoff) कहते थे।

जीवन हीन और गला घोंट""किन्तु फिर भी, नाइट्रोजन और जीवन एक दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते हैं।

"जीवन एल्ब्यूमनीय शरीर (Albuminous body) के अस्तित्व (existence) का एक रूप है।" एंगेल्स ने कहा था। और अवश्य ही नाइट्रोजन के हो बगैर ऐल्ब्यूमीन का अस्तित्व नहीं हो सकता है।

पृथ्वी का वनस्पतीय एवं जैवीय शरीरों का कुल विशाल पदार्थ (mass) मूलतः चार तत्वों से बना है, जिनके बारे में शिलेर की चतुष्पदी कविता कही जा सकती है :

Vier Elementen	चार तत्व
Innig geset	आपस में मिलते हुए
Bilden das leben	जीवन देते हैं
Bauen die welt	और विश्व निर्माण करते हैं।

ये चार तत्व कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन और नाइट्रोजन हैं। नाइट्रोजन का नाम रसायनिक निष्क्रियता का ऋणी है। कमरे के तापमान पर वह केवल लिथियम से सयोजित होता है। नाइट्रोजन का अणु दो परमाणुओं से बनता है, जो अत्यन्त दृढ़ता से जुड़े होते हैं। नाइट्रोजन के 100 अणुओं में से पांच को एक

माय परमाणुओं में विपाटित करने के लिए 3500°C के तापमान की आवश्यकता होती है। और चालीस नाइट्रोजन अणुओं में परमाणुओं के बन्धनों (जोड़ों) को तोड़ने के लिए 8000°C के विशाल तापमान की आवश्यकता पड़ेगी। यह स्पष्ट है कि साधारण परिस्थितियों में नाइट्रोजन न आक्सीजन से संयोजन करता है न हाइड्रोजन से।

ऊंचे तापमान तथा आक्सीजन की थोड़ी मात्रा में नाइट्रोजन विशाल सक्रियता प्रगट करता है। वह धातु-कर्मियों (Metalurgists) को बहुत दुःख देता है। वे जलाये गये धातु से उसे टाइटेनियम मिलाकर धातुमल के रूप में पृथक करते हैं, क्योंकि टाइटेनियम बड़ी उत्सुकता से नाइट्रोजन से संयोजित हो जाता है।

पृथ्वी के पपड़े में, वायुमण्डल में, दूरस्थ ग्रहों में

नाइट्रोजन का मूलभूत अंश वायुमण्डल में है। पृथ्वी के धरातल के प्रत्येक वर्ग मीटर मे 8 टन वायुमण्डलीय नाइट्रोजन उपस्थित है. यह मात्रा दस लाख वर्षों से ऊपर तक हमारे वनस्पति जगत् की भूख को सन्तुष्ट करने की क्षमता रखती है।

पृथ्वी के पपड़े मे उसकी मात्रा मुश्किल से भार का 0.4 प्रतिशत है और यह आश्चर्य की बात नही है। अवश्य ही, नाइट्रोजन निष्क्रिय पदार्थ है। आश्चर्य यह है कि वह संयोजित अवस्था मे कैसे आया ? इस पर वैज्ञानिकों की विभिन्न धारणायें हैं। उनमे से एक के अनुसार नाइट्रोजन-ने उस अतीतकालीन भौग-र्भीय युग मे दूसरे तत्वो से प्रतिक्रिया उपस्थित की थी जब पृथ्वी पिघला हुआ लसदार पदार्थ था, जो ऊपर से पतले ठोस पपड़े से ढका था, जिसे जगह व जगह बाष्पो और गैसो के फव्वारे तोड़ दिया करते थे। गले हुये धातुओ ने नाइट्रोजन से प्रतिक्रिया करते हुए नाइट्राइड बनाये।

सम्भव है नाइट्रोजन कुछ समय बाद उस समय विबन्धित (fixed) हुआ हो जब पृथ्वी गर्म और नम वायु मडल से ढकी थी, जिसमें एक साथ सहस्रों असाधारण शक्ति रखने वाली बिजलियां चमकती रहती थी। उन्होंने ही नाइट्रोजन को आक्सीजन से संयोजित कर दिया और पृथ्वी पर नाइट्रिक एसिड की मूसलाधार वर्षा ले आई। नाइट्रिक एसिड ने पृथ्वी में प्रवेश करते हुये धातुओं से प्रतिक्रिया की और नाइट्रेट लवण बनाये।

पृथ्वी के वायुमंडल के परे भी यौगिकों के रूप में नाइट्रोजन है। अंग्रेज वैज्ञानिक बर्नाल एवं मैसी का सुझाव है कि यदि पृथ्वी पर नहीं तो सौर प्रणाली के बड़े ग्रहों में, वरुण (uranus) और वृहस्पति (Jupiter) में जिनके वायुमंडलों

में अमोनिया है, धातु अमोनियम मिल सकता है, जो उन भारी ग्रहों में खनिजों की शिरायें (mineral veins) बनाता है। साधारण परिस्थितियों में स्वतन्त्र अमोनियम, जो रसायनिक गुणों में पोटेशियम और सोडियम के समान है; नहीं प्राप्त हो पाता, क्योंकि वह तुरन्त अमोनिया और हाइड्रोजन में विघटित हो जाता है।

वैज्ञानिकों ने गणना की है कि परम शून्य (absolute zero) तापमान पर और लगभग 250 हजार वायुमंडलीय दबाव पर धातु अमोनियम रहता है और संतुलन $2\,NH + H_2 \rightleftharpoons NH_4$ दाहिनी ओर झुक जाता है। यह परिस्थिति सौर प्रणाली के दूरस्थ ठंडे ग्रहों में मौजूद है।

सूर्य का वायुमण्डल तटस्थ और आयनीकृत परमाणुओं के रूप में नाइट्रोजन रखता है। नाइट्रोजन की वर्णक्रमीय रेखाएं (spectrum lines) धूमकेतुओं Comets) और निहारिकाओं (Nebulae) में पाई जाती हैं।

जीवों के शरीरों में यह तत्व बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है। शुष्क पदार्थ के कुल भार का 1 से 10 प्रतिशत तक।

गहराई की बीमारी

कमरे की साधारण परिस्थितियों में नाइट्रोजन रंग हीन गैस होती है, जो वायु से कुछ हल्की, स्वाद एवं गन्ध रहित होती है।

हम उसे न ही अनुभव करते हैं, और न वह हमें तंग करती है, पर केवल परिस्थितियों के बदलने की जरूरत है और यह सीधी गैस हमें अपना दाँत दिखाना प्रारम्भ कर देती है।

गोताखोर समुद्र के अन्दर जाता है, नली के द्वारा उसे साधारण वायु पहुँचाई जाती है। कुछ दशक मीटरों की गहराई पर ही वह अपने फेफड़ों में कुछ नया सा अनुभव करने लगता है। उसको मुख में सदाबित (Compressed) नाइट्रोजन का धातु के समान स्वाद अनुभव होने लगता है, और उसे उसका आनन्द का भास होने लगता है। यह नाइट्रोजन जनित नींद लाने वाला प्रभाव है, जो प्रायः "गहराई का रोग" कहा जाता है। जिन लोगों ने अद्भुत फिल्म "स्वर हीन संसार" देखा है उनको ज्ञात होगा कि अपना आत्म-नियन्त्रण (Self Control) कायम रखने के लिये, जो छोड़ कर गहराई की ओर न भागने के लिये""आदि आदि निश्चय रूप से कितने अधिक आत्म निग्रह की आवश्यकता होती है""

यहां पर कारण यह है : दबाव रक्त में, शरीर वसा और ऐल्ब्युमिनी ऊतकों (Adipose and Albuminous Tissues) में घुले हुए नाइट्रोजन की सान्द्रता को बढ़ा देता है।

धीरे-धीरे ऊपर उठने से घुली नाइट्रोजन की अधिकता बाहर निकलती जाती है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि यह हाइड्रोजन शरीर से फेंफड़ो से होकर बाहर निकले जिस प्रकार से उसने शरीर मे प्रवेश किया था। किन्तु यदि ऊपर की चढाई तीव्र गति से होती है तो नाइट्रोजन फेफड़ो तक पहुंच पाकर रुधिर मे बुलबुलो के रूप मे बाहर निकल पड़ती हैं। ये बुलबुले कोशिका-रुधिर वाहिकाओं (apillary blood uessels) को अवरुद्ध कर देते हैं। उस समय शरीर में भयंकर वेदना होती है और मृत्यु तक हो सकती है। उपरोक्त फिल्म में यह दिखाया गया है कि गहराई से ऊपर बहुत तेजी से आने वाले गोताखोर को किस प्रकार पर्याप्त काल तक आवात मुद्रित (hermitically sealed) कक्षा के अन्दर ऊंचे दबाव में रखा जाता है। रुधिर वाहिकाओं को अवरुद्ध होने से बचाने के लिए चढाई धीमे धीमे की जाती है और साधारण वायु के स्थान पर हीलियम और आक्सीजन का मिश्रण दिया जाता है। हीलियम हलकी गतिशील गैस होने के कारण शीघ्रता से शरीर से निकल जाती है।

नाइट्रोजन अपने रूप में

यदि नाइट्रोजन को -195.8^{0} (ऋण एक सौ पंचानवे दशमलव आठ अंश सेंटीग्रेड) तक ठंडा किया जावे तो वह द्रव रूप मे और -210.5 (ऋण दो सौ दस दशमलव पाच अंश सेन्टीग्रेड) पर ठोस रूप में परिणत हो जाती है। उसे द्रव वायु को आसवित (Distil) करके प्राप्त किया जाता है।

द्रव नाइट्रोजन का उपयोग खाद्य-पदार्थों के हिमीकरण (freezing) में किया जाता है। पदार्थ को ऐसी सुई से बेंधते हैं, जिससे हो कर द्रव नाइट्रोजन अन्दर समाविष्ट होता रहता है। वह पदार्थ के भीतर पेवस्त होते हुए वाष्पीकृत हो जाता है और आधानपात्र (container) की कुल वायु को विस्थापित करके उसका स्थान लेता है, इसके बाद आधान पात्र को समुद्रित (hermetically sealed) कर देते हैं। उसे बगैर कोई अतिरिक्त ठंडक दिये हुए हर प्रकार से पृथ्वी के हर कोने में ले जाया जा सकता है। इस प्रकार का आधानपात्र न्यूयार्क से लका भेजा गया, और उसमें रखे हुये पदार्थ निर्दिष्ट स्थान पर हिमीकरण (Freezing) के छः सप्ताह बाद उत्तम अवस्था में पहुंचे।

नाइट्रोजन को उस जगह उपयोग किया जाता है जहां तटस्थ भरने वाला पदार्थ यानी तटस्थ माध्यम आवश्यक है। उसे विद्युत लैम्पों में भरा जाता है। जहां बेन्ज़ीन होता है सदैव आग लगने का भय बना रहता है। विस्फोट से बचने के लिये बेन्ज़ीन को पम्प करने के समय नाइट्रोजन का उपयोग किया जाता है। म्यूज़ियम में बहु मूल्य चित्र नाइट्रोजन से भरे हुए सिलिण्डरो मे रखे जाते

हैं। वायु रंगो को नष्ट कर देती हैं। हमारे समय का इसका सब से प्रधान उदाहरण यह है कि रेपीन के चित्र 'अप्रत्याशित' ने अपने समय में ही रंगों की असाधारण चमक व ताजगी खोदी थी। समय एवं वायु ने उनको रगों को हल्का होने के लिये विवश कर दिया था।

किन्तु ये नाइट्रोजन के उपयोग के केवल कुछ साधारण उदाहरण हैं। उत्पादित-नाइट्रोजन का मुख्य अंश अमोनिया के उत्पादन में काम आता है।

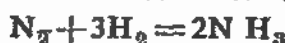
महान एन-एच थ्री (NH_3) तीक्ष्ण लाक्षणिक गंध वाली इस नाम से विख्यात द्रव अमोनिया को कौन नहीं जानता है? यह पानी में अमोनिया के घोल के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

अमोनिया नाइट्रोजन का हाइड्रोजन से यौगिक NH_3 है। नाइट्रोजन परमाणु यहां पर अपने सबसे ऊपरी पाच इलेक्ट्रोन रखने वाली कक्षा में तीन इलेक्ट्रोनों की कमी पूर्ति करके निष्क्रिय गैस का बाह्य कक्ष मे आठ इलेक्ट्रोन रखने वाला ढांचा धारण कर लेता है।

कमरे की परिस्थितियों में अमोनिया हल्की अत्यन्त तीक्ष्ण गंध वाली गैस होती है। वह पानी में अच्छी प्रकार घुलती है। यहा हमारे सामने एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ मे घुलने की सर्वोच्च क्षमता का उदाहरण है : एक घन मीटर हिम जल 1176 घन मीटर अमोनिया अपने मे सोख सकता है। अमोनिया से भरे फ्लास्क में पानी फव्वारे के रूप में तेजी से धसता है। पानी में अमोनिया की असाधारण घुलनशीलता एक लम्बे अर्से तक उसे गैस के रूप में प्राप्त करने में बाधक बनी रही। केवल अठारहवी शताब्दी में प्रीस्टली ने पारा का उपयोग करके अमोनिया को गैस के रूप में प्राप्त किया।

वायु में सदैव काफी मात्रा अमोनिया की विद्यमान रहती है। आर्गेनिक पदार्थ सड़ने पर अपनी नाइट्रोजन अमोनिया के रूप मे विमुक्त करते है।

प्रयोगशालाओं में अमोनिया के लवणो पर अल्केली (भस्म) द्वारा प्रतिक्रिया करा के प्राप्त की जाती है। अमोनिया औद्योगिक उत्पादन नाइट्रोजन का हाइड्रोजन से सीधे संयोजन करा के किया जाता है :—



$$N_2 + 3H_2 = 2NH_3$$

यह एक आदर्श प्रतिवर्ती क्रिया (typical reversible process) है, और कैसी भी परिस्थितियां हों, समाप्ति तक नही चलती हैं।

इस शताब्दी के प्रारम्भ में वैज्ञानिकों ने नाइट्रोजन को हाइड्रोजन से सीधे संयोजित करने का प्रयत्न ऊंचे दबावों की सहायता से प्रारम्भ किया। इन दोनों गैसों से भरे बर्तन को महासागरों की गहराई में धंसाया गया। 1901 ई. में फ्रेंच वैज्ञानिक ले शातेलिये ने एक मोटर का निर्माण किया जिसमें नाइट्रोजन

ग्रौर हाइड्रोजन के मिश्रण को 100 वायुमंडलीय दबावों पर रखा जा सकता था। वैज्ञानिक का विचार था कि संदावित मिश्रण बिजली की चिनगारी से विस्फोटित हो जायेगा ग्रौर ग्रमोनिया प्रदान करेगा। प्रयोग सफल नहीं हुग्रा। सिलिण्डर के ग्रन्दर वायु पहुंच गई ग्रौर बनने वाले प्रस्फोटक मिश्रण ने सारे ढाचे को तोड़ दिया।

इस, सम्भवतः सरल, रसायनिक प्रतिक्रिया के ग्रध्ययन में वर्षों बीत गये।

1910 ई. में स्पष्ट हुग्रा कि बगैर दो मुख्य तत्वों पर काबू पाये हुए सफलता ग्रसम्भव है। ये दो तत्व थे तापमान और दबाव। वैज्ञानिकों ने हिसाब लगाया कि ग्रमोनिया का सर्वाधिक निकास क्रिया के सर्वाधिक ऊंचे दबाव ग्रौर सर्वाधिक नीचे तापमान पर चलने से होता है।

दबाव तो बहुत ऊंचे स्तर तक बढ़ाया जा सकता है पर तापमान........। यदि क्रिया ऊंचे तापमान पर चलाई जाती है तो ग्रमोनिया का निकास ग्रत्यन्त तुच्छ हो जाता है ग्रौर यदि उसे एक सीमा से ग्रधिक नीचे ले जाते हैं तो प्रतिक्रिया बहुत कम उपन्न होती है।

इस प्रकार वैज्ञानिक ग्रौर टैक्नोलाजिस्ट सीला ग्रौर चिरैंबिडीज के मध्य में पड़ गये तब तीसरा शक्तिशाली तत्व—उत्प्रेरक—इस रुकावट को तोड़ने वाले विलक्षण कपोत के रूप में प्रगट हुग्रा।

यह उत्प्रेरक क्या वस्तु है ?

यह वह पदार्थ है जो रसायनिक प्रतिक्रिया की गति में परिवर्तन उपस्थित करता है, उत्प्रेरक प्रतिक्रिया में भाग लेता है, किन्तु उसके ग्रन्त में वह ग्रपने प्रारम्भिक स्वरूप में पुनः स्थापित (Restore) है। प्रकृति में प्रयोगशाला मे कारखानों मे ग्रधिकांश रसायनिक प्रतिक्रियायें उत्प्रेरकों की सहायता से ही सम्पन्न होती हैं। विविधता से भरी हुई उत्प्रेरण की कुल क्रियायें दो किस्मों मे विभक्त की जा सकती है : समांगी (homogeneous) ग्रौर विषमांगी (heterogeneous) उत्प्रेरण। समांगी, दूसरे शब्दों में एक समान (uniform), उत्प्रेरण उस समय उपस्थित होता है जब प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थ तथा उत्प्रेरक एक ही भौतिक ग्रवस्था मे होते हैं, यानी वे सब या तो गैस होते हैं या घोल में होते हैं। विषमांगी उत्प्रेरण उस समय पर्यवेक्षित किया जाता है जब प्रतिक्रिया में ग्रसमान पदार्थ भाग लेते हैं जैसे गैस ग्रौर ठोस पदार्थ। इस प्रकार के उत्प्रेरण का एक उदाहरण ग्रमोनिया का संश्लेषण है।

उत्प्रेरक की क्रियाशीलता किस बात में निहित है ?

इस प्रश्न का उत्तर साधारण नहीं है। उत्प्रेरण की प्राकृतिक घटना का

अध्ययन अभी भी पूरी तौर से नहीं हो पाया है। अनुसन्धानकर्त्ताओं के दृष्टि-कोणों मे विभिन्नतायें हैं। यहां हम सबसे सरल और प्रचलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करेंगे। किन्तु रासायनिक प्रतिक्रिया की गति के परिवर्तनों के बारे मे कुछ कहने के पूर्व यह बताना है कि यह है क्या ?

रसायनिक प्रतिक्रिया की गति समय की किसी इकाई में प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों की सान्द्रता के परिवर्तन से लाक्षणिक होती है। उदाहरण के लिये एक साधारण फौलाद के कलम को जलाने का प्रयत्न कीजिए। यह गैस बर्नर की सहायता से भी करना आसान न होगा। अधिक से अधिक आप उसे लाल गर्म करने मे सफल हो सकेंगे। पर केवल गर्म किये हुये कलम को आक्सीजन से भरे हुए मर्तबान (Jar) में डालिए और वह चिन्गारी छोड़ता हुआ जलने लगेगा। मर्तबान में आक्सीजन की सान्द्रता वायुमण्डल की वायु की अपेक्षा पांच गुना अधिक है। इसी कारण लोहे की आक्सीजन से पारस्परिक अभिक्रिया की गति भी मर्तबान में तेजी से बढ़ जाती है।

वैज्ञानिकों ने 'प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों की सान्द्रता की प्रतिक्रिया की गति पर प्रभाव' का नियम ज्ञात कर लिया है। इसे प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों का नियम कहते हैं और वह इस प्रकार लिखा जाता है : रसायनिक प्रतिक्रिया की गति प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों के सान्द्रणों के गुणांक से अनु-लोमानुपात (Direct proportion) रखती है।

प्रतिक्रिया $A+B=C$ के लिये उपरोक्त नियम इसी प्रकार प्रदर्शित किया जाता है।

$V=K\ [A]\ [B]$ जहां v प्रतिक्रिया की गति, K गति का स्थिरांक (constant) [A] और [B] क्रमश: A तथा B पदार्थों के सान्द्रण इंगित करते हैं।

अमोनिया के संश्लेषण की प्रतिक्रिया $N_2+3H_2 \leftarrow\rightarrow 2NH_3$ की गति इस प्रकार व्यक्त की जा सकती है :

$V=K\ [N_2]\ [H_2]^3$

प्रतिक्रिया की गति तेज करने में उत्प्रेरक क्या भूमिका अदा करता है ?

विषमांगी उत्प्रेरण के समय उत्प्रेरक का बाह्य धरातल प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों को अपने में जज्ब करता है। प्रत्येक अणु का अपना बाह्य बल-क्षेत्र (outer field of force) होता है, तो उसका बल-क्षेत्र दूसरे अणुओं के उसी प्रकार के बल क्षेत्रों से साम्यावस्था (equilibrium) प्राप्त कर लेता है। किन्तु उत्प्रेरक के बाह्य धरातल पर स्थित अणु का बल-क्षेत्र बाहर की ओर

से संतुलित नहीं हो पाता है। उत्प्रेरक पदार्थ के ऊपरी धरातल पर उपस्थित अणु का स्वतन्त्र बल क्षेत्र अपने बाह्य के माध्यम के कणों को अपनी ओर आकर्षित करता है। अधिशोषण (absorption) की क्रिया उपस्थित होती है। गैसों, वाष्पों और घुले हुए पदार्थ का अधिशोषण अधिशोषी पदार्थ के धरातल पर होने लगता है।

इस प्रकार पहली मंजिल में उत्प्रेरक प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों को अपने धरातल पर जज्ब करता है, उनके सान्द्रण को ऊँचा करता है, जिसके फलस्वरूप प्रतिक्रिया की गति में तेजी आती है।

इसके अलावा उत्प्रेरक अधिशोषित (absorbed) अणुओं को सक्रिय बना देता है। वे अनअवशोषित (unabsorbed) अणुओं की अपेक्षा बहुत अधिक ऊर्जस्वी (energetic) हो जाते हैं, अधिक टकराते और अधिक प्रतिक्रिया करते हैं और आमतौर से प्रतिक्रिया की गति तेजी से बढ़ जाती है।

यह बता देना आवश्यक है कि उत्प्रेरक अत्यन्त निर्वाचकीय ढग से क्रिया करता है। वह मनमौजी होता है। एक प्रतिक्रिया की गति को वह तेजी से बढ़ा सकता है और दूसरी प्रतिक्रिया की गति में हो सकता है वह बिल्कुल ही कोई प्रभाव न डाले। प्रतिक्रिया के लिये ठीक उत्प्रेरक का चुनना एक जटिल कार्य है। इसके लिये कोई स्पष्ट रूप से विकसित सिद्धान्त नहीं है।

फिर भी रसायनिक उद्योग में उत्प्रेरकों के मूल्य का अत्यंकन overestimation) नहीं हो सकता। उत्प्रेरक के ठीक चुनाव और उसकी तैयारी की महत्ता अमोनिया के संश्लेषण के उदाहरण में प्रगट होती है। यहाँ अच्छा और सस्ता उत्प्रेरक विशेष रूप से तैयार किया हुआ लोहा मालूम हुआ। अल्युमिनियम-आक्साइड की मिलावट लोहे की उत्प्रेरण शक्ति को कई गुना बढा देती है। किन्तु इस शक्तिशाली त्वरक (accelerator) की उपस्थिति में भी अमोनिया के संश्लेषण की क्रिया जटिल होती है। वह सम्पर्क-उपकरण (Contact apparatus) में सम्पन्न होती है; मोटी चद्दर के सिलिण्डर मे, जो उत्तम कोटि के फौलाद से बना होता है और 500°C का तापमान एवं 250-300 वायुमण्डलीय दबावों के सहने की क्षमता रखता है। उपकरण में नीचे की ओर से 1:3 के अनुपात में नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का मिश्रण प्रवेश करता है। गैसें उपकरण के अन्दर स्थित शाखिकाओं (shelves) में रखे उत्प्रेरकों से होकर गुजरती हैं और उत्प्रेरकों के धरातलों पर प्रतिक्रिया सम्पन्न करती हुई अमोनिया बनाती हैं। यह स्वतः सिद्ध है कि इस प्रकार के सम्पर्क-उपकरणों को उत्पादन क्षमता मे बहुत कुछ कमी बाकी रह जाती है। रसायन-शास्त्री उत्पादन

क्षमता बढ़ाने के रास्ते, मुख्यतः उत्प्रेरक की फल प्रदत्ता ऊँचा करके खोज रहे हैं। सोवियत इन्जीनियर-रसायन शास्त्रियों ने उत्प्रेरक की कूट-धावन[1] (अथवा कूट तरलित) परत का उपयोग करके एक विधि निकाली है। इस विधि का अभी तक बहुत ऊँचे दबावों पर चलने वाली क्रियाओं में, जैसा कि अमोनिया के सश्लेषण की क्रिया है, प्रयोग नहीं किया गया था।

कूट-धावन (Pseudo wash) परत सूक्ष्म ठोस कणों की एक विशेष अवस्था होती है जिसमें वे नीचे से आने वाली गैस में उबल से रहे होते है।

उत्प्रेरक को शाधिकाओं में नहीं रखा जाता है, वरन् ऊँचे दबाव के अन्तर्गत नीचे से प्रवेश होने वाली गैस की धारा में वे 'उबलते' से रहते हैं। यह स्पष्ट है कि नाइट्रोजन और हाइड्रोजन यहाँ पर कहीं अधिक पूर्णता से प्रतिक्रिया करते हैं, क्योंकि प्रथमतः उपकरण में कहीं अधिक उत्प्रेरक पदार्थ की मात्रा होती है, दूसरे उत्प्रेरक का धरातल कहीं अधिक बड़ा होता है। निश्चय ही उसे खूब महीन पीस लिया जाता है और वह निरन्तर गति में रहता है तथा गैसों को उसके धरातल तक पहुँचने मे बड़ी आसानी होती है।

ठण्डक देने की सेवा

ग्रीष्म ऋतु के दिनों में खूब ठंडा दूध तथा बर्फ की भांति ठण्डा फलों का शर्बत पीना भला मालूम होता है। और हम नहीं चाहते कि मक्खन, सासेज और ताजी मछली गर्मी से खराब हों। इसके लिए केवल रिफ्रीजरेटर की आवश्यकता है, जो अधिकतर द्रव अमोनिया से काम करता है।

ठंडा करने की (रिफ्रिजरेटिंग) मशीनों की कार्य प्रणाली का आधार इस तथ्य मे निहित है कि गैस को सीमित जगह में दबाने से वह गर्म हो जाती है। संदाबित (Compressed) गैस को बाद में फैला कर ठंडा करने से बहुत तेज ठंडक उत्पन्न होती है। अमोनिया का प्रयोग निम्न तापोत्पादक (प्रशीतक) पदार्थ के रूप में किया जाता है क्योंकि पानी की भांति उसकी भी वाष्पन की गुप्त ऊष्मा (latent heat of evaporation) बहुत ऊँची होती है। रिफ्रिजरेटिंग प्लांट में अमोनिया निरन्तर काम्प्रेसर के द्वारा पानी में ठंडा होते हुए सर्पिल पाइप (coil) में भरी जाती है। यहां पानी अमोनिया की ऊष्मा, जो दबाव (compression) के समय उन्मुक्त करती है, ले लेता है। अमोनिया द्रवित हो जाती है और एक छोटे छिद्र से होकर दूसरे सर्पिल में प्रवेश करती है, जो कैल्शियम क्लोराइड के सान्द्र विलयन (Strong Solution) में डूबा होता है। यहा अमोनिया वाष्पीकृत हो जाता है और इतनी ऊष्मा सोख लेता है कि कैल्शियम क्लोराइड में रखे हुये बर्तनों का पानी जम जाता है।

---

1. रूसी भाषा में इसे स्यूडो आमीझे नी स्लोय कहते हैं।

पृथ्वी पर जीवन का प्रादुर्भाव और अमोनिया

एक समय था जब पृथ्वी पर उपस्थित भौतिक अवस्थायें ऐसी नहीं थी जैसी आज हैं। आधुनिक वैज्ञानिकों में अधिकांश का झुकाव इस धारणा की ओर है कि अपने विकास की प्रारम्भिक मंजिलों में पृथ्वी का वायुमण्डल आज की भांति आक्सीकारक नहीं था, यह अविकारक था। उसमें मीथेन, अमोनिया, हाइड्रोजन और जल था। हर प्रकार से यह निश्चित है कि अमोनिया ने जीवन के उद्‌भव में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

उस समय के पृथ्वी के वायुमण्डल को सर्वाधिक शक्तिशाली विद्युत प्रभारों, ऊंचे तापमान, प्रबल पारजम्बु विकीरण (ultraviolet radiation) का प्रभाव सहना पड़ा। इन सबके सामूहिक प्रभाव से आर्गेनिक पदार्थ बना।

हमारे समय में वैज्ञानिक एस० मिलेर ने प्रयोगशाला की दशाओं में इसी प्रकार का संश्लेषण कार्यान्वित किया है। पानी की वाष्प,, हाइड्रोजन, मीथेन, तथा अमोनिया के मिश्रण से होकर उसने एक सप्ताह तक विद्युत-चिन्गारी (electric spark discharge) पारित की, जिसके बाद बर्तन में एमीनों अम्लों (Amino acids) का मिश्रण (ग्लाइसिन glycine) एलानाइन (alanine), ऐस्पार्टिक एसिड (Aspartic acid) प्राप्त हुआ। ये अम्ल ऐल्ब्युमीन का संघटक भाग (Component part) होते हैं।

वनस्पति की उत्पत्ति के साथ ही पृथ्वी के अवकारक (Reducing) वायुमण्डल ने धीमे-धीमे आक्सीकारक होना प्रारम्भ कर दिया। वनस्पतीय हरा पदार्थ सूर्य्य-रश्मियों के प्रभाव से अनेकों मिलियनों वर्षों के दौरान कार्बोनिक एसिड गैस को अपने में बांधता हुआ आक्सीजन उन्मुक्त करता रहा।

जीवनदायी नाइट्रोजनिक रस

मध्य युग में ही वैज्ञानिक यह अनुमान करने लगे थे कि मिट्टी की उर्वरता का सम्बन्ध "जीवन दायी नाइट्रोजनिक रस" से है।

विख्यात रूसी अणु-जीव-विज्ञान शास्त्री (microbiologist) वे. एल. ओमेल्यान्स्की ने लिखा है, "नाइट्रोजन साधारण जैवीय दृष्टिकोण से सर्वाधिक विरल राजसी धातु (rare noble metal) से भी अधिक बहुमूल्य है।" इससे असहमत होना असम्भव है। निश्चय ही, नाइट्रोजन मूलतः रोटी, मांस, दूध, मक्खन (तेल) है।

प्रतिवर्ष संसार की फसलें पृथ्वी से 25 मिलियन टन नाइट्रोजन निकाल लेती हैं। पृथ्वी की उर्वरता का स्तर कायम रखने के लिए प्रतिवर्ष पृथ्वी से निकाली जाने वाली नाइट्रोजन को पुनर्स्थापित कर देना आवश्यक है।

1898 ई. में विख्यात अंग्रेज भौतिकशास्त्री क्रूक्स ने भविष्यवाणी की,

कि नाइट्रोजन की भूख ही मानवता के विनाश का कारण होगी। उसने कहा कि पृथ्वी नाइट्रोजन से खाली हो रही है। उसकी उर्वरक शक्ति को ऊंचा करने के लिए वायुमण्डल की नाइट्रोजन को विबंधित करना आवश्यक है, क्योंकि पृथ्वी पर उसका एकमात्र भण्डार, जो चिली के साल्ट पीटर के रूप मे है प्रतिवर्ष भयंकर रूप से कम होता जा रहा है।

उसी वर्ष क्रूक्स की उपरोक्त भविष्यवाणी के अवसर पर क. अ. तिमिर्या- जेव सामने आया, उसने 1783 ई. के कैवेन्डिश के प्रयोगो का स्मरण कराया जब उसने वायुमण्डलीय (atmospheric) वायु मे विद्युत्-चिन्गारी पारित (pass) करते हुए नाइट्रोजन-डाइ-आक्साइड प्राप्त की थी।

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ में नाइट्रोजन की आक्सीजन के साथ पार- स्परिक प्रतिक्रिया का तेजी के साथ अध्ययन प्रारम्भ हुआ।

यह प्रतिक्रिया प्रतिवर्ती (Reversible) होती है। इसके लिए अनुकूलतम दशायें उच्चतम तापमान और साधारण वायुमंडलीय दबाव हैं। समझा जावेगा कि बहुत साधारण बात है—हवा धोंकिए, और अग्नि को ईंधन दीजिए बस समस्या हल है ?

यहां वैज्ञानिक एक महत्वपूर्ण "किन्तु" से टकरा गये। यह प्रकट हुआ कि नाइट्रोजन के आक्साइड शनैः-शनैः शीतल होने के समय अपने अवयवभूत अंगों मे पुनः विघटित हो जाते हैं। संतुलन दायीं ओर हट जाता है। इन्जीनियरों के समक्ष समस्या थी कि नाइट्रोजन-आक्साइड को किस प्रकार तेजी से 1000°C के नीचे तापमान पर लायें।

विद्युत आर्क हमारी सहायता को आया। वह एक सीमित क्षेत्र में अत्यन्त ऊंचा तापमान निर्मित करता है, जिससे मिली हुई वायु की परतें तेजी से नीचे गिरे हुए तापमान पर होती हैं। बनने वाली आक्साइड विद्युत् आर्क के ऊंचे तापमान वाले कटिबन्ध से बाहर निकलने पर तेजी से ठंडी हो जाती हैं और अपने अवयव भूत अंगों में विघटित नही हो पाती है।

1908 ई० मे विद्युत आर्क की सहायता से वैज्ञानिक बर्कलैंड और इन्जी- नियर हाइड-नाइट्रोजन आक्साइडों का 4-7 प्रतिशत निकास प्राप्त कर सके।

फिर भी, बर्कलेन्ड और हाइड को स्वयं प्रकृति ने वायुमंडलीय नाइट्रोजन विबंधित करने की विधि की ओर संकेत किया। वर्षा प्रत्येक बिजली की वक्र दमक के साथ पृथ्वी पर लगभग डेढ टन नाइट्रोजन आक्साइड ले आती है। एक वर्ष में आसमान की बिजली पृथ्वी के धरातल के प्रत्येक वर्ग मीटर 600 किलो- ग्राम तक नाइट्रोजन-आक्साइड बनाती है। सोवियत वैज्ञानिक एन अ. जुबारेव ने बिजली के कार्य को सुव्यवस्थित करने यानी उसके आघात को आवश्यक

स्थान पर निर्देशित करने का सुझाव पेश किया । वह सलाह देता है कि तूफान के पूर्व अ'काश में छोटा रबड़ का गुब्बारा शतांश मिलीमीटर के महीन तार पर भेजा जावे। दामिनी तत्काल तार को वाष्प में परिणत कर देगी फिर भी आयनीकृत अणुओं से निर्देशित होते हुए, प्रथमतः नाइट्रोजन को आक्सीजन से संयोजित करते हुए वह पृथ्वी पर चली आयेगी ।

वनस्पति और जीवन के लिये अमोनिया

प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व कम खर्चीली अमोनिया विधि ने बहुत अ'शों तक विद्युत आर्क द्वारा नाइट्रोजन विबंधन (fixation of nitrogen) की विधि को विस्थापित कर दिया था । इस विधि को, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, एफ. गावेर ने 1908 ई० मे निकाला था।

प्राप्त की जाने वाली अमोनिया का मूल अ'श नाइट्रिक अम्ल और अमोनियम के लवणों के उत्पादन में काम आता है, जिनसे खनिज खादें प्राप्त की जाती हैं, जो विशेष रूप से हाल के समय से बढ़ गया है । मिट्टी की उर्वरता पर अपने प्रभाव के दृष्टिकोण से वह, उदाहरण के लिये, अमोनियम साल्ट पीटर (अमोनिया नाईट्रेट) से कम नहीं है और उससे कहीं अधिक सस्ता पड़ता है । पर अमोनिया गैस है, जिसे मिट्टी में प्रविष्ट करना सरल नहीं है, इसलिए उसे द्रव नाईट्रोजनिक खादों के रूप में उपयोग करते हैं, जिन्हें प्राप्त करने के तीन तरीके हैं । प्रथम विधि है अमोनिया गैस को द्रव अमोनिया मे बदल लेने की । दूसरी विधि है द्रव-अमोनिया में अमोनियम साल्टपीटर (ammonium nitrate) अथवा यूरिया का घोल बनाने की । इस प्रकार के घोलो को अमोनिया द्रव कहते हैं । और तीसरी विधि है द्रव अमोनिया (liquid ammonia) अमोनिया का पानी मे घोल––को खाद के रूप में प्रयोग करने की ।

द्रव अमोनिया नाइट्रोजनिक खादो का सर्वाधिक सांद्र रूप है । उसमें 82·3 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है । उसका उबलने का निम्न ताप बिन्दु (low boiling point) उसके उपयोग को बहुत जटिल बना देता है ।

अमोनिया द्रवों मे 30–50 प्रतिशत तक नाइट्रोजन होती है किन्तु उनको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ढोना कठिन होता है । वे लोहस धातुओं (Ferrous metals) में तेजी से जंग (rust) लाते हैं । इसके साथ ही उन्हें केवल गर्म ऋतु में ही प्रयोग किया जा सकता है, क्योंकि 10°C से नीचे तापमान पर इनके लवण अवक्षेपित (precipitate) हो जाते हैं ।

सोवियत संघ में कृषि उद्योग मे जलीय अमोनिया का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है । यह सुविधापूर्वक, सरलता से संचित (Preserve) की जा

सकती है। वह कठिन ठंडक में जमती नहीं है और उसमें 20 प्रतिशत तक नाईट्रोजन होती है।

1959 ई० में सामूहिक एवं राज्य फार्मों की 240 हजार हेक्टेयर भूमि को द्रव नाइट्रोजनिक खादों मूलतः जलीय अमोनिया, से उर्वरीकृत किया गया था, जिससे श्रम का व्यय (Expenditure of labour) तीन गुणा कम हो गया था। जलीय अमोनिया ने प्रति हेक्टेयर 8 सेंटनेयर अनाज और 25 सेंटनेयर तक आलू की बढोती दी।

यूरिया, जो साधारण तौर से अत्यन्त बहुमूल्य पदार्थ है और विशेष रूप से अत्यन्त बहुमूल्य खाद है, के उत्पादन में अमोनिया प्रारम्भिक पदार्थ के रूप में प्रयोग किया जाता है :



$$2NH_3 + CO_2 = NH_2CONH_2 + H_2O$$

यूरिया प्रथम आर्गेनिक पदार्थ है, जो सश्लेषण से प्राप्त किया गया। 1824 ई. में वेलेर ने, अमोनियम सायनाइड व पानी में घोल को वाष्पीकृत करते हुए, यूरिया प्राप्त की। अब तक अधिकांश वैज्ञानिक यह सोचते थे कि मनुष्य कृत्रिम रूप से आर्गेनिक पदार्थ नहीं प्राप्त कर सकता है। उसकी राय में केवल जैवीय शरीर ही विशेष, रहस्यमय, 'प्राण शक्ति' के प्रभाव से आर्गेनिक पदार्थ निर्माण करने की क्षमता रखते थे। इनआर्गेनिक पदार्थ से आर्गेनिक पदार्थ यूरिया का सश्लेषण "प्राण शक्ति" के सिद्धान्त पर प्रथम आघात था।

यूरिया अत्यन्त सान्द्रित खाद होती है। उसमें 46 7 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है। नाइट्रोजन की मात्रा की दृष्टि से 100 किलोग्राम यूरिया 300 किलोग्राम सोडियम नाइट्रेट अथवा 225 किलोग्राम अमोनिया सल्फेट के बराबर होता है। पौधे यूरिया की नाइट्रोजन अत्यन्त सरलता से स्वांगीकृत (assimilate) कर लेते हैं। यह खाद हर प्रकार की मिट्टियो और हर प्रकार की फसलों के लिये उपयुक्त होती है। यूरिया मिट्टी मे प्रवेश करके कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस और अमोनिया में विघटित हो जाता है। अमोनिया खाद को नाइट्रिक एसिड में आक्सीकृत हो जाता है और पौधों को आसानी से स्वांगीकृत होने वाला नाइट्रोजनिक भोजन प्राप्त हो जाता है। पशुओं को भी यूरिया का भोजन दिया जाता है। सप्तवर्षीय योजना के अन्त में सोवियत संघ में पशु-पालन के लिये लगभग 800 हजार संश्लेषित यूरिया तैयार की जायेगी।

जाबिर का जल

अमोनिया के उत्पादन की विधि निकालने के साथ ही साथ वैज्ञानिकों और इन्जीनियरों ने उसके नाइट्रिक अम्ल में आक्सीकृत करने की विधि का भी अध्ययन किया।

1917 ई में इ-इ. ग्रान्द्रेयेव ग्रौर एन. एम कुलेपेतोव इन्जीनियरों की योजना के ग्रनुसार रूस मे प्रथम नाइट्रोजन का कारखाना ग्रमोनिया को सम्पर्क विधि से ग्राक्सीकृत करने का यूजोव्व में खोला गया।

ग्राक्सीकरण की प्रक्रिया कुछ मंजिलों में विभक्त की जा सकती है,



$$4NH_3+5O_2=4NO+6H_2O$$

यह प्रतिक्रिया उत्प्रेरक के धरातल पर सम्पन्न होती है, जब ग्रमोनिया ग्रौर वायु का मिश्रण (1·9) प्लैटीनम के जाल (grid) से, 600°C तापमान तक गर्म किया जाता है, गुजरता है।

नाइट्रोजन-ग्राक्सइड सरलता से नाइट्रोजन-डाइ-ग्राक्सइड से ग्राक्सीकृत हो जाता है। इसके बाद नाइट्रोजनिक गैस ग्रधिशोषण मीनार (absorption tower) में नीचे प्रवेश करती है, जिसमें फुहारों के रूप में पानी उसे मिलता है। जो तनूकृत ग्रम्ल प्राप्त होता है, वह प्रबल सल्फ्यूरिक ग्रम्ल की उपस्थिति में सान्द्रित होता है। सल्फ्यूरिक ग्रम्ल पानी सोख लेता है। दोनों ग्रम्लों के मिश्रण से नाइट्रिक एसिड को ग्रासवन (distillation) द्वारा पृथक किया जाता है। 50 वायुमण्डलीय दवावान्तर्गत पानी ग्रथवा तनूकृत नाइट्रिक ग्रम्ल की द्रव N_2O_4 ग्रौर ग्राक्सीजन से पारस्परिक प्रतिक्रिया के समय भी सान्द्रित नाइट्रिक ग्रम्ल प्राप्त किया जा सकता है।

नाइट्रिक एसिड का ज्ञान मनुष्य को प्राचीन काल से है। उसका पहला जिक्र बारहवीं शताब्दी के लीजेन्डरी कीमियागर जाबिर की पुस्तक में मिलता है, उसने नाइट्रिक एसिड का वर्णन जल कह कर किया है ग्रौर उसे मनुष्य के हाथों में एक महान् शक्ति माना है।

ग्रो वस्तुतः, नाइट्रिक एसिड महत्वपूर्ण रसायनिक यौगिकों में है। शुद्ध रूप मे वह रंगहीन द्रव होता है जो पानी से डेढ गुना भारी होता है। प्रबल नाइट्रिक एसिड शक्तिशाली विलायक है, राजसी (noble) धातुग्रों के ग्रतिरिक्त सभी धातुयें उसमें घुल जाती हैं। वह ग्रार्गेनिक पदार्थों पर विध्वंसकारी प्रभाव प्रगट करती है।

मध्य युग में ग्रम्ल-राज (Aqua regia) कहलाने वाला प्रबल नाइट्रिक एसिड के एक ग्रंश का हाइड्रोक्लोरिक एसिड के तीन ग्रंशों मे मिश्रण प्राप्त हो गया था। यह मिश्रण प्लेटीनम ग्रौर सोने को ग्रपने मे घोल लेता है। इस कीमियागर "सिंह सूर्य को हड़प लेता है" कह कर व्यक्त करते थे। राजसी धातुग्रों का ग्रम्लराज में विलयन स्वतन्त्र क्लोरीन के बनने के कारण होता है।

नाइट्रिक ग्रम्ल के लवण—ग्रमोनिया नाइट्रेट, सोडियम नाइट्रेट, पोटैशियम नाइट्रेट ग्रौर कैल्शियम नाइट्रेट प्रसिद्ध खादें हैं। ग्रमोनियम नाइट्रेट NH_4

NO_2 श्वेत से लेकर गहरे नीले तक के विभिन्न रंगों का मणिभीकृत लवण होता है। वह अत्यन्त आर्द्रताग्राही (hygroscopic) होता है। वह 200°C ताप-मान पर नाइट्रस-आक्साइड और जल में विघटित हो जाता है। इससे ऊंचे तापमानों पर अमोनिया नाइट्रेट विस्फोटित हो जाता है। 1921 ई. में जर्मन के ओपाय के कारखाने में 3200 टन अमोनियम-नाइट्रेट के मिश्रण में विस्फोट हो गया और 4 किलोमीटर व्यास के घेरे में कुल औद्योगिक संस्थान एवं आवास गृह समाप्त हो गये।

अमोनियम नाइट्रेट में 35 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है। वह पानी में भली प्रकार घुलता है। उसका खनिज खाद के रूप में विस्तृत उपयोग किया जाता है। उसमें हानिकारक एवं अलाभकर मिलावटें नहीं उपस्थित होती हैं। इस लवण को पौधे आसानी से स्वांगीकृत कर लेते हैं। अमोनियम नाइट्रेट को दूसरी खनिज खादों—सुपर फास्फेटों और पोटेशियम लवणों—के साथ भी उप-योग किया जाता है।

सोडियम-नाइट्रेट Na NO_3 ऊपरी दिखावे में सोडियम-क्लोराइड के समान होता है जैसा अमोनियम-नाइट्रेट होता है। संचित करने से वह नम हो जाता है और तेज गर्म करने से जल उठता है। सोडियम नाइट्रेट में कुल 15 प्रतिशत नाइट्रोजन होता है, विशेष कर चुकन्दर की खेती के लिए।

पोटैशियम नाइट्रेट का उपयोग काली मिट्टी के क्षेत्रों में सफलतापूर्वक किया जाता है। वह, सोडियम-नाइट्रेट की भांति ही, मिट्टी की अम्लता को कम करता है।

नाइट्रोजन को पालतू करने का काम अब भी जारी है

रसायनशास्त्रियों ने 'नाइट्रोजनीय-भूख' के दृढ़ अस्थिमय हाथों को परास्त किया और वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अनुबन्धित करने की समस्या का हल प्राप्त किया। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि यह समस्या अन्तिम रूप से हल हो गई है।

सारे संसार के वैज्ञानिक अधिक सस्ते और अधिक फलोत्पादक तरीके नाइट्रोजन को अनुबन्धित करने के खोज रहे हैं। उनके खोजों की दो दिशायें हैं : बायोलाजिकल (जैवीय) एवं टेक्निकल (प्राविधिक)। बायोलाजिकल नाइट्रोजन—क्लोवर (clover) ल्यूसर्न, दालों (leguminous plants) की नाइ-ट्रोजन है या अधिक उपयुक्त शब्दों में नाइट्रोजन अनुबन्धित करने वाले जीवाणुओं (bacteria) की नाइट्रोजन है।

सर्वाधिक नम्र गणना के अनुसार अनेकों मिलियन बैक्टीरिया 400 मिलि-यन टन से ऊपर एक वर्ष में अनुबन्धित करता है।

पिछले समय में सोवियत वैज्ञानिक ई. ई. प्रोरोविन्स्की ने एक नई प्रकार का नाइट्रोजन बैक्टीरिया प्राप्त किया है। आलू के कन्द (tuber) में बढ़ता हुआ कुछ घटों में वह उसमें से नाइट्रोजन की मात्रा आठ गुना बढ़ा देता है। इस आलू को पालतू पशु बड़े चाव से खाते हैं। दूध पीते सुग्रर के बच्चों का औसत दैनिक भार इस आलू के खाने से 70-80 प्रतिशत ऊँचा हो गया।

इस प्रकार नाइट्रोजन-बैक्टीरिया की यह किस्म ललचाने वाले गुण रखती है। प्रथमतः वह कृत्रिम माध्यम में वृद्धि करती है अर्थात उसे प्रयोगशाला में प्राप्त किया जा सकता है। दूसरे, उसकी जैवीय सक्रियता (vital activity) की उपजें सीधे पशुओं द्वारा स्वांगीकृत की जा सकती हैं।

तकनीक नाइट्रोजन (बायोलोजिकल नाइट्रोजन से भिन्न) की प्राप्ति की विधियों का संशोधन अभी प्रयोगशालाओं में चल रहा है। वैज्ञानिकों ने नाइट्रोजन को विद्युत प्रभार द्वारा सीधे आक्सीकृत करने की ओर, बर्कलैंड की विधि की ओर अपना ध्यान फेरा। अमोनिया विधि अच्छी है, किन्तु वह हाइड्रोजन की बड़ी मात्रा के जलाने पर आधारित है, जिसका उत्पादन महंगा होता है। बर्कलैंड की विधि विद्युत ऊर्जा की बड़ी मांग करती है। किन्तु हमारे समय में उच्चावृत्ति प्रभार (High frequency dsicharge) के भौतिक शास्त्रियों और टेक्नीशियनों ने बड़ी सफलता प्राप्त की है। विद्युत ऊर्जा प्रतिवर्ष सस्ती होती जाती है, नाइट्रोजन वायु में पर्याप्त से अधिक है, सीधे नाइट्रोजन को आक्सीकृत करने के कारखानों की मशीनरी सरल होती है, और साथ ही साथ कारखाने को नाइट्रोजनिक खादों की मांग के क्षेत्र में रखा जा सकता है। इस समय भी प्रयोगशाला में एक किलोवाट प्रति घण्टा ऊर्जा में दो ग्राम अणु (mole) से ऊपर NO विद्युत-आर्क की विधि से प्राप्त किया जाता है।

3-4 ग्राम-अणुओं के निकास के समय सीधे आक्सीकृत करने की विधि ऊर्जा की दृष्टि से अमोनिया विधि से तुलना करती है। इसमें सन्देह नहीं कि भविष्य नाइट्रोजन को उच्चावृत्ति प्रभार द्वारा सीधे आक्सीकृत करने की विधि के साथ है।

आक्साइडों का परिवार

"हंसाने वाली गैस (नाइट्रस आक्साइड (N_2O) नाइट्रिक अन्हाइड्राइड (नाइट्रोजन पेन्टाक्साइड N_2O_5) से कितनी भिन्न होती है! पहला पदार्थ गैस है, दूसरा साधारण तापमान पर ठोस मणिभ बनाता है। साथ ही, उनके मध्य बनावट के दृष्टिकोण से कुल अन्तर इस बात में सीमित है कि दूसरे पदार्थ में पहले पदार्थ की अपेक्षा आक्सीजन पांच गुना अधिक होती है और इन दोनों पदार्थों के मध्य तीन अन्य नाइट्रोजन की आक्साइडें स्थित हैं----, जो इन दोनों

आक्साइडों से और आपस में एक दूसरे से गुणों में विभिन्नता रखती है।' इस प्रकार एंगेल्स ने अपनी पुस्तक 'प्रकृति की द्वन्द्वात्मक पद्धति (Dialectics of nature)' में नाइट्रोजन के आक्साइडों के विषय में लिखा है।

नाइट्रोजन के आक्साइड पाँच हैं :

N_2O	NO	N_2O_3	NO_2
नाइट्रस आक्साइड	नाइट्रिक आक्साइड	नाइट्रस अन्हाइड्राइड	नाइट्रिक डाइ-आक्साइड

N_2O_5
नाइट्रिक अन्हाइड्राइड

हमारे सामने परिमाणात्मक परिवर्तन से गुणात्मक परिवर्तन प्राप्त होने के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के नियम का जीता जागता उदाहरण है।

नाइट्रस-आक्साइड-नाइट्रोजन की सबसे निम्न आक्साइड—का सर्व प्रथम वर्णन अठारहवीं शताब्दी के अन्त में प्रिस्टली ने किया था। अंग्रेज रसायन-वैज्ञानिक को गैस ने बहुत आश्चर्य चकित किया : एक ओर वह कुल जीवों के लिये विष थी, तो दूसरी ओर वह साधारण वायु की भांति ही प्रज्वलन को परिपोषक थी।

निश्चय ही प्रिस्टली और उस समय के कुल वैज्ञानिक श्वसन (breathing) को प्रज्वल (burning) से पृथक नहीं समझते थे।

प्रयोगशाला में नाइट्रस आक्साइड को अमोनियम नाइट्रेट को 200°C के तापमान तक गर्म करके प्राप्त करते हैं।



$$NH_4NO_3 = N_2O + 2H_2O$$

यह यौगिक अस्थायी होता है और इसमे हाइड्रोजन, कोयला, मिट्टी का तेल उसी प्रकार भली भांति जलता है जैसे कि शुद्ध आक्सीजन में।

नाइट्रस आक्साइड का सर्वाधिक विशेषता सूचक लक्षण, जिसने अठारहवीं शताब्दी के अंत मे कुल वैज्ञानिकों को ही नहीं, सारे-संसार को आश्चर्य में डाल दिया था, उसका शारीरिक क्रिया पर प्रभाव डालने वाला (Physiological) गुण था, जिसे डेवी ने सन् 1798 ई० में खोजा था। नाइट्रस आक्साइड—हसाने वाली गैस—के साँस लेने से मनुष्य प्रबल उत्तेजित अवस्था में, नशे की हालत मे हो जाता है।

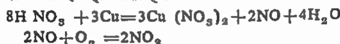
एक हमारे समकालीन के प्रमाणानुसार, जो नाइट्रस आक्साइड द्वारा उत्पन्न मादकता की लीलाओं के एक अवसर पर मौजूद थे, "कुछ सभ्य पुरुष मेजों और कुर्सियों के चारों ओर नाचने कूदने लगे। कुछ दूसरों मे बड़बड़ाने की और तीसरों मे गुत्थमगुत्था करने की प्रबल प्रवृत्ति जागृत हो गई।"

डेवी ने सर्वप्रथम नई खोजी गई गैस के निश्चेतक पदार्थ (Narcotic) के रूप में प्रयोग किये जाने का विचार संसार को दिया। 1844 ई० में अमरीकन डाक्टर उएल्ये ने नाइट्रस आक्साइड का तेज अनेस्थेटिक (anaesthetic) माध्यम के रूप में प्रयोग इस समय भी सर्जनों द्वारा किया जाता है।

नाइट्रस आक्साइड को गेल्स ने नाइट्रोजन की खोज के पूर्व ही पानी पर एकत्रित किया था। उसने सबसे पहले इस गैस की पारस्परिक प्रतिक्रिया का पर्यवेक्षण किया और सबसे पहले इस गैस का वर्णन किया।

"नाइट्रोजन गैस" द्वारा वायु की आक्सीजन के अवशोषण ने वायु की उत्तमता का परिमाणात्मक निर्धारण सम्भव बना दिया, अर्थात् उसमें मौजूद आक्सीजन की मात्रा निर्धारित करने का मार्ग खोल दिया। अठारहवीं शताब्दी में, रसायन विज्ञान के विकास को बहुमुखी प्रगति प्रदान करने वाले ईडियोमीटर (eudiometer) (गैस-आयतन-मापी) का निर्माण हुआ, जो इस प्रकार के परिमाणात्मक निर्धारण के लिए एक विशेष उपकरण (apparatus) है।

तनूकृत नाइट्रिक एसिड में एक तांबे का सिक्का डाल कर हम नाइट्रिक आक्साइड प्राप्त करते हैं। वायु में यह विषैली भूरे रंग की नाइट्रोजन-डाई-आक्साईड में परिणत हो जाती है।



$$8HNO_3 + 3Cu = 3Cu(NO_3)_2 + 2NO + 4H_2O$$
$$2NO + O_2 = 2NO_2$$

नाइट्रस अन्हाइड्राइड N_2O_3 नीले रंग का द्रव होता है, जो NO और NO_2 के समान मात्रा के मिश्रण को ठंडा करने से प्राप्त होता है।

कभी-कभी रसायनिक कारखानों के भवनों के ऊपर भूरे रंग के भारी बादल पृथ्वी से ऊपर फैलते हुये देखे जा सकते हैं। यह नाइट्रोजन-डाइ-आक्साइड है, जिसे कारखाने के श्रमिक जन 'फाक्स टेल', (अथवा फाक्स ब्रश) कहते हैं। यह अत्यन्त विषैली भूरी गैस, नाइट्रिक एसिड का प्रयोग करने वाले कीमियागरों को भी ज्ञात थी।

नाइट्रोजन-डाइ-आक्साइड निम्न तापमानों पर द्विबन्धित होते हुए N_2O_4 में परिणत हो जाती है।

नाइट्रोजन-डाइ-आक्साइड का औद्योगिक उत्पादन नाइट्रोजन और आक्सीजन को सीधे संयोजित करने वाली प्रतिक्रिया पर आधारित है, जिसमें ऊर्जा भारी मात्रा में व्यय होती है।



$$N_2 + 2O_2 = 2NO_2 - 43 \text{ K Kal}$$

नाइट्रोजन की सबसे ऊँची आक्साइड N_2O_5 अत्यन्त अस्थायी पदार्थ है, जो नाइट्रिक एसिड को फास्फोरिक अन्हाइड्राइड (P_2O_5) से निर्जलीकृत

(Debydrate) करने से प्राप्त होता है। N_2O_4 पर प्रोझोन के प्रभाव से N_2O_5 के श्वेत मणिभ बनते हैं।

विस्फोट का कार्य

"भय का शुल्क" नाम के सिनेमा फिल्म का स्मरण कीजिये। शराब के कांच के बरतन से, जो पारदर्शी तेल के समान द्रव से भरा होता है, एक बूंद द्रव फर्श पर गिर पड़ता है और तात्कालिक तेज गरज के साथ विस्फोटित हो जाता है।

यह नाइट्रोग्लिसरीन है। यह प्रबल नाइट्रिक एसिड के ग्लिसरीन पर प्रभाव द्वारा प्राप्त होती है।

साधारणतः नाइट्रोग्लिसरीन की सक्रियता को नाइट्रो-सैल्युलोस (Nitro-cellulose) काष्ठ का चूर्ण, कीजेलगर (Kieselguhr) आदि उसमें मिलाकर दबाया जाता है और उसे डाइनामाइट में परिणत कर लिया जाता है, जिससे पहाड़ और पहाड़ी चट्टानें तोड़ी जाती हैं। भट्ठी में एक किलोग्राम कोयला जलाने से जो ऊर्जा उन्मुक्त होती है, हम विश्वास पूर्वक जानते हैं, वह भट्ठी को न तो उड़ा ही देगी और न उसे किसी प्रकार की भी क्षति ही पहुँचायेगी। पर इसमें सन्देह नहीं कि एक किलोग्राम कोयला जलने के समय उसी मात्रा के नाइट्रोग्लीसरीन की अपेक्षा, जो शक्तिशाली विस्फोटक पदार्थ है, आठ गुना अधिक ऊर्जा उन्मुक्त करता है। ट्रोटाइल (trotyl) अथवा trinitrotoluol की ऊर्जा मिलियनों गुना अधिक गति से उन्मुक्त होते हुए प्रबल शक्ति विकसित करती है.......।

12 अप्रैल 1953 ई. में आल्टिन-तोपकान की मदान में एमोनाइट (88 प्रतिशत अमोनियम नाइट्रेट और 12 प्रतिशत ट्रोटाइल) के 1647 टन के वजन के प्रभार से विस्फोट किया गया। विस्फोट से टूटी हुई चट्टानों का भार 1910 हजार टन था।

निम्नलिखित तथ्य दिलचस्प हैं; *19 सितम्बर 1957 ई. में* संयुक्त राज्य अमरीका के नेवादा राज्य में भूमिगत परमाणविक विस्फोट सम्पन्न किया गया। यह 1700 टन विस्फोटक पदार्थ के प्रभार के बराबर था, अर्थात् आल्टिन तोपकान पर विस्फोट किये गये एमोनाइट के प्रभार के बराबर था। भूमिगत परमाणविक विस्फोट से कुल 434 हजार टन चट्टानें ही टूटी। प्रकटतः साधारण विस्फोटक पदार्थों का उच्चविस्फोटन (high explosiveness) परमाणविक विस्फोट की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है। सोवियत वैज्ञानिक इस समय दक्षिणी याकूतिया में कोककर कोयला (Coking Coal) के नेरुन्ग्रिस्की उद्गम को खोलने की योजना बना रहे हैं। वह 55,588 टन विस्फोटक पदार्थ वाले दोहरे विस्फोट से खुल सकेगा। विस्फोट की शक्ति तीन हिरोशीमा और नागासाकी में फेंके जाने वाले परमाणविक बमों की शक्ति के बराबर होगी।

वायु में एक साथ 10 मिलियन टन चट्टानों का विशाल पदार्थ उड़ जायेगा। विस्फोट, उद्गम तक पहुँचने के लिये भावश्यक समय में 3-4 वर्षों तक की कमी लायेगा।

हीरे से कठोर

हीरा कठोरता का मानक (Standard) है। यह सरलता से शीशे को काट देता है भौर धातुओं को खरोंचता है। प्रकृति में कोई ऐसा पदार्थ नहीं है जो हीरे को खरोंच (Scratch) सके। प्रयोगशाला में ऐसा पदार्थ है—वह है बोराजोन, बोरन नाइट्राइड का भपररूप। बोरन नाइट्राइड-B-N_3 कठिनता से गलने वाला कठोर रसायनिक पदार्थ है, जो अत्यन्त महीन श्वेत रंग के पाउडर के रूप में प्राप्त होता है। भपनी बनावट भौर गुणों में वह ग्रेफाइट के समान होता है भौर स्नेहक (lubricant) के रूप में भी इस्तेमाल होने की क्षमता रखता है। इसी से इसे श्वेत कज्जल भौर श्वेत ग्रेफाइट भी कहा जाता है।

अतिरिक्त ऊँचो दबाव बोरन नाइट्राइड को, जो ग्रेफाइट के समान होता है, हीरे के समान बनावट मे परिणत कर देता है जो बोराजोन कहलाता है। 1957 ई. में संयुक्त राज्य भमरीका में प्राप्त हुआ बोराजोन (बोरोनाइट्रोजन) हीरे से कहीं अधिक स्थायी भौर अग्नि सह होता है। बोरन नाइट्राइड को 73 हजार वायुमण्डल का दबाव बोराजोन में बदल देता है, जो केवल 2000^{0}C पर जलता है जब कि हीरा 871^{0}C पर जलता है।

बोराजोन सफलता पूर्वक माइनिंग विभाग, मशीन-निर्माण तथा उपकरणों के बनाने में हीरे को विस्थापित कर रहा है।

प्रकाश रखने वाला

ग्रीक भाषा में 'फास्फोर' शब्द का यही अर्थ है। 'फास्फोर' उस अद्भुत पदार्थ को नाम दिया गया, जिसे 1969 ई० में हैम्बर्ग के एक व्यापारी, हेनिंग ब्रांड ने खोजा था।

मध्य शताब्दियों में यह विचार बहुत व्यापक था कि कदाचित् प्रत्येक धातु सोना में परिणत की जा सकती है। इसके लिए कुछ अधिक नहीं करना था—केवल "दार्शनिक (पारस) पत्थर" प्राप्त कर लेना था, जिसके बारे में यह सोचा जाता था कि उसमें धातुओं को सोना में परिवर्तित करने की चमत्कार-पूर्ण शक्ति है। इस अद्भुत पत्थर को प्राप्त करने के लिए जो लोग प्रयत्नशील थे, कीमियागर कहलाते थे। ब्रांड भी इसी प्रकार के अनुसन्धानकों में से एक था।

हेनिंग ब्रांड किसी समय बहुत धनी व्यापारी था, और बड़े ऐश्वर्य के साथ रहता था परन्तु उसका रोजगार गिरता गया और अन्ततः एक ऐसा समय आया जब उसकी कुल-सम्पत्ति नीलाम हो गई। तब ब्रांड ने अपनी दशा फिर सुधारने के विचार से कीमियागर बनने का निश्चय किया। सफलता उसे तत्काल धनी बना सकती थी।

ब्रांड ने बहुत से दिन और रातें पारस पत्थर की खोज में बिता दी। वह अपने प्रयोगों को दृढ़ता एवं हठ के साथ करता गया। प्रयोगों में शायद ही कोई पदार्थ बचा हो जिसका व्यवहार न किया गया हो। कच्ची धातुयें और खनिज पदार्थ, वनस्पतियों और पशुओं की अस्थियां, धातु और लवण, और इनके अतिरिक्त अनेकों अन्य पदार्थ प्रयोग किये गये। ब्रांड इन सबको ओखली में डालकर खूब कूटता, पीसता, मिलाता, खूब गर्म करता, अम्लों से व्यवहृत करता, पारा डालकर हिलाता, गंधक डालता और खूब मिलाता और फिर तेज गर्म करता""। इस प्रकार दिन के बाद दिन, सप्ताह के बाद सप्ताह बीतते गये। समय बीतता गया पर "पारस-पत्थर" के प्राप्त करने का रहस्य, रहस्य ही बना रहा।

यहीं एक दिन पेशाब के सूखे अवशेषों को तेज आंच में तपाते हुए ब्रांड ने देखा कि भभका से कोई ऐसा पदार्थ पृथक हो रहा है, जो वायु में बड़ी तेजी से जल उठता है और जलते समय घना सफेद धुंआ देता है। स्वयं भभका प्रयोग-शाला के धुंधले अन्धकार में धीमे-धीमे चमक देने लगा। ब्रांड का हृदय धड़कने लगा। उसने सोचा पवित्र पारस पत्थर उसे प्राप्त हो गया है, जिससे वह अपार धन प्राप्त करेगा।

प्रतीत होता था कि इस काल्पनिक प्रस्तर का प्राप्त करना आसान नहीं है और ब्रांड को बहुत परिश्रम करना शेष है। किन्तु अर्से से प्रतीक्षित अवसर सामने था। बैठते हुए दिल के साथ ब्रांड ने यह देखा कि किस प्रकार भभके के रिसीवर में वह असाधारण प्रकाश विकर्ण करने वाला श्वेत पदार्थ पानी के नीचे एकत्रित हो रहा था और जितना ही अधिक वह एकत्रित होता जा रहा है उतना ही अधिक उस अद्भुत पदार्थ से निकलने वाला प्रकाश चमकदार होता जा रहा था। प्रकाश इतना अधिक बढ़ गया कि उसमें किताब पढ़ी जा सकती थी। ब्रांड इससे आश्चर्यचकित था।

वस्तुतः पदार्थ चमत्कारपूर्ण प्रकट हो रहा था। उसका प्रकाश जलाता नहीं था। उसे हाथ से स्पर्श किया जा सकता था और सबसे बड़ा गुण यह था कि कुल पदार्थ जो उसके सम्पर्क में होते थे अन्धकार में चमकने की क्षमता ग्रहण कर लेते थे। भभके का रिसीवर, ब्रांड की हथेलियां, चम्मच, जिससे उसने पदार्थ निकालकर प्याले में डाला था—सब एक सा शीतल प्रकाश देते हुये चमक रहे थे।

ब्रांड थक कर एक तिपाई पर बैठ गया। वह सोच रहा था—आखिरकार "पारस पत्थर" उसके हाथ लग ही गया। परन्तु शीघ्र ही उसको यह ज्ञात हुआ कि उसका "पारस पत्थर" दूसरी धातुओं को सोने में परिणत नहीं कर सकता है। किन्तु इससे वह कीमियागर हताश नहीं हुआ। यह पदार्थ इतना अद्भुत था, तथा अन्य पदार्थों से इतना भिन्न था कि वह अन्ततः उसे सोने में बदलने में समर्थ हो गया। ब्रांड ने उसे बड़ी ऊंची कीमत पर बेचा और उसका नाम उसने "शीतल अग्नि" रक्खा जिसे, बाद को फास्फोरस का नाम दिया गया।

श्वेत, अरुण, कृष्ण···!

यह फास्फोरस है क्या? इसके क्या गुण हैं?

प्रथम प्रश्न का उत्तर 1777 ई० में विख्यात फ्रेंच वैज्ञानिक लवेआयर ने दिया। उसने फास्फोरस के ज्वलन का काफी लम्बे समय तक ध्यान-पूर्वक अध्ययन किया और सबसे पहले उसे एक नया तत्व घोषित किया। दूसरे प्रश्न का उत्तर भी कठिन नहीं है यदि केवल उसके रासायनिक गुणों तक ही सीमित रहा जाये।

पर फास्फोरस के भौतिक गुण क्या हैं?

यद्यपि फास्फोरस की खोज हुए लगभग तीन सौ वर्ष बीत चुके हैं पर इस समय भी इस प्रश्न का कोई सरल उत्तर नहीं है। एक फास्फोरस नहीं हैं, तीन हैं।

ब्राड के फास्फोरस की खोज करने के बाद 178 वर्षों तक उसे श्वेत पदार्थ समझा जाता था। यह समझा जाता था कि वह अन्धकार में चमकता है। वह मोम के समान मुलायम होता है और सरलता से जल उठता है। 1847 ई० में जर्मन रसायनशास्त्री श्रेतेर ने फास्फोरस का दूसरा प्रभेद खोजा। यह था लाल फासफोरस। उसके गुण श्वेत फास्फोरस से बहुत अधिक भिन्नता प्रकट करते थे। यह श्वेत फासफोरस से डेढ़ गुना अधिक भारी था और कार्बनडाइ-सल्फाइड में नहीं घुलता था। सबसे विशेष बात यह थी कि वह अन्धकार में चमकता नहीं था। श्वेत फासफोरस 40° सेन्टीग्रेड तापमान पर जलता है जबकि लाल फासफोरस 44°C तापमान पर जलता है।

किन्तु यही अन्त नहीं था। फासफोरस का एक और प्रभेद—काला फासफोरस सन् 1916 ई. में प्राप्त हुआ। यह बड़ा अद्भुत फासफोरस है। ऊपरी दिखावे में वह ग्रेफाइट के समान होता है और विद्युद्वार का संचालक (Conductor) भी होता है।

पर वे श्वेत, अरुण और कृष्ण फासफोरस एक ही तत्व हैं, वही जो ब्रांड ने खोजा था। यह सिद्ध हुआ कि ये तीनों प्रभेद कुछ निश्चित अवस्थाओं में परिणत एक दूसरे में किये जा सकते हैं।

फासफोरस के रासायनिक तत्वान्तरण (Transmutations)

फासफोरस केवल अपने भौतिक गुणों के कारण ही विलक्षण पदार्थ नहीं है, रासायनिक क्षेत्र में भी वह विलक्षण गुण प्रकट करता है। उदाहरण के लिए वह 5+,3+,3— संयोजकतायें रखता है। वह न केवल विभिन्न तत्वों से पारस्परिक प्रतिक्रिया करता है वरन् अनेक यौगिको से भी पारस्परिक प्रतिक्रिया करता हुआ, अनेक प्रकार के विभिन्न यौगिक निर्माण करता है। यहां पर हम फासफोरस के कुछ मूल यौगिकों का ही वर्णन करेंगे।

यह तत्व हैलोजन तत्वों से बड़ी सरलता से प्रतिक्रिया करता है। वह क्लोरीन से पारस्परिक प्रतिक्रिया करता है और निम्नलिखित यौगिक बनाता है:

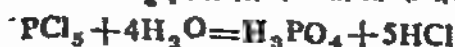


$$2P+5Cl_2=2PCl_5$$



$$2P+3Cl_2=2PCl_3$$

ये दोनों यौगिक, फास्फोरस पेन्टाक्लोराइड तथा फासफोरस त्रि-क्लोराइड जो हैलायड अन्हाइड्राइड कहे जाते हैं, बड़ी सक्रियता रखते हैं और जल से पारस्परिक प्रतिक्रिया करते हुए विभिन्न फासफोरस के अम्ल बनाते हैं।



$$PCl_5+4H_2O=H_3PO_4+5HCl$$



$$PCl_3+3H_2O=H_3PO_3+3HCl$$

फासफोरस हाइड्रोजन से भी संयोजित हो सकता है और ऐसे पदार्थ देता है जिनको फासफीनों की संज्ञा दी गई है। फासफोरस की हाइड्रोजन में पारस्परिक प्रतिक्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं :



$$2P+3H_2=2PH_3$$

जो पदार्थ इस समय बनता है उसे फासफोरित हाइड्रोजन (Phosphoretted hydrogen) कहा जाता है। यह विषैली गैस होती है जिसकी गंध तेज और अप्रिय होती है। इसके गुण अमोनिया से मिलते हैं। इस प्रतिक्रिया में फासफीन (फासफोरित हाइड्रोजन) के साथ-साथ दूसरे सदृश (Analogous) यौगिक प्राप्त होते हैं, उदाहरण के लिए, P_2H_4, जो साधारण परिस्थितियों में द्रव होता है और वायु में स्वतः जलने लगता है।

ऊंचे तापमानों पर फासफोरस कुछ धातुओं से बखूबी पारस्परिक प्रतिक्रिया करता है और फासफाइड कहलाने वाले यौगिक देता है, उदाहरण के लिए :



$$3\ 3Ca+2P=Ca_3\ P_2$$



$$3\ Mg+2P=Mg_3\ P_2$$

ये यौगिक जो स्वयं स्थायी होते हैं अम्ल की उपस्थिति में विघटित हो जाते हैं :

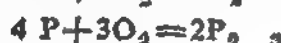


$$Mg_3\ P_2+6\ H\ Cl=3Mg\ Cl_2+2\ PH_3$$

फासफोरस सरलता से आक्सीजन से संयोजित होता है। इसमें भी, क्लोरीन से पारस्परिक प्रतिक्रिया करने के समान ही, क्रिया आक्सीजन की मात्रा पर निर्भर करते हुए दो मार्गों से सम्पन्न हो सकती है।



$$4\ P+5O_2=2P_2\ O_5$$



$$4\ P+3O_2=2P_2\ {}_3$$

इस समय बनने वाले पदार्थ फासफोरिक और फासफोरस अन्हाइड्राइड क्रमशः कहलाते हैं। ये अत्यन्त आर्द्रता ग्राही (Hydroscopic) श्वेत पदार्थ होते हैं और पानी से तेजी से प्रतिक्रिया करते हुए एसिड बनाते हैं।

यह कहा जा सकता है कि फासफोरस आवर्त सारणी (Periodic table) के तत्वों तथा बहुत से यौगिकों, उदाहरण के लिए, गंधक, कास्टिक क्षार, अम्ल, कुछ लवण, आदि से प्रतिक्रिया करने की क्षमता रखता है। फासफोरस के यौगिकों की विविधता के बारे में केवल, इसी बात से अन्दाज लगाया जा सकता है कि इससे ऐसे यौगिक प्राप्त किये जा सकते हैं जिनके रासायनिक फार्मूले POFCl Br तथा PSF Cl Br से प्रदर्शित किये जाते हैं।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कार्बन से फास्फो… होता है, किन्तु इस कमी को वह मय ब्याज के उस स…

वह बहुत बड़ी संख्या में फासफोरसार्गेनिक यौगिक बनाता है, जो फासफोरस के विभिन्न यौगिकों (Derivatives) और कार्बनिक यौगिकों की पारस्परिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप प्राप्त होते हैं। इनमें से कुछ पशुओं और मनुष्यों के जीवन में विशेष महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले यौगिकों के बारे में आगे कहूंगा।

साधारणतः तत्वीय फासफोरस कहा जाने वाला फास्फोरस स्वयं बहुत सीमित उपयोगिता रखता है। श्वेत फासफोरस अत्यन्त विषैला होता है: इसलिए उनका उपयोग कृषि के शत्रु-जीवों के मारने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त उसका उपयोग युद्ध में विशेष प्रकार के आग लगाने वाले (Incendiary) बमों तथा धुंआ का पर्दा निर्माण करने के लिए धुंआ देने वाली वस्तुओं में भरे जाने में होता है। लाल फासफोरस का उपयोग दियासलाई की तीलियां बनाने में किया जाता है, परन्तु फासफोरस के यौगिकों का महत्व वास्तव में बहुत अधिक है।

फासफोरिक एसिड

हम बता चुके हैं कि फासफोरस आक्सीजन से संयोजित होने की क्षमता रखता है, और विभिन्न आक्साइडें बनाता है। अब हम यह बतायेंगे कि पानी से इन आक्साइडों की प्रतिक्रिया से कौन-कौन पदार्थ प्राप्त होते हैं। सबसे अच्छा यह है कि हम फासफोरिक अन्हाइड्राइड---P_2O_5 से प्रारम्भ करें। यह ज्ञात हुआ है कि जब वह पानी से प्रतिक्रिया करता है तो, जैसा कि साधारणतः अन्य अन्हाइड्राइडों के साथ होता है, वह एक अम्ल नहीं देता है बल्कि तीन अम्ल देता है। पहले हमने तीन प्रकार के तत्वीय फासफोरस देखे। अब हम तीन प्रकार के सम्बन्धित अम्ल देखते हैं:



$$P_2O_5 + H_2O = 2HPO_3$$

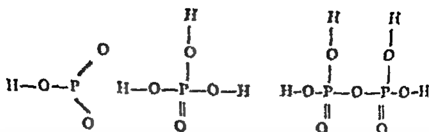


$$P_2O_5 + 3H_2O = 2H_3PO_4$$

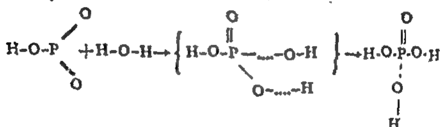


$$P_2O_5 + 2H_2O = H_4P_2O_7$$

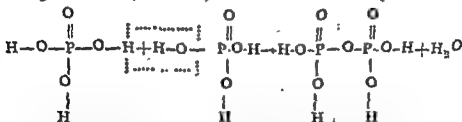
जो क्रमशः मेटा-फासफोरिक एसिड, आर्थो फासफोरिक एसिड (या केवल फासफोरिक एसिड) और पाइरो फासफोरिक एसिड है। इस प्रकार प्रतिक्रिया करने वाले जलीय अणुओं की मात्राओं पर निर्भर होते हुए फासफोरिक अन्हाइड्राइड के एक अणु से विभिन्न एसिड प्राप्त किये जा सकते हैं। फासफोरिक अन्हाइड्राइड के इस विचित्र आचरण को आसानी से स्पष्ट करने के लिए हम इन पदार्थों की रासायनिक बनावटों के फार्मूले देंगे:



तीनों उपरोक्त अम्ल, जैसा कि साधारण भाषा में बोला जाता है समान आनुवंशिकी (Genetic) बन्धनों से बन्धे हैं, अर्थात् उनको एक दूसरे में परिणत करके प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, आर्थो-फासफोरिक एसिड को मेटा-फासफोरिक एसिड में सीधे पानी में संयोजन करा के बदला जा सकता है :



और पाइरो फासफोरिक एसिड को आर्थो फासफोरिक एसिड से उसके अणु को संघनित (Condense) करके प्राप्त किया जा सकता है।



सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि यह केवल सैद्धान्तिक सम्भावना मात्र नहीं है। वस्तुतः मेटाफासफोरिक एसिड से निश्चित परिस्थितियों में आर्थो तथा पाइरो फासफोरिक अम्लों को प्राप्त किया जा सकता है।

ये सब एसिडें साधारण परिस्थितियों में मणिभीकृत पदार्थ होती हैं। ये सब रंग हीन तथा पानी की शक्तिशाली अवशोषक हैं। सत्य यह है कि स्वयं फासफोरिक अन्हाइड्राइड इन सबसे अधिक पानी का अवशोषण करता है। वह दूसरी एसिडों से भी, उदाहरण के लिये नाइट्रिक एसिड से भी, जल सोखने की क्षमता रखता है और कुछ कार्बनिक पदार्थों को उनसे पानी लेते हुए कार्बनीकृत (Carbonized) करने की भी क्षमता रखता है।

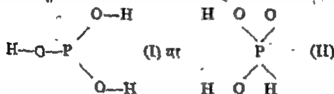
सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रयोगिक उपयोगिता आर्थो-फासफोरिक अम्ल रखता है और वह स्वयं इतनी उपयोगिता नहीं रखता है जितनी कि उसके लवण, जो उर्वरकों के रूप में प्रयोग किये जाते हैं।

मेटा, आर्थो, तथा पाइरो फासफोरिक अम्लों के बनाने के अतिरिक्त फासफोरस और भी अनेक अम्ल बनाता है, जिनमें सम्भवतः सर्वाधिक दिलचस्प फासफोरस एसिड है। यह अम्ल फासफोरस अन्हाइड्राइड की पानी से प्रतिक्रिया करा के प्राप्त किया जाता है।



$$P_2O_3+3H_2O=2H_2PO_3$$

यह भी सफेद, मणिभीकृत पदार्थ है, और पानी में सरलता से घुलता है। किन्तु उन अम्लों से, जो फासफोरस अपने ऊंची डिग्री के आक्सीकरण के समय बनाता है; विभिन्न आचरण प्रगट करते हुए फासफोरस एसिड और उसके लवण सब और विष होते हैं तथा एक और दिलचस्प बात है। फासफोरस की बनावट दो फार्मूलों से प्रदर्शित की जा सकती है :



ये दोनों बनावटें एक दूसरे से सन्तुलन-बनाती हुई उपस्थित होती हैं, किन्तु साधारण दशाओं में दूसरी (II) बनावट का प्राधान्य होता है। स्वयं एसिड और उसके लवणों के लिये फार्मूला II उत्तरदायी होता है, क्योंकि उनके केवल ऐसे लवण प्रसिद्ध हैं जो दो हाइड्रोजन के अणुओं को विस्थापित (Replace) करने से बने होते हैं, उदाहरण के लिये $Na_2\ HPO_3 \cdot 5H_2O$, किन्तु फार्मूला I के आधार पर जटिल कार्बनिक यौगिक (Derivatives) प्राप्त होते हैं। इस प्रकार की प्राकृतिक घटना को टाउटोमेरिज्म (Tautomerism) अथवा चला-वयवता कहते हैं, जो प्रायः कार्बनिक रसायन में देखी जाती है। यह दिलचस्प बात है कि फासफोरस एसिड शक्तिशाली अवकारक पदार्थ है और चाँदी के लवण के घोलों से चाँदी की धातु निकाल देता है तथा तांबे के लवणों के घोलों से तांबा पृथक कर देता है। स्वयं फासफोरस एसिड अत्यन्त स्थायी पदार्थ होता है और फासफोरिक एसिड में कठिनता से आक्सीकृत होता है। केवल इतना और कहना है कि फासफोरिक एसिड की भांति ही फासफोरस एसिड के भी अनुरूपतः मेटा-फासफोरस और पाइरो-फासफोरस अम्ल होते हैं।

वनस्पति का भोजन

ईसवी सन् से बहुत पूर्व ही मनुष्यों को यह पता चल गया था कि फसलें उगाने में मिट्टी का उर्वरत्व क्षीण होता है। फसलें क्रमशः हल्की होती हैं और

अन्ततः भूमि बंजर हो जाती है। पूरी की पूरी भावादियां अपने निवास स्थानों को छोड़कर दूसरे उपजाऊ स्थानों की खोज में चल देती थीं। वे वनों को जलाते और अछूती धरती को खेती योग्य बनाते थे, फिर कुछ ही वर्षों में उनको दूसरे स्थानों की खोज मे चल देना पड़ता था। शताब्दियां बीत गईं। मनुष्य ने अनुभव संचित किया, ज्ञानार्जन किया और वहीं मानव-विकास की किसी सीढ़ी पर खादों का उपयोग होना प्रारम्भ हो गया।

केल्ट (प्राचीन जर्मन जाति के लोग), उदाहरण के लिये, नये युग से कई सौ वर्ष पूर्व खादों का प्रयोग करते थे। यह भी ज्ञात है कि प्राचीन यूनान में खादों का प्रयोग किया जाता था। पर खादों का व्यापक रूप से उपयोग केवल आज से सौ वर्षों पूर्व प्रारम्भ हुआ।

गत शताब्दी के प्रथम तृतीयांश में प्रख्यात जर्मन वैज्ञानिक, युस्तुस लिबिख ने दिलचस्प प्रयोग सम्पन्न किये। उसने विभिन्न प्रकार के पौधों का बहुत बड़ी संख्या में रासायनिक विश्लेषण किया। परिणामतः यह प्रगट हुआ कि उन सबकी बनावट में दस तत्व हैं: कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, कैल्शियम, पोटैशियम, फासफोरस, गंधक, मैगनीशियम तथा लौह।[1] पौधों की सामान्य वृद्धि के लिये ये सब तत्व बड़े महत्वपूर्ण होते हैं। इनमें से किसी एक की अनुपस्थिति अन्य तत्वों की बहुतायत में भी पौधों की मृत्यु का कारण बन जाती है।

शीघ्र ही यह प्रगट हुआ कि पौधे वायु की कार्बन-डाइ-आक्साइड से कार्बन अवशोषित कर लेने की क्षमता रखते हैं। हाइड्रोजन एवं आक्सीजन वे पानी से प्राप्त करते हैं। मैगनीशियम, लोहा तथा गंधक पौधों को कम मात्रा में चाहिये और वे उसे पर्याप्त मात्रा में मिट्टी से प्राप्त कर सकते हैं। कुछ पौधे (उदाहरण के लिये सेम की श्रेणी के लेग्यूमिनस पौधे) वायु से नाइट्रोजन ग्रहण कर लेने की क्षमता रखते हैं। इस प्रकार पौधे के भली प्रकार उगने के लिये मिट्टी में पोटैशियम, फासफोरस, नाइट्रोजन व कभी कैल्शियम देना आवश्यक होता है। पर यह प्रगट हुआ है कि मिट्टी मे फासफोरस की कमी पौधों पर सबसे अधिक हानिकर प्रभाव डालती है।

मिट्टी में फासफोरस की कमी के सबसे मुख्य लक्षण पौधों की कमजोर उगावट और छोटी, गहरी हरी पत्तियां हैं। किन्तु अन्य लक्षण भी होते हैं। उदाहरण के लिये पेरू की लीमा घाटी में फासफोरस की कमी इस बात से प्रगट होती है कि मक्का के पौधों की पत्तियां बैंगनी (Purple) रङ्ग की हो जाती

---

1. अधिक श्रम के साथ किये गये प्रयोगों ने यह प्रतिपादित किया है कि पौधों में अनेक अन्य तत्वों का लेश भी पाया जाता है। ये लेशतः पाये जाने वाले तत्व पौधों की जैवीय क्रियाशीलताओं में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

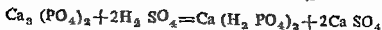
हैं। इसी प्रकार का रंग टमाटर की पत्तियों का भी फासफोरस की कमी के समय हो जाता है। किन्तु सबसे मुख्य बात पौधे की पत्तियों का रंग बदलना ही नहीं है। पत्तियाँ चाहे नीली ही पड़ जायें तो भी कोई हर्ज नहीं है यदि फसल के उत्पादन में कमी न आवे। पर यह प्रगट हुआ कि फासफोरस की कमी से पौधों की जड़ों का विकास शिथिल हो जाता है और उनका वाहिका तन्त्र (Vascular System) चौपट हो जाता है। माण्ड़ी शकर में नहीं परिणत होती और फलों का पकना रुक जाता है। यदि मिट्टी फासफोरस में घनी होती है, तो बिल्कुल इसके प्रतिकूल दशा देखने में आती है। पौधे की जड़ें बड़ी तेजी से विकसित होती हैं। उनके अंकुरण के समय विशेषकर उनकी शुष्कता सहने की शक्ति बढ़ जाती है और पकने में तेजी आती है। फासफोरस की उपस्थिति कोशिका विभाजन (Cell division) तथा चर्बी और अल्ब्युमीन के निर्माण पर अच्छा प्रभाव डालती है और अनाज की उपज घनी बनाती है।

फासफोरस की बहुतायत मक्का में 'कल्ले फोड़ने' में तेजी लाती है। मिट्टी में फासफेटों के मिला देने से तिपतिया घास व ल्यूसर्न (अल्फा अल्फा) बोने के वर्ष में ही बीज दे देते हैं जबकि साधारणतः वे दूसरे वर्ष बीज देते हैं।

किन्तु सबसे अप्रिय बात यह है कि मिट्टी में फासफोरिक एसिड व श्वेत फासफोरस न छोड़ना चाहिये। वे पौधों के लिये विष हैं। मिट्टी में लाल फासफोरस भी खाद के लिये न छोड़ना चाहिये। पौधे उसे पचा नहीं पाते हैं। हमारे समय में मिट्टी को उर्वरा बनाने के लिये फासफोरस की विशेष प्रकार की विभिन्न खादें कारखानों में तैयार की जाती हैं।

उनमें सबसे साधारण और आसानी से प्राप्त होने वाली खाद फासफोराइट (Phosphorite) है, जो प्रकृति में मिलने वाला कैल्शियम फासफेट $Ca_3(PO_4)_2$ है। कारखानों में उसे पीस कर चूर्ण बनाया जाता है और 'फासफोराइट पाउडर' के नाम से वह सीधा खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। किन्तु यह खाद सभी प्रकार की मिट्टियों के लिए उपयुक्त नहीं होती है। जैसा आप जानते हैं, कैल्शियम फासफेट पानी में घुलता नहीं है और ठोस रूप में उसे पौधा स्वाँगीकृत नहीं कर पाता है। इस कारण उसे अम्लिक भूमि में ही इस्तेमाल कर सकते हैं, जहाँ मिट्टी में उपस्थित विभिन्न कार्बनिक अम्ल उसे अधिक घुलने वाले यौगिक—कैल्शियम द्वारा हाइड्रोजन के दो अणु विस्थापित करके प्राप्त लवण, $CaHPO_4$ में परिणत कर देते हैं।

इससे अधिक प्रचलित खाद सुपरफास्फेट होती है, जिसमें एकीय विस्थापन का कैल्शियम का फासफेट $Ca(H_2PO_4)_2$ होता है, जो पानी में खूब घुलता है। पीसे हुए फासफोराइट को सलफ्यूरिक अम्ल से व्यवहृत करके इसे प्राप्त किया जाता है :



$$Ca_3 (PO_4)_2 + 2H_2 SO_4 = Ca (H_2 PO_4)_2 + 2Ca SO_4$$

इस प्रकार प्राप्त होने वाले कैल्शियम-डाइ-हाइड्रोफासफेट और कैल्शियम सल्फेट के मिश्रण को साधारणतः सुपरफास्फेट कहा जाता है और उसे सीधे खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है।

परन्तु साधारण सुपरफास्फेट खाद की सबसे बड़ी कमजोरी उसमें उपस्थित कैल्शियम सल्फेट है, जिसकी कोई आवश्यकता न पौधे को होती है और न मिट्टी को। यह अनावश्यक पदार्थ उसमें 54 प्रतिशत मौजूद होता है अर्थात आधे से भी अधिक है।

इसलिए द्विगुणित (Two Fold) सुपर फासफेट अधिक सुविधापूर्ण होता है, जो 2 मंजिलों में प्राप्त होता है। प्राकृतिक फास्फोराइट से पहले फासफोरिक एसिड प्राप्त की जाती है:



$$Ca_3 (PO_4)_2 + 3H_2 SO_4 = 2H_3 PO_4 + 3Ca SO_4$$

कैल्शियम सल्फेट अक्षेपित हो जाता है और उसे फिल्टर करके अलग कर लिया जाता है। प्राप्त होने वाली फासफोरिक एसिड को फिर फासफोराइड के नये अंशों से प्रतिक्रिया कराते हैं:



$$Ca_3 (PO_4)_2 + 4H_3 PO_4 = 3 \ Ca (H_2 PO_4)_2$$

द्विगुणित (डबल) सुपरफासफेट पानी में भली-भांति घुलने वाला फासफोरिक एसिड का लवण होता है। वह हर प्रकार की मिट्टियों में प्रयोग किया जा सकता है।

यह कहना और शेष है कि प्रति वर्ष संसार की कुल फसलें मिट्टी से लगभग 10 मिलियन टन फासफोरिक एसिड लेती हैं।

जीवन को चलाने वाला

गत शताब्दी के मध्य में यह पता चला कि कैल्शियम फासफेट पशुओं और मनुष्यों की हड्डियों का मुख्य अंग होता है और फासफोरस के कुछ जटिल यौगिक मस्तिष्क के तन्तुओं के अंग होते हैं। इस खोज ने लगभग आज से सौ वर्ष पूर्व जर्मन रसायन-शास्त्री मोलेशोत की इस घोषणा को सम्भव बनाया कि 'फासफोरस के बगैर विचारों का अस्तित्व असम्भव है।' और अब हमारे समय में वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि फासफोरस के बगैर केवल विचार ही नहीं मनुष्य, पशु, वनस्पति में से किसी की भी उपस्थिति की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

जैवीय शरीर को फासफोरस की आवश्यकता क्यों होती है? इस प्रश्न का विस्तृत उत्तर हमारी पुस्तक के विषय की सीमाओं को देखते हुए अत्यन्त कठिन

है, और इसके अतिरिक्त यह भी सत्य है कि जीवों के शरीर में उपस्थित अनेक फासफोरस के यौगिकों की भूमिका इस समय तक अंतिम रूप से स्पष्ट नही हो सकी है।

मुख्यतः यह ध्यान देना आवश्यक है कि मानव एवं पशु शरीर में उपस्थित कुल फासफोरस का उद्गम या तो वनस्पतीय होता है, या जैवीय। सीधे मिट्टी से फासफोरस ग्रहण करने की क्षमता केवल पौधों में होती है, और वह भी केवल फासफोरिक एसिड के घुलनशील लवणो के रूप में फासफोरस का सचय पौधो मे उस स्थान पर होता है जहां कार्बनिक पदार्थों की सश्लेषण सम्बन्धी तेज प्रक्रियायें चल रही होती हैं और जहां पौधों के कोषाणुओ मे प्लाविकायें (Plasma) बहुतायत से होती हैं। वहा क्या हो रहा होता है ?

साधारणतः जब हम कहते हैं कि पौधा सीधे वायु से कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस स्वांगीकृत (Assimilate) करता है और उससे कार्बनिक यौगिक निर्माण करता है, हम इस क्रिया को निम्नलिखित समीकरण से प्रदर्शित करते हैं :



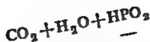
$$6\ CO_2 + 6H_2O = C_6H_{12}O_6 = 6O_2$$

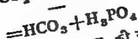
अर्थात् हम कहते हैं, कि कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस और पानी से ग्लूकोज बनता है, जो आगे के परिवर्तनों मे जटिल कार्बनिक पदार्थ देता है। किन्तु यह क्रिया आगे चल कर इतनी सरल नहीं मालूम पड़ती।

जब वैज्ञानिक इसके विस्तृत अध्ययन में लगे थे तो उस समय दो दिलचस्प तथ्य सामने आये। पहला यह कि उपरोक्त प्रतिक्रिया में ऊर्जा की बड़ी मात्रा का व्यय आवश्यक होता है और ठीक यह ऐसे ही जैसे जल और कोयले से शकर प्राप्त करने का प्रयत्न करना ! पौधा इतनी ऊर्जा कहा से प्राप्त करता है ? और दूसरा तथ्य यह था कि फोटो-सश्लेषण (पौधों द्वारा कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस का पचन) पौधे में फासफोरस की कमी होने के समय बड़ी तेजी से कम होता जाता है।

वैज्ञानिकों ने खोज की कि हरिताणु (Chloroplast) कहलाने वाले, फोटो सश्लेषण सम्पन्न करने वाले विलक्षण वानस्पतिक पदार्थ की रचना में फासफोरस सीधे प्रवेश कर जाता है। पौधो में फासफोरस की भूमिका का आगे का अध्ययन (जो कई दशाब्दियों तक चला) निम्न निष्कर्षों पर पहुंचने की अनुमति देता है :

प्रथम यह है कि फासफोरस वायु से कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस निबन्धित करने मे काफी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यह प्रगट हुआ कि घुलनशील फासफेट निम्नलिखित रूप से कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस अवशोषित कर सकते हैं :

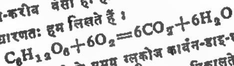




दूसरा यह कि फासफोरस क्लोरोप्लास्ट की रचना में जटिल व्युत्पन्नों (Derivatives) के रूप में प्रविष्ट होता है, जिन्हें फासफोलिपिड (Phospholi-pid) कहा जाता है। (स्वयं फासफोलिपिड ग्लिसिराइड होते हैं जो चर्बियों से केवल इस बात में भिन्न होते हैं कि उनमें ग्लीसीन के दो हाइड्रॉक्सिल सदैव चर्बीय एसिड के दोनों रेडिकलों से संयोजित होते हैं और तीसरा हाइड्रॉक्सिल फासफोरस एसिड से संयोजित होता है।)

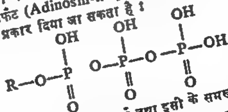
और अन्ततः तीसरे से यह प्रगट हुआ कि कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस और जल की पारस्परिक प्रतिक्रिया, जिसके परिणामस्वरूप ग्लूकोज प्राप्त होता है, कई मंजिलों में सम्पन्न होती है, और बीच की मंजिलों में से एक में फासफो-ग्लिसरिक एसिड कहलाने वाला जटिल फासफो-आर्गेनिक यौगिक बनता है।

यह भी प्रगट हुआ कि श्वास लेने के लिये भी फासफोरस आवश्यक है। यहां भी करीब-करीब वैसा ही होता है जैसा कि ग्लूकोज के संश्लेषण के समय होता है। साधारणतः हम लिखते हैं :



फलतः, श्वास लेने के समय ग्लूकोज कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस और पानी में बदल जाता है, जिन्हें हम श्वास से बाहर निकालते हैं। पर, यह क्रिया भी आगे चलकर इतनी सरल नहीं दिखाई पड़ती।

वनस्पतीय और जैवीय शरीरों में एक जटिल कार्बनिक पदार्थ स्थित होता है, जिसकी रचना में फासफोरस विद्यमान होता है। इस जटिल पदार्थ को एडे-नोसिनट्राइ-फासफेट (Adinosin-tri-phosphate) कहते हैं। सिद्धान्ततः इसका फार्मूला निम्न प्रकार दिया जा सकता है :



यह प्रगट हुआ कि यह पदार्थ तथा इसी के समरूप पदार्थ श्वास लेने के समय बनते हैं और साथ ही जैवीय शरीरों में मांसल ऊर्जा के विलक्षण संचयकों का काम करते हैं।

श्वसन की क्रिया के समय ग्लूकोज जटिल फासफोरिक एसिड के ईथर निर्माण करता है, जिनको डाइफासफेट कहा जाता है। इस अवसर पर ग्लूको

के लगभग पांच या छः अणु डाइफासफेट बनाते हैं और एक अणु कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस तक आक्सीकृत हो जाता है। इसके बाद डाइ फासफेट, एडिनो-सिन-ट्राइ-फासफेट में परिणत हो जाते हैं।

एडिनोसिन ट्राइ फासफेट के अणु अल्ब्युमीन के अणुओं से संयोजित होते हुए उनको निश्चित शक्ल लेने के लिये बाध्य कर देते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि अणु अपने में ऊर्जा संचित रखता है। यदि इस प्रकार के "सक्रिय" अणु को स्नायु तन्तु 'काम करने' की आज्ञा पहुंचाते हैं तो अणु का ढांचा तेजी से बदलता है—वह संकुचित होता है और मनुष्य कोई काम करता है, उदाहरण के लिये हाथ मोड़ता है। इस समय एडिनो-सिनट्राइ-फासफेट के अणु एडिनोसिन-डाइ-फासफेट के अणु में परिणत हो जाता है, और इसलिये मांस-पेशी पुनः कोई काम करने की क्षमता प्राप्त कर ले यह आवश्यक होता है कि अल्ब्युमीन के अणु फिर एडिनो-सिनट्राइ फासफेट के अणुओं से संयोजित हों ताकि वे अपनी प्रारम्भिक अवस्था में आ जायें, अर्थात् ऊर्जा के नये अंश अपने में संचित कर लें।

आज से तीन सौ वर्ष पूर्व खोजे गये फासफोरस ने अपना नाम अपनी अन्धकार में चमकने की क्षमता से प्राप्त किया था। किन्तु, जैसा कि हम देखते हैं, केवल इतना ही नहीं है कि वह शब्दशः 'प्रकाश देने वाला' है। यह फास-फोरस हमारे खेतो को फल देता है और घरों को अनेक उपजो से भर देता है। फासफोरस पशु एवं वनस्पति शरीरों को जीवनी-शक्ति प्रदान करता है। वस्तुतः उसे 'प्रकाश देने वाला' नहीं 'जीवन चलाने वाला' कहना अधिक उचित है।



दो गैसों से महासागर

"पानी की बूंद मे संसार प्रतिबिम्बित है" यह कोरी कवि की कल्पना नहीं है। वास्तव में पानी की बूंद हरी पत्ती और मनुष्य का जीवन, शक्तिशाली कारखानों की धुयां देती चिमनियां हरे भरे खेत, भावी थर्मोन्यूक्लियर, विद्युत स्टेशनों की रूपरेखायें (Contours), तथा दूर नक्षत्रों की ओर दौड़ते हुए कास्मिक यान का मार्गचिन्ह (Trace mark) देखे जा सकते हैं।

सर्वाधिक साधारण एवं सर्वाधिक प्रख्यात द्रव, जल रसायन—सक्रिय दो गैसो से बना है—हाइड्रोजन और आक्सीजन। एक लिटर जल मे 111.1 ग्राम हाइड्रोजन तथा 888·9 ग्राम आक्सीजन होती है। दूसरी तरह से यह भी कह सकते हैं कि जल मे 1254.32 मीटर हाइड्रोजन से ठीक इसकी आधी आक्सीजन सयोजित होती है। पृथ्वी पर 2.10^{18} टन पानी है। इस मात्रा को अधिक अच्छी प्रकार से बोध गम्य बनाने के लिये एक विशाल सिलिण्डर की कल्पना कीजिये जिसका आधार 1 वर्ग मीटर हो। इस सिलिण्डर में 300 किलोमीटर की ऊंचाई मे, जो पृथ्वी के सूर्य के चारों ओर घूमने के कक्ष के व्यास के बराबर है, हमारे ग्रह का कुल पानी समा सकेगा।

पृथ्वी पर पानी का वितरण किस प्रकार है? इसका बड़ा भाग सागरों एवं महासागरों में है। शेष नदियो, झीलो, स्थल पर स्थित बर्फ के ढेरो, पहाड़ी चट्टानों और खनिजों मे स्थित है। वायु मण्डल मे कुल का एक लाखवां भाग है। पूरी समग्रता मे यदि देखिये तो यह थोड़ी मात्रा नही है। वायुमण्डल मे स्थित कुल जलीय वाष्प जल मे परिणत हो जावे तो महासागरों का ऊपरी जल-तल एक चौथाई मीटर ऊंचा उठ जायेगा। प्रतिवर्ष पानी की विशाल मात्रा प्रकृति के तृतीय भ्रमण-चक्र में भाग लेती है। यदि वाष्पीकृत होने वाला सम्पूर्ण जल वायुमंडलीय ऊंचाइयो को लांघ कर बाहर निकलने मे समर्थ हो जाये, तो महासागरों का ऊपरी जल-तल प्रतिवर्ष पचहत्तर सेन्टीमीटर नीचे गिरेगा।

फेर्समान के शब्दो में यदि व्यक्त किया जाये तो जल पृथ्वी की नस (Nerve) है। जल प्रत्येक स्थान पर है। पत्थर मे भी जल है। और इसमें विश्वास दिलाने के लिये बुढ़ियों की बच्चों की कहानियों मे प्रगट होने वाले दैत्य को बुलाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी कि वह पत्थर से निचोड़ कर पानी निकाले।

प्रत्येक रसायनशास्त्री कहता है कि, उदाहरण के लिए, एक किलोग्राम, जिप्सम में 210 ग्राम जल होता है। जल हर जंवीय शरीर में होता है।

जल की शुद्धता के बारे में

पाठ्य-पुस्तकों में साधारणतः यह लिखा होता है कि जल पारदर्शी रंग-हीन द्रव है जिसमें न कोई गंध होती है, न कोई स्वाद।

स्वीडिश वैज्ञानिक जोतेर्मान का विश्वास है कि पशु जल में अनुरूपतः वैसा ही स्वाद जल में अनुभव करते हैं जैसा कि हम मनुष्य, उदाहरण के लिए, नमक में अनुभव करते हैं। मनुष्य के शरीर में वैसे विश्लेषक नहीं विद्यमान है, किन्तु जल का स्वाद हमारे लिए एक साधारण (Notion) बन गया है, वह किसी प्रकार अमूर्त (Abstract) नहीं है।

नलों से मिलने वाला जल एक चीज है, पारदर्शी चश्मों से प्राप्त जल दूसरी चीज। उनके स्वादों में बड़ा अन्तर होता है। ऊपर से देखने में दोनों एक समान होते हैं। अवश्य, जल बहुत अच्छा विलायक है। उसमें सदैव लवणों और गैसों की मिलावटें विद्यमान रहती हैं। प्रकृति में सर्वाधिक शुद्ध जल वर्षा से मिलने वाला जल होता है, किन्तु वह भी बगैर मिलावट के नहीं होता है। एक किलोग्राम बरसात के पानी से पूरा भाप बना कर उड़ा देने के बाद 30 मिलीग्राम सूखा पदार्थ नीचे दबा मिलता है। साथ ही एक लिटर पानी में कम से कम 200 मिलीग्राम गैसें घुली रहती हैं। और यदि नदी का पानी लिया जाये ?

प्रत्यक्षतः शुद्ध एक टन मोवा नदी के जल में 57 ग्राम घुले पदार्थ होते हैं। नीपर नदी के जल में 187 ग्राम, और नील नदी के धुंधले, पीले जल में 1600 ग्राम घुले पदार्थ होते हैं। और हमारे घरों में नलों से प्राप्त जल में क्या होता है ? प्रत्येक गृहणी समझती है कि चाय की केतली के भीतर सतह में रोजाना पानी उबालने से कुछ समय बाद पीली तलछट बैठ जाती है। ये मैग्नीशियम और कैल्शियम के कार्बोनेट होते हैं। जल-कल तक पहुंचने के अपने लम्बे मार्ग और समय में जल वायुमण्डल की कार्बन डाइ-आक्साइड गैस अपने में घुलित कर लेता है, पहाड़ी चट्टानों से संपर्क में आकर वह उनसे मैग्नीशियम और कैल्शियम-कार्बोनेटों को अपने साथ घोल कर ले आता है।

जल तांत्रिक अर्थ व्यवस्था को पानी की मिलावटें बड़ी हानी पहुंचाती हैं। यह कहना ही काफी होगा कि एक शक्तिशाली टर्बिन के फलकों पर पानी की मिलावट के परिणामस्वरूप जली हुई तह छुड़ाने के लिए पच्चीस हजार रूबल व्यय करना पड़ता है।

किन्तु इस प्रकार की हानिकर मिलावटों से जल को किस प्रकार शुद्ध किया जाता है ? पहली मंजिल में उसे रासायनिक पदार्थों से परिशुद्ध करते हैं। जल को मृदु बनाने के लिए चूना, सोडा और क्षार डाल कर मैग्नीशियम और कैल्शियम के कैटायनों को अवक्षेपित (Precipitate) कर लिया जाता है। इन तत्वों के लवण, जो बनते हैं तलछट के रूप में नीचे बैठ जाते हैं।

रसायनशास्त्री प्रयोगशालाओं में अपने प्रयोगों में आसुत (Distilled) जल उपयोग करते हैं। इसे विशेष उपकरणों की सहायता से प्राप्त किया जाता है। साधारण जल को भभके में उबालते हैं। भाप कन्डेंसर में जाती हैं, जहाँ वह कन्डेन्स होकर पानी बन जाती है। पानी की बून्दें ढुलक कर रिसीवर में चली जाती है। किन्तु आसुत जल में 0·5–8 मिलीग्राम प्रति लीटर लवण होते हैं। इतनी मिलावट डिस्टिल्ड पानी में सम्पन्न होने वाली प्रति क्रियाओं में कोई प्रभाव नहीं डालती हैं। किन्तु जल के गुणों के अध्ययन के लिये यह आवश्यक है कि उसे और अधिक सूक्ष्मता से परिशुद्ध किया जावे।

पिछली शताब्दी में अधिक शुद्ध जल डिस्टिल्ड पानी को दोबारा एक छोटे उपकरण में, जिसमें वायु पम्प द्वारा निकाल ली जाती थी, डिस्टिल करके प्राप्त करते थे। आसुत जल को जिस फ्लास्क में एकत्रित किया जाता था उसे प्रयोग करने के पूर्व दस वर्ष पानी से विक्षालित (Lixiviate) किया जाता था।

वर्तमान समय में अधिक शुद्धता वाले, उदाहरण के लिये आइसोटोपीय विश्लेषण के लिये, जल प्राप्त करने के लिये जटिल विधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। अब किसी फ्लास्क की तय्यारी में दस वर्ष लगाने की आवश्यकता नहीं रह गई है। वर्तमान रसायन को जल की परिशुद्धि के लिये सर्वाधुनिक शक्तिशाली माध्यम उपलब्ध है।

साधारणतः जल की शुद्धता की नाप उसकी विद्युत् संवहन करने की शक्ति से की जाती है। जितना ही कम यह विद्युत् संवहन करेगा उतना ही अधिक वह शुद्ध होगा।

बहुत ऊँची श्रेणी की शुद्धता वाला जल प्राप्त करने के लिये दोहरे आसवन वाली अपूर्ण कई बार की जाने वाली आसवन विधि के साथ आखिर में उसे आयोनीतों से व्यवहृत करके शुद्ध करते हैं। कार्बनिक पदार्थों की मिलावट से शुद्ध करने के लिये जल Co–60 के गामा-विकरण से पारित करते हैं। कार्बनिक मिलावटें कार्बन-डाइ आक्साइड गैस में परिणत हो जाती है, जो निष्क्रिय गैसों के प्रधमन (Insufflation) द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। और कोबाल्ट किरणीयन के फलस्वरूप बनने वाली हाइड्रोजन पर आक्साइड को अल्ट्रावायलेट किरणों के प्रभाव से विघटित कर देते हैं। शुद्ध जल ने विज्ञान का बहुत बड़ा उपकार किया है।

प्राकृतिक मान

हम बोलते हैं, "इतने अंश सेन्टीग्रेड"। सेन्टीग्रेड तापमान अन्तर्राष्ट्रीय है। वायुमण्डलीय दबाव पर शुद्ध-जल के उबलने एवं जमने के तापमानों के

अन्तर का सौवां भाग सेन्टीग्रेड तापमान का एक अंश होता है, जो सेन्टीग्रेड तापमानिक पैमाने की इकाई निर्धारित की गई है।

जल प्रकृति में सर्वाधिक फैला हुआ पदार्थ है। उसकी सहायता से 0°C तथा 100°C तापमान पर्याप्त सरलता से प्राप्त किए जा सकते हैं। इसी कारण से इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि तापमानिक पैमाने के लिए उसने आदर्श प्राकृतिक मान प्रदान किया। जल न केवल तापमान के विचार से सम्बन्ध रखता है वरण पदार्थीय आयतन, भार एवं ऊष्मा से भी सम्बन्धित है।

ग्राम एक सशर्त मात्रिक इकाई है।

ग्राम चार अंश सेन्टीग्रेड तापमान पर, जिसमें जल का घनत्व अधिकतम होता है, एक घन सेन्टीमीटर जल का द्रव्यमान और वजन है।

और पानी का महत्वपूर्ण गुण इकाई प्राप्त करने के कार्य में उपयोग किया गया है। एक किलोग्राम भार की लोहे की इस्तरी विद्युत चूल्हे पर रखिए। उसी प्रकार के अन्य चूल्हे में अल्यूमिनियम की पतीली में एक किलोग्राम पानी रखिये। कुछ समय बाद लोहे को आप नही छू सकेंगे जबकि पानी केवल बहुत हल्का गर्म होगा। अन्य पदार्थों की अपेक्षा जल एक अंश तापमान बढ़ाने के लिए बहुत अधिक उष्मा मांगता है। किसी वस्तु के एक ग्राम पदार्थ को एक अंश तापमान बढ़ाने के लिए जितनी ऊष्मा दरकार होती है, उसे उस पदार्थ की विशिष्ट ऊष्मा (Specific heat) कहते हैं। जल की विशिष्ट ऊष्मा सबसे अधिक ऊंची होती है और जल के इस गुण को भी ऊष्मा की इकाई—कारोलरी निर्धारित करने के लिये किया गया है।

पानी की तीन अवस्थायें

मछुवारे बड़े उद्योगी पुरुष होते हैं। जाड़ों में भी मछली पकड़ने का कार्य करते रहते हैं। बर्फ में छेद करते हैं, पानी में बंसी डालते हैं " प्रतीक्षा करते हैं। जल्दी या देर से शिकार मिलता है। उनमें से बहुत से शायद ही कभी सोचते हों कि इस आनन्द के लिए पानी की एक अनैयामिकता (Anomaly) के आभारी हैं। जल की इस अनैयमिकता के बिना तालाब या नदी थोड़े से शीत में ही द्रव की ठोस होती हुई पपड़ी से ढक जाते और अधिक तेज शीत में सीधे नीचे तल से ऊपर तक बर्फ से जम जाते हैं। और यह किस कारण : तापमान बढ़ने से सब पदार्थों का आयतन बढ़ता है। इसके अपवाद ग्र'तुयें बेलियम, विस्मथ और""" जल हैं। जल इस नियमितता का अनुसरण नहीं करता है। 0°C से +4°C के मध्य उसका आयतन तापमान बढ़ने से कम होता है। इसीलिए जाड़ों में जब वायु का तापमान 0°C से नीचे होता है पानी जलाशय के पेंदे तक नहीं जमता है।

स्वयं निर्णय कीजिए : हमारे सामने तालाब है। उसके ऊपरी धरातल का तापमान 4^0 सेन्टीग्रेड पर पहुंचा है। इस तापमान पर जल का घनत्व अधिकतम है। फलतः जल की सबसे ऊपर की तह पेंदे की ओर नहीं जायेगी। और अधिक ठंडक होती है। तापमान 0°C पर पहुंच जाता है। ऊपरी तह पेंदे की ओर नहीं जाती है, अपने स्थान पर रहती है और *बर्फ बन जाती है। जितना ही* अधिक शीत पड़ेगा उतनी ही अधिक मोटी बर्फ की पर्त बनेगी, किन्तु इस बर्फ की पर्त के नीचे पानी बना रहेगा।

बर्फ ऊष्मा का संवहन बहुत कम करता है। वह लिहाफ की तरह जल की नीचे की तहों को ठंडा होने से बचाता है। 0°C पर जल 4°C की अपेक्षा हल्का होता है। गुणात्मक दृष्टि से जल की नई अवस्था--बर्फ ('ठोस जल')—अपनी बनावट में अधिक "कुरकुरी" होती है।

किस गति से पानी गर्म होता है और बर्फ पिघलता है

हम कह चुके हैं कि जल की विशिष्ट ऊष्मा ऊंची होती है। एक ग्राम जल को एक अंश तापमान से गर्म करने के लिए एक कैलोरी ऊष्मा की आवश्यकता होगी। यह बड़ी मात्रा है। एक लिटर जल को कमरे के तापमान से उबाल-बिन्दु तक गर्म करने के लिए इतनी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ेगी जितनी तीन किलोग्राम वजन के कुत्ते के बच्चे को दस हजार मीटर ऊंचा उठाने में व्यय होती है। जल धीमे धीमे गर्म होता है और उतनी धिमाई से ठंडा भी होता है। इसी कारण जलीय प्रणाली द्वारा भवनों को गर्म करने (hot water heating) में जल का उपयोग सुविधापूर्ण होता है। परमाणविक रीएक्टरों में भी जल का उपयोग ऊष्मा सवांहक (heat conductor) के रूप में किया जाता है।

जल की उच्च तापीय धारिता हमारे ग्रह की जलवायु निर्धारित करने में बहुत बड़ा भाग लेती है। मिट्टी तेजी से गर्म होती है और उतनी ही तेजी से ऊष्मा दे देती है। पर जल गर्मियों में सूर्य से प्राप्त ऊष्मा को व्यर्थ नहीं फेंक देता। पूरे जाड़े भर महानगरों और सागरों का जल अपने ऊपर स्थित वायुमंडल को गर्म करता रहता है।

जल धीमे-धीमे गर्म होता है और उतने ही धीमे बर्फ पिघलता भी है। बर्फ को पानी के रूप में पिघलाने के लिये ऊष्मा की एक निर्दिष्ट मात्रा व्यय करने की आवश्यकता पड़ती है। इसे पिघलाने की ऊष्मा कहा जाता है। एक ग्राम पदार्थ को पिघलाने के लिये आवश्यक ऊष्मा को पदार्थों के गलन (पिघलन) की विशिष्ट ऊष्मा कहते हैं। बर्फ के लिये यह विशिष्ट ऊष्मा लगभग 80 कैलोरी होती है। केवल अल्यूमिनियम की गलन की विशिष्ट ऊष्मा इससे ऊंची होती है।

एक ग्राम जल को वाष्प में परिणित करने के लिये कितनी ऊष्मा की आवश्यकता होगी ? 538 कैलोरी। जल ज्ञात द्रवों में सबसे अधिक ऊष्मा अपने वाष्पीभवन (evaporation) के समय लेता है। स्टीमरों, रेल के इंजिनों, स्टीम (वाष्प से चलने वाले) टर्बिनों के फलकों को चलाते हुए जलीय वाष्प की ऊर्जा को बहुत सी दशाब्दियां बीत चुकी हैं।

जल का नाजुक खुला हुआ ढांचा

पानी क्यों अन्य द्रवों से इतनी विभिन्नता प्रगट करता है ? इसका क्या कारण है कि बर्फ की घनता पानी से कम होती है, पानी सर्वाधिक घना होता है, उसकी तापीय धारिता सबसे अधिक होती है और उसके वाष्पीभवन (Vapourisation) की ऊष्मा सबसे अधिक होती है ?

जल के व्यवहारों की अनैयामिकता उसके ढांचे की विशेषताओं से सम्बन्धित है। जल का अणु असममित (Asymmetrical) होता है : उसमें धनात्मक एवं ऋणात्मक प्रभारों के गुरुत्व-केन्द्र एक दूसरे पर सन्निपतित नहीं होते हैं। जलाणु में ध्रुव होते हैं और चुम्बक पत्थर की भांति ही, उसमें दो ध्रुव होते हैं : एक हाइड्रोजन परमाणुओं से बना धनात्मक प्रभार, दूसरा आक्सीजन का ऋणात्मक प्रभार। जल में हाइड्रोजनीय बंधन कहलाने वाले जोड़ बनते हैं। एक जल के अणु की हाइड्रोजन दूसरे जलाणु के आक्सीजन से बंधी होती है।

जल में हाइड्रोजन दो आक्सीजनों से एक साथ जुड़ी रहती है : अपने अणु की आक्सीजन से और दूसरे अणु की आक्सीजन से। "अपने" अणु की आक्सीजन से वह अधिक दृढ़ता से जुड़ी होती है। यह ध्यान रखिये कि जल में इसी प्रकार की क्षमता रखने वाले अन्य द्रवों की अपेक्षा हाइड्रोजनीय बन्धन अधिक दृढ़ होते हैं।

फलतः, जलीय अणु आपस में एक दूसरे से अन्य किसी भी द्रव के अणुओं की अपेक्षा अधिक दृढ़ता से जुड़े होते हैं।

फिर, ये किस प्रकार स्थित होते हैं ? पहले हम बर्फ को लेते हैं, जो जल की ठोस अवस्था है। कल्पना कीजिये कि हमें एक सन्दूक में बिलियर्ड के गेंद इस प्रकार रखने हैं कि वे जहां तक भी सम्भव हो सके कम संख्या में रखे जायें और साथ ही साथ स्थायी ढांचा भी बनावें। इस समस्या को हल करने पर हमें पता लगेगा कि हमारे कोष्ठक में एक गेंद केवल अन्य चार गेंदों को छूता है। यहां गेंदों की भरावट (Packing) कम घनत्व वाली होती है : इस भरावट का ढांचा खुला हुआ होता है, उसमें बहुत सी खाली जगह रहती है। इन खाली स्थानों की साइजें गेंदों की साइजों से कुछ बड़ी होती हैं। अब गेंदों के स्थान पर जल के

अणुओं को ले लीजिये। हमारे सामने बर्फ की बनावट का ढांचा आ जायेगा। अणु आपस में हाइड्रोजनीय बन्धनों से जुड़े होते हैं। कोष्ठक को जोर से हिला दीजिये। बर्फ का ढांचा टूट जायेगा और अवश्य ही अधिक घना हो जायेगा। बर्फ का पिघलना उसके ढांचे का अपना विशेष "झिटका" है।

चूंकि पानी के अणुओं के हाइड्रोजनीय बन्धन पर्याप्त दृढ़ होते हैं, उसका ढांचा—उसके अणुओं का अवकाशिक जाल (Spacial net)—आधारतः बर्फ के ढांचे की पुनरावृत्ति होती है। अनुसन्धानकों द्वारा लिये गये रेडियो चित्रणों से यह सिद्ध होता है। बर्फ का पिघलना उसके ढांचे के खाली स्थानों का अंशतः भरना है। पिघलने से उसकी घनता में वृद्धि होती है और आयतन में कमी हो जाती है।

0° सेन्टीग्रेड से 4° सेन्टीग्रेड तक आगे के तापमानिक बढ़ाव निम्न प्रक्रियाओं को जन्म देते हैं :—एक ओर जल के अणु संतुलन-केन्द्र के चारों ओर अपने कम्पनों (Vibrations) को तेज कर देते हैं, दूसरी ओर अधिकाधिक संख्या में अणु खाली स्थानों में प्रवेश करते हैं। अधिकाधिक किफायतकारी वाला (Economic) ढांचा बनता है, जिसमें जल को अधिकतम घनता प्राप्त हो जाती है तापमान का बढ़ाव संतुलन केन्द्र के चारों ओर अणुओं के कम्पनों में बढ़ोती लगाता है, जिसका अर्थ है कि आयतन में वृद्धि उत्पन्न करता है।

जलीय पदार्थ की ऊंची तापीय धारिता जल के अणुओं द्वारा ढाचे के खाली स्थानों को भरने से सम्बन्धित है। ऊष्मा अणु के हाइड्रोजनीय बन्धनों को तोड़ने में व्यय होती है।

ढाचे के खाली स्थान में प्रवेश करते हुए वह दूसरे अणुओं से अपने बन्धन तोड़ लेता है। यही बात यह भी स्पष्ट करती है कि क्यों जल के वाष्पी भवन की ऊष्मा इतनी अधिक होती है : यहां भी ऊर्जा हाइड्रोजनीय बन्धनों को तोड़ने में व्यय होती है।

इस प्रकार, जल के गुणों की अनैयामिकतायें एक ओर खाली स्थान रखने वाले उसके ढांचे से सम्बन्धित हैं और दूसरी ओर हाइड्रोजनीय बन्धनों की दृढ़ता से।

जल, जो खराब नहीं होता है

क्या जल को महीनों, गर्मी में भी, बगैर खराब हुए खुली हवा में रक्खा जा सकता है ?

यह ऐतिहासिक सत्य है कि ढाई हजार साल पहले ईरान के जार कीर ने लड़ाई के अभियानों के समय विशेष चांदी के बर्तनों में रखे हुए "पवित्र पानी"

का उपयोग किया था। यह जल बीमारी से रक्षा करता है और सालों खराब नहीं होता है। और बाद के लम्बे समय तक यह "पवित्र" जल अनेक धार्मिक संस्कृतियों के सेवकों के काल्पनिक चिन्तन का विषय बना रहा।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में वैज्ञानिकों की दिलचस्पी स्वास्थ्य-प्रद जल की ओर गई। जर्मन जीव-शास्त्र-विशारद नेगेली ने एक बर्तन में, जिसमें बारह लिटर जल था, बारह चांदी के सिक्के रक्खे। कुछ समय बाद उसे ज्ञात हुआ कि उस जल में एककोशिक सिवारों (Unicellular Water Plants) तथा बैक्टीरिया मार देने की क्षमता आ गई है। इसके साथ ही यह भी पता चला कि 100 बिलियन पानी के भागों के लिये एक भाग चांदी इस कार्य के लिये पर्याप्त होती है।

मालूम हुआ कि इसी प्रकार का गुण तांबे में भी पाया जाता है। इसको ओलिगोडायनेमिक प्रभाव कहा जाता है (ग्रीक भाषा के शब्द ओलिगोस के अर्थ हैं—थिह्न तथा डायनामिस के अर्थ हैं—कार्यवाही।)

"चांदीकृत पानी" ने समय के साथ व्यापक व्यावहारिक उपयोग चिकित्सा के क्षेत्र में तथा खाद्य पदार्थ के परिरक्षण (Conservation) में प्राप्त कर लिया है।

यदि पेचिश, टायफायड, स्टैफिलो कोकस (गुच्छ गोलाणु) तथा स्ट्रेप्टो-कोकस (मनका गोलाणु) के बैक्टीरिया से दूषित जल में प्रति लिटर आधा ग्राम चांदी डाल दी जाये तो वह आधे घण्टे में उस जल के बैक्टीरियाओं को मार देगी। चांदी के विद्युद्विश्लेषीय (Electolytic) घोलों का उपयोग, सूजन, आमाशय और ग्रहणी (Duodenal) के अलसरों की चिकित्सा के लिये किया जाता है।

रसायन की दृष्टि में जल

अठारहवीं शताब्दी के रसायन शास्त्री जल को तत्व समझते थे। सन् 1766 ई० में कैवेन्डिश द्वारा हाइड्रोजन की खोज तथा उसके जलाने पर किये गये प्रयोगों ने लैवाजये ने जल को तत्व (element) मानने में सन्देह करने का कारण उपस्थित किया। 1783 ई० में कैवेन्डिश ने खोज की कि "जलने वाली वायु" (हाइड्रोजन) जो धातुओं पर अम्लों के प्रभाव से प्राप्त होती है और साधारण वायु का पचमांश (यानी आक्सीजन) जलने पर जल बनाते हैं। समझा जायेगा कि पूरी बात स्पष्ट है, किन्तु फ्लाजिस्टन का सिद्धान्त कैवेन्डिश को भ्रमित कर रहा था। उस समय रसायन में फ्लाजिस्टन का सिद्धान्त अपना प्रभाव जमाये था। सब वैज्ञानिक इस बात में एकमत थे कि कुल जलनशील पदार्थों में भारहीन, न दिखाई, न सुनाई पड़ने वाला तत्व फ्लाजिस्टन विद्यमान

होता है। जब पदार्थ जलता है तब फ्लाजिस्टन पृथक् हो जाता है और वह न जलने वाली उपज में बदल जाता है : जलने वाला ईंधन (fuel)=फ्लाजिस्टन +सिडर। धात्वीय ग्राक्साइड का जलने वाले कोयले से अवकरण (Reduction) फ्लाजिस्टनवादी इस प्रकार स्पष्ट करते थे : ग्राक्साइड+फ्लाजिस्टन=धातु। इसके ग्रर्थ हैं कि कोयले से फ्लाजिस्टन फिर धातु में चला जाता है, इसीलिये धातु जलता है किन्तु कार्बन-डाइ-ग्राक्साइड गैस नहीं जलती है। हाइड्रोजन प्राप्त करने पर कैवेन्डिश ने यह निश्चय किया कि उसके हाथों में पकड़ में न ग्राने वाली फ्लाजिस्टन ग्रा गई है। ग्रौर इसीलिये उसने कहा कि जल ग्रौर कुछ नहीं है केवल "जीवन दायिनी वायु" (ग्राक्सीजन) फ्लाजिस्टन से संयोजित होने के बाद जल बन जाती है।

इसी समय फ्रांस में ग्र० लैवाजये फ्लाजिस्टन सिद्धान्त के प्रतिवाद में उसे गलत सिद्ध करने के लिये रासायनिक प्रयोग कर रहा था। उसको यह स्पष्ट हो गया था कि फ्लाजिस्टन कोई पदार्थ नहीं है। पर क्या स्वयं जल यौगिक है ? इस प्रश्न का उत्तर उस समय तक लैवाजये ठीक-ठीक न दे सका था। जब उसके पास कैवेन्डिश के प्रयोग की सूचना पहुंची, तो लैवाजये ने बड़े उत्साह के साथ पूरी प्रमाणिकता से उसे फिर दोहराया। हाइड्रोजन के ज्वलन से जल प्राप्त करते हुए उसने हर प्रकार की वैज्ञानिक जांच द्वारा इसे पुष्ट किया। यह विश्वास होने के बाद कि उसके सामने वस्तुतः शुद्ध डिस्टिल्ड जल था, लैवाजये ने जल को, जो सैकड़ों वर्षों से सामान्य तत्व माना जाता था, यौगिकों की श्रेणी में रखखा। जल "जलने वाली वायु" तथा "प्राण सम्पोषिणी वायु" हाइड्रोजन तथा ग्राक्सीजन के संयोजन से बना है—यह घोषणा सबसे पहले लैवाजये ने की। 1785 ई० में उसने जल की बनावट निश्चित की। उसके ग्रांकड़ो के ग्रनुसार जल में 85 प्रतिशत ग्राक्सीजन ग्रौर 15 प्रतिशत हाइड्रोजन थी।

वर्तमान ग्रांकड़ों के ग्रनुसार जल में 88.81 प्रतिशत ग्राक्सीजन तथा 11.19 प्रतिशत हाइड्रोजन है।

हाइड्रोजन के प्रथम पग

सारे संसार के वैज्ञानिक कैवेन्डिश द्वारा खोजी गई गैस का समाचार पाकर स्तम्भित हो गये, यह गैस साधारण वायु की ग्रपेक्षा कई गुणा हल्की थी। सन् 1781 ई० में इटली के प्रोफेसर ते कैवालो ने साबुन के बुलबुलों में हाइड्रोजन भरी। वे तेजी से ऊपर उठे ग्रौर छत से टकरा कर फूट गये।

सन् 1783 ई० में पेरिस में प्रोफेसर शार्ले के निरीक्षण में पहला गुब्बारा सबसे हल्की गैस हाइड्रोजन से भर कर उड़ाया गया। इसके लिए 18 घन मीटर

गैस की आवश्यकता पड़ी थी, जो उस समय के विचार से हाइड्रोजन की एक विशाल मात्रा थी। शार्ले ने एक वृत्त में बारह बड़े पीपे रखे और उसमें लकड़ी का बुरादा (Saw dust) भरा और फिर उसमें तनुकृत गंधकीय अम्ल (Diluted Sulphuric acid) डाला। पीपों में सीसा (lead) के नल लगे थे जिनसे होकर हाइड्रोजन गैस सम्मिलित रिसीवर में पहुँचती थी। रिसीवर से गैस हवाई गुब्बारे में जाती थी।

शीघ्र ही गुब्बारे केवल हाइड्रोजन से भरे जाने लगे। उस समय सल्फूरिक एसिड बड़ी महंगी थी और हाइड्रोजन प्राप्त करने के लिए लैवाजये की लौह-वाष्पीय विधि का उपयोग किया था। उसने लाल तप्त लोहे की खोखली छड़ के अन्दर से जलीय वाष्प निकालते हुए हाइड्रोजन प्राप्त की थी। पानी विघटित होते हुए हाइड्रोजन गैस उन्मुक्त कर देता था और आक्सीजन गैस लोहे से संयोजित होते हुए सिंदर देती थी।

1794 ई० में आस्ट्रिया के आक्रमणकारियों के विरुद्ध लड़ने वाली उत्तर फ्रांस की सेना में यौद्धिक बैलूनों की एक कोर स्थापित की गई थी। पवेलस के युद्ध के समय फ्रांसीसियों ने सैनिक इंजिनियरों के सहित बैलून उड़ाये, जो शत्रुओं की चालों की पूर्व सूचना अपनी सेना को देते थे।

बीसवीं शताब्दी में बैलून में हाइड्रोजन के स्थान पर हिलियम गैस का प्रयोग होने लगा। इसके बाद स्वयं बैलूनों के स्थान पर वायुयानों का प्रयोग होने लगा। किन्तु बैलूनों ने अपनी भूमिका 1941 ई० के कठिन दिनों में भी अदा की। वे रात में मास्को तथा अन्य बड़े नगरों के ऊपर उड़ते थे और शत्रु के हवाबाजों को अपने बम बड़ी ऊंचाई से बगैर लक्ष्य देखे डालने के लिए बाध्य करते थे, नहीं तो वे उड़ने वाले बैलूनों से बंधे हुए मोटे तारों से टकरा जाते।

हाइड्रोजन उद्योग के क्षेत्र में

बहुत समय तक हाइड्रोजन को केवल बैलूनों में भरने के लिए ही उत्पादित किया जाता था। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक उसका उपयोग रासायनिक उद्योग में नहीं किया जाता था। यह कहा जा सकता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में इस गैस का औद्योगिक उत्पादन कुछ नहीं था। अमोनिया संश्लेषण के लिए विशाल मात्रा में हाइड्रोजन की आवश्यकता पड़ी। मिलियनों घन मीटर हाइड्रोजन की मांग हुई। आप जानते हैं कि दो घन मीटर अमोनिया के प्राप्त करने के लिये एक घन मीटर नाइट्रोजन तथा तीन घन मीटर हाइड्रोजन आवश्यक होगी :



$$N_2 + 3H_2 \rightleftharpoons 2NH_3$$

1924 ई० में अमोनिया का एक शक्तिशाली प्रतियोगी हाइड्रोजन की मांग करने में निकल आया। यह था मिथिलेटेड स्पिरिट-मैथेनोल(Methenol)। यह

रासायनिक संयोग का बहुमूल्य कच्चा माल है। उत्पादन में कार्बन-मोनोक्साइड और हाइड्रोजन से उत्प्रेरक की सहायता से मिथिलेटेड स्पिरिट प्राप्त करने की विधि का प्रचलन हुआ :



$$CO + 2H_2 = CH_3OH$$

इस समय हाइड्रोजन के मुख्य स्रोत पानी की गैस और कोक गैस हैं, जिनमें 50-60 प्रतिशत हाइड्रोजन होती है।

हाइड्रोजन की बड़ी मात्रा कोयले से अब मोटर का ईंधन प्राप्त करने में व्यय होती है। कोयले को हाइड्रोजन से संतृप्त करते हैं, तकनीक में इस विधि को 'हाइड्रोजनेशन' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। यह क्रिया विशाल दबाव एवं उच्च तापमान पर लोहे या निकल उत्प्रेरक की उपस्थिति में चलती है।

चर्बियों के हाइड्रोजनेशन का भी बड़ा महत्व है। चर्बियाँ पशुओं और वनस्पतियों से प्राप्त होती हैं। गाय के दूध से मक्खन निकाला जाता है—यह पशु से प्राप्त चर्बी है। सूरजमुखी का तेल, जो सूरजमुखी के बीजों से निकाला जाता है, वनस्पति से प्राप्त चर्बी है। संसार में वनस्पतीय चर्बियाँ पशुओं से प्राप्त चर्बियों की अपेक्षा पाँच गुना अधिक उत्पादित की जाती हैं। पशुओं से प्राप्त चर्बियाँ अधिक पुष्टिकर एवं स्वादिष्ट होती हैं। जैवीय (पशु की) चर्बियों में हाइड्रोजन की मात्रा वनस्पतीय तेलों की अपेक्षा अधिक होती है। "क्या वनस्पतीय तेलों में हाइड्रोजन की मात्रा बढ़ाकर उनका कैलोरी-मान (Caloricity) बढ़ाना सम्भव है ?" इस समस्या को हल करने का बीड़ा रसायन-शास्त्रियों ने उठाया। प्रगट हुआ कि यह सम्भव है। इसके लिए आवश्यक था कि वानस्पतिक तैलों (सूरजमुखी, बिनौला, सोयाबीन, तिलहन आदि) को 300°C तापमान तक गर्म करके उनसे होकर हाइड्रोजन पारित किया जावे। इसके साथ ही एक टन तेल के लिए 15 किलोग्राम निकिल का चूर्ण उत्प्रेरक के रूप में आवश्यक होता है। प्रतिक्रिया के अन्त में निकिल तेल से फिल्टर प्रेस के द्वारा छान करके पृथक कर लिया जाता है। ठोस चर्बी प्राप्त होती है जिसमें कुछ जैवीय चर्बी मिलाकर मार्गरीन तैयार की जाती है। मार्गरीन कैलोरी मान में मक्खन से बहुत हल्की घटिया होती है। वानस्पतिक तैलों के हाइड्रोजनेशन के द्वारा ठोस चर्बियाँ प्राप्त होती हैं, जो साबुन बनाने के लिये बहुत उपयुक्त होती हैं।

यौगिक या घोल

हाइड्रोजन के अन्य तत्वों के साथ यौगिक हाइड्राइड कहलाते हैं और क्षारों तथा क्षारीय मिट्टी की धातुओं से हाइड्रोजन के यौगिक लवणवत् हाइड्राइड होते हैं; वे बनावट में हैलायड लवणों के समान होते हैं। ये हाइड्राइड अत्यन्त सक्रिय होते हैं : वे जल से तेजी से संयोजन करते हुए हाइड्रोजन उन्मुक्त करते हैं :



$$LiH + H_2O = LiOH + H_2$$

उड़नशील हाइड्राइड, विशेषकर बोरान हाइड्राइडें (बोरन) और सिलिकन हाइड्राइडें (सिलान), अपनी संरचना एवं गुणों की दृष्टि से बड़े दिलचस्प होते हैं। रासायनिक गुणों की दृष्टि से बोरनें कार्बोहाइड्राइडों के समान होते हैं। बोरनें राकेट का मुख्याई घन होते हैं : एक किलोग्राम पेन्टाबोरान जलने पर एक किलोग्राम बेन्जीन (15100 K. Cal /अणु) की अपेक्षा अधिक ऊष्मा देता है।

हाइड्राइडों का तीसरा व्यापक समूह भारी धातुओं के हाइड्राइडें हैं, जो पहले दो प्रकार के हाइड्राइडों से बड़ी विभिन्नता प्रगट करते हैं। उदाहरण के लिये, इस समूह में एक आयतन (Volume) पलैडियम, कमरे के तापमान पर हाइड्रोजन के 850 आयतन (Volume) अवशोषण करने की क्षमता रखता है। इस क्रिया से धातु मे कोई फुलाव कठिनता से दिखाई पड़ती है। मूलतः यहां यह नहीं कहा जा सकता कि कोई निश्चित यौगिक बना। लोहा बहुत ही कम अंश तक हाइड्रोजन अपने में घोलता है किन्तु ऊंचे तापमानों पर हाइड्रोजन गैस की बहुत बड़ी मात्रा सोख लेता है। उत्पादन में इन्जीनियरों द्वारा अमोनिया का मश्लेषण प्रारम्भ करने पर बड़ी कठिनाई "लोहे की हाइड्रोजनीय बीमारी", का सामना करना पड़ा। ऊंचे तापमान पर हाइड्रोजन इस्पात में घुस जाती है और उसकी दृढ़ता में कमी पैदा कर देती है।

कासमास की ध्वनि

पृथ्वी के ऊपरी पपड़े मे वजन से एक प्रतिशत हाइड्रोजन है। लगभग यह कुल हाइड्रोजन यौगिक रूप मे—जल के रूप में तथा कार्बोनिक यौगिकों पानी मिट्टी का तेल, कोयला, वनस्पति आदि के रूप मे है। वायुमंडल में केवल पांच सौ हजारवें अंश प्रतिशत हाइड्रोजन है।

किसी समय हमारी पृथ्वी का वायुमंडल अवकारी (Reducing) था और उसमें इस समय से कई गुना अधिक हाइड्रोजन थी। वनस्पतियों के फोटो संश्लेषण के फलस्वरूप पैदा होने वाली आक्सीजन ने हाइड्रोजन का एक बहुत बड़ा अंश अपने से संयोजित कर लिया। दूसरी ओर हाइड्रोजन निरन्तर पृथ्वी के वायुमंडल को छोड़ रही है। यह गैस बहुत ही अधिक हल्की होती है। इसके अणु सर्वाधिक गतिशील होते हैं। हाइड्रोजन अन्य गैसों की अपेक्षा बहुत अधिक तेजी से आकाश मे वितरित हो जाती है।

हाइड्रोजन के अणुओं की हरकत की औसत रफ्तार कमरे के तापमान पर दो किलोमीटर प्रति सेकण्ड तक होती है। किन्तु गैस में सदैव ऐसे अणु भी रहते हैं जिनकी चलने की गति इससे कहीं अधिक होती है। ऐसे भी अणु होते हैं जो

11·3 किलोमीटर प्रति सेकण्ड की गति से चलते हैं, जो पृथ्वी के आकर्षण को पार कर लेने भर के लिये पर्याप्त होती है। इसी कारण से वायुमंडल की सबसे ऊंची प्रसारित परतों से निरन्तर हाइड्रोजन के अणु वायुमण्डल के बाहर अन्तरिक्ष में निकला करते हैं। वे कासमास में उड़ते हैं। कासमास में हाइड्रोजन तत्व की प्रधानता है। आधुनिकतम गणना के अनुसार निरीक्षण यन्त्रों की पहुंच के अन्दर के ब्रह्माण्डीय भाग में 81 प्रतिशत हाइड्रोजन है, 18·7 प्रतिशत हीलियम है, मेंडेलीफ की आवर्त सारणी के शेष 100 तत्व कुल 1 प्रतिशत से कम हैं।

हाइड्रोजन के रेडियो-विकिरण ब्रह्माण्डीय रेडियो विकिरण हैं। गैस के तटस्थ परमाणु अन्तर्ग्रहीय अन्तरिक्ष में परस्पर टकराते हुए 21 सेन्टीमीटर की तरंग दीर्घता की रेडियो तरंगें विकीर्णित करते हैं। यह रेडियो विकिरण सब स्थानों पर समस्त ब्रह्माण्ड में है। यह कासमास की धूल द्वारा अवशोषित नहीं होता है और गैलेक्सी के अधिकतम दूर कोनों तक पहुंचता है। इस रेडियो विकिरण के द्वारा गैलेक्सी में हाइड्रोजन गैस के वितरण का चरित्र जाना जा सकता है, तारों के दरम्यान स्थित गैस की चाल का अध्ययन किया जा सकता है।

21 सेन्टीमीटर रेडियो की तरंग दीर्घता (Wave length) ब्रह्माण्डीय रेडियो विकिरण का मुख्य एवं आधारभूत चरित्र है। वह अध्ययन के लिये समस्त ब्रह्माण्ड के बुद्धि जीवियों के लिये खुली है। यह जान लेना चाहिये कि हमारा ग्रह इस असीम ब्रह्माण्ड में कोई असाधारण पिण्ड नहीं है। यदि हम ब्रह्माण्ड में बुद्धि वाले जीवों की उपस्थिति का अनुमान लगाते हैं तो इसी प्रकार ब्रह्माण्ड के अन्य ग्रहों में बसने वाले बुद्धि रखने वाले जीव हमारी उपस्थिति का भी अनुमान लगा रहे होंगे। हम लोगों को ज्ञात सर्वाधिक तेज सम्बन्ध स्थापित करने का साधन एलेक्ट्रोमैगनेटिक रेडियो तरंगें हैं। सर्वाधिक उचित तरंग दीर्घता इस काम के लिये हमें प्रकृति से मिली है—यह 21 सेन्टीमीटर है।

इस समय वैज्ञानिकों ने कास्मिक रेडियो सम्बन्धों के लिये 21 सेन्टीमीटर तरंग दीर्घता पर उपकरण तैयार कर लिया है। हमारी ग्रहीय प्रणाली के निकटतम सूर्य से मिलते हुए सितारों ताउ-कीता तथा एप्सीलोन *एरीडाना* का अध्ययन प्रारम्भ हो चुका है। हमारे ग्रह से उन तक 11 प्रकाश-वर्षों की दूरी है.....। और कौन जानता है, हो सकता है, 21 सेन्टीमीटर तरंग दीर्घता, पर इस पृथ्वी में हजारों प्रकाशवर्ष दूर ग्रहों पर बसने वाले प्राणियों के द्वारा भेजे हुए रेडियो संकेत आ रहे हों!

हाइड्रोजन-दो, हाइड्रोजन-तीन

1932 ई. में प्राकृतिक हाइड्रोजन से भारी आइसोटोप-ड्यूटीरिया प्राप्त किया गया। इसका बीज केन्द्र प्रोटीन और न्यूट्रोन से बना होता है। प्रगट हुआ

कि प्रकृति की हाइड्रोजन में 5,500 परमाणु प्रोटियो (हल्की हाइड्रोजन ^1H को यह नाम दिया गया) में एक परमाणु ड्यूटीरियम (ड्यूटीरिया) का होता है। ड्यूटीरियम प्रोटोन से दो गुना भारी होता है और बड़ी कठिनता से उससे पृथक् किया जा सकता है। उदाहरण के लिये प्रोटिया 259°C पर द्रवित होती है जब कि ड्यूटेरिया 254·6°C पर द्रवित होती है। स्थिरांकों का यह अन्तर मूलत: ड्यूटीरिया को प्रोटियो से विलग करने में सहायक होता है। द्रव हाइड्रोजन के डिस्टिलेशन से कुछ तलछट शेष मिलता है जिसमें 50 प्रतिशत ड्यूटीरिया होती है। पानी के विद्युतविश्लेषण द्वारा भी यह भारी आइसोटोप प्राप्त किया जा सकता है। अधिक हल्की प्रोटिया तेजी से कैथोड में विलग हो जाती है और ड्यूटीरिया तलछट में सान्द्रित होती जाती है।

1939 ई० में कृत्रिम उपायों से एक अन्य हाइड्रोजन का आइसोटोप-*हाइड्रोजन-तीन प्राप्त हुआ, जो प्रोटिया से तीन गुना भारी था।*

शीघ्र ही तीसरा आइसोटोप-हाइड्रोजन-तीन प्राकृतिक जल तथा वायुमंडल में स्वल्प मात्राओं में खोजा गया। यह पृथ्वी पर सबसे कम प्राप्त होने वाली गैस है, पानी में यह प्रोटिया की अपेक्षा $1\frac{1}{10^{18}}$ गुना कम रहती है।

पृथ्वी के वायुमण्डल और उसके ऊपरी धरातल में कुल 1·8 किलोग्राम हाईड्रोजन-तीन है, जो रेडाम की मात्रा से भी कम है।

1962 ई० में एक इटालियन वैज्ञानिक हाइड्रोजन का एक अत्यन्त अस्थिर आइसोटोप हाइड्रोजन-चार प्राप्त करने में सफल हुआ। बिल्कुल अभी हाल में हाइड्रोजन-पांच के संश्लेषित किए जाने की सूचना प्राप्त हुई है।

अग्नि का तत्व

जल का लगभग 90 प्रतिशत आक्सीजन होता है, जिससे सारे संसार का जैवीय अस्तित्व, सभ्यता का कुल इतिहास, विज्ञान तथा उद्योगों का विकास सीधे सम्बन्धित है।

जीवन की पहली मंजिलों में अपने जीवन के विकास के लिए किये गये मानवता के संघर्ष अग्नि के लिए संघर्ष थे। अग्नि ज्वलन है, ज्वलन की मांग आक्सीजन है।

1774 ई० में अंग्रेज रसायनशास्त्री प्रिस्टली ने पारा की आक्साइड को गर्म करते हुये एक अज्ञात गैस को पृथक होते हुये निरीक्षण किया, जिसमें सुलगते हुये लकड़ी के टुकड़े तेजी से चमकदार लौ देते हुए जलने लगते थे। उसी वर्ष स्वीडिश केमिस्ट (दवाफरोश) क० शीले की रचना भी प्रकाशित हुई। उसमें इसी गैस को साल्टपीटर, पारा की आक्साइड तथा मिनियम (लाल सिन्दूर) से प्राप्त करने का वर्णन किया गया था। दोनों वैज्ञानिक फ्लाजिस्टन सिद्धान्त के

मानने वाले थे। उन्होंने इस नई गैस का नाम "डीफ्लाजिस्टनाइज्ड" अर्थात् "फ्लाजिस्टन निकाली हुई" गैस रखा। उनके विचार से उनके द्वारा खोजी हुई गैस जलते हुए पदार्थों से बड़ी उत्सुकता से फ्लाजिस्टन ले लेती थी, यही कारण था कि वे उसमें वायु की अपेक्षा अधिक तेजी के साथ जलते थे।

जब प्रिस्टली की खोज के बारे में लैवाजये को पता चला, उसने समझ लिया कि ज्वलन आक्सीजन का जलने वाले पदार्थों से संयोजन है, और किसी भी प्रकार पदार्थ से फ्लाजिस्टन का पृथक्करण नहीं है। थोड़े ही समय बाद लैवाजये ने रसायन के फ्लाजिस्टन सिद्धान्त का विरोध करने वाला अपना आक्सीजन सम्बन्धी सिद्धान्त (Theory of Oxidation) दिया। शीले और प्रिस्टली ने आक्सीजन का आविष्कार किया, वस्तुतः विज्ञान को आक्सीजन की देन लैवाजये से प्राप्त हुई।

प्रिस्टली ने यह जान लिया था कि श्वसन के लिये आक्सीजन अनिवार्य है। लैवाजये ने मनुष्य के श्वसन की क्रिया का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जीवन मन्द""""ज्वलन है।

स्पिरिट चमकदार लौ के साथ जलती है और कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस पानी और ऊष्मा देती है।

मानव शरीर भी आक्सीजन अवशोषित करता हुआ यही पदार्थ बनाता है।

श्वसन के समय शरीर द्वारा ली जाने वाली वायु की बनावट निम्न प्रकार की होती है :

21% O_2, 0·03% CO_2, 78·97% N_2 और श्वसन द्वारा बाहर निकाली हुई वायु की बनावट निम्न प्रकार की होती है,

16% O_2, 5·03% CO_2, 78·97% N_2

शरीर में प्रवेश करती हुई आक्सीजन अन्ततः शारीरिक तन्तुओं से संयोजित होती है और कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस, जल और ऊष्मा बनाती है। यह ऊष्मा स्वयं शरीर के अस्तित्व के लिए अनिवार्य होती है।

मानव-शरीर ने वायुमण्डल के दबाव तथा उसमे स्थित आक्सीजन से अपने को आदी कर लिया है। 760 मिलीमीटर के कुल वायुवीय दबाव पर वायुवीय आक्सीजन पृथ्वी के धरातल पर विशेषतः जैवीय शरीरों पर लगभग 160 मिलीमीटर पारदिक स्तम्भ की शक्ति से अपना दबाव छोड़ती है।

एल्ब्रस की चोटी पर वायु के अंगों की प्रतिशतता (Percentage) वही है जो पर्वत के आधार पर है, किन्तु दबाव सामान्य से लगभग दो गुना कम है, अर्थात आक्सीजन के हिस्से का दबाव केवल 80 मिलीलीटर होता है।

चोटी पर चढ़ने वाला पर्वतारोही तेजी से दबाव की कमी का अनुभव करता है : रुधिर ग्रावसीजन से संतृप्त नहीं हो पाता है। एवरेस्ट पर्वत की चढाई में पर्वतारोही को ग्रावसीजन देने वाले उपकरण अपने साथ ले जाने पड़ते हैं, जो शरीर को साधारण दबाव पर ग्रावसीजन देते रहते हैं। वायुयानों पर उड़ने वाले इन उपकरणों का व्यापक रूप से उपयोग करते हैं।

परन्तु, ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में बसने वाले विरल वायुमण्डल में शांतिपूर्वक रहा करते हैं। उनके शरीर उस वायुमण्डलीय माध्यम के ग्रादी बन जाते हैं। इसी प्रकार, पेरू में ऐन्डीज पर्वत के निवासी लगभग पांच हजार मीटर की ऊंचाई पर पचास किलोग्राम से ऊपर बोझ ग्रासानी से लेकर चल सकते हैं। नीचे मैदानी क्षेत्र में बसने वालों की अपेक्षा उनके हृदय अधिक शक्ति से रुधिर फेफड़ों में फेंकते हैं, वक्ष अधिक मजबूत होते हैं, उनके रुधिर में ग्रावसीजन अधिक प्रभावशाली ढग से पहुंचता है।

कभी-कभी साधारण परिस्थितियों में ही ग्रावसीजन की अधिक मात्रा शरीर को देना ग्रावश्यक हो जाता है : विशेषकर हृदय और फेफड़ों के रोगों में। ग्राप जानते हैं, ग्रावसीजन की एक खुराक हवा की पांच खुराकों के बराबर होती है और गम्भीर दशाओं में वह बीमार की शक्ति को व्यय होने से बचाती है।

ग्रावसीजन का स्रोत क्या है ?

वायुमण्डल की बनावट ग्राज भी वैसी ही है जैसी ग्राज से 175 वर्ष पूर्व थी, जब कैवेण्डिश ने इंगलैण्ड के विभिन्न स्थानों की वायु का अनुसंधान किया था। और जैसा ग्राप जानते हैं, प्रति वर्ष करोड़ों व्यक्ति एवं पशु इसी ग्रावसीजन को श्वसन की क्रिया से अवशोषित करते हैं, करोड़ों टन कोयला, मिट्टी का तेल ही ग्रावसीजन को अपने जलने के दौरान इस्तेमाल करके यौगिक बनाते हैं, किन्तु फिर भी वह काम नहीं पड़ती। क्या कारण है ?

क्या कारण है ?

यही प्रश्न प्रिस्टली को सन् 1772 ई. में परेशान कर रहा था। उसने सोचा कि प्रकृति में सब कुछ किसी अर्थ से होता है। यदि मनुष्य एवं अन्य जीवों के श्वसन तथा ज्वलन से वायु क्षीण होती है तो प्रकृति में ही कहीं न कहीं इस क्षति की पूर्ति भी होती है उसने शीशे की बन्द घन्टी (Beljar) में एक चूहा रखा और जब वह उसमें सांस लेते हुए अन्त में मर गया तब उसी घन्टी में पुदीना की डाल रख दी। और तब क्या हुआ ? कुछ देर के बाद उसमें दूसरा चूना फिर सांस ले सका। पौधे ने वायु को पुनः "शुद्ध" कर दिया था।

इस प्रकार फोटो संश्लेषण की प्राकृतिक घटना का प्राथमिक उद्घाटन हुआ।

फोटो संश्लेषण का आधार वह प्रतिक्रिया है जिसके फलस्वरूप जल और कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस प्रकाश तथा हरी पत्ती के रङ्गीन पदार्थ—क्लोरोफिल—के प्रभाव से स्टार्च एवं आक्सीजन में परिणत हो जाते हैं। स्टार्च पौधे का भोजन बन जाता है जब कि आक्सीजन अनावश्यक होने के कारण पौधे से बाहर आ जाती है। बहुत समय तक यह सोचा जाता था कि आक्सीजन कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस से प्राप्त होती है किन्तु जब तक 'रेडियो-सक्रिय-अनुरेखक' (Radio-active Tracer) आक्सीजन ^{18}O प्राप्त नहीं हुई वैज्ञानिक न इस स्थापना की पुष्टि कर सके न खण्डन ही कर सके। ^{18}O की सहायता से यह सिद्ध हो सका कि पौधों द्वारा उन्मुक्त होने वाली कुल आक्सीजन का स्रोत जल है।

कुल पृथ्वी के धरातल पर प्राप्त जलीय वनस्पति का हरित पदार्थ प्रत्येक तीन हजार वर्षों में इतनी आक्सीजन उन्मुक्त कर देता है जितनी पृथ्वी के वायु-मण्डल मे है।

तीव्र ज्वलन

श्वसन मन्द-ज्वलन है। यदि उसे तेज कर दिया जाये, साधारण वायु को शुद्ध आक्सीजन से बदल दिया जाये, तो जैवीय शरीर पर्याप्त तेजी से 'जल जायेगा', और सीधे समाप्त हो जायगा।

किन्तु तकनीक में, "तीव्र ज्वलन" बड़ा महत्व रखता है। प्रौद्योगिकीय (Technological) प्रक्रिया की गति तेज करने से उतने ही साधन से उतने ही समय में उत्पादित उपज की मात्रा बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए, धातु कर्मिक कारखाने को लीजिये जिसका वार्षिक उत्पादन एक मिलियन टन है। ऐसे कारखाने को प्रतिवर्ष तीन मिलियर्ड घन मीटर से ऊपर आक्सीजन की आवश्यकता होगी। साधारणतः आक्सीजन की यह मात्रा वायु से ले ली जाती है जिसमें साथ में 12 मिलियर्ड घन मीटर नाइट्रोजन ऊष्मा की एक विशाल मात्रा (धातु कर्मिक-प्रक्रिया 1000° सेन्टीग्रेड तापमान पर चलती है) अपने में संचित कर लेती है और बाद को कारखाने की चिमनियों से "वायुमण्डल गर्म करने के लिए" निकाल दी जाती है।

हाल के दिनों में, वायु की नाइट्रोजन को अंशतः या पूर्णतः आक्सीजन द्वारा विस्थापित करके प्रयोग किया जाने लगा है जिससे प्रौद्योगिकीय प्रक्रिया में तेजी आ जाती है, ईंधन का व्यय बहुत कम हो जाता है, उत्पादन की सामग्री (Equipment) सरलतर हो जाती है, इस्पात में घुली हुई नाइट्रोजन की मात्रा कम हो जाती है, और उसकी उत्तमता में अत्यधिक वृद्धि आ जाती है।

आक्सीजन न केवल इस्पात और अलोह (Non ferrous) धातुओं को गलाने में सहायता देती है, वरन् अत्यन्त कठिनता से गलने वाली धातुयें भी इसकी सहायता से गलाई जा सकती है।

रासायनिक दृष्टि से आक्सीजन अत्यन्त सक्रिय होता है। फ्लोरीन के बाद वह सर्वाधिक सक्रिय तत्व है। अनेकों पदार्थ शुद्ध आक्सीजन के वायुमंडल मे जलते हुए ऊष्मा की बहुत बड़ी मात्रा उन्मुक्त करते हैं। इस प्रकार हाइड्रोजन और एसीटिलीन आक्सीजन में जलते हुए 3000⁰ सेन्टीग्रेड का तापमान देते हैं। निर्माण स्थलों मे प्रायः देखा जा सकता है कि किस प्रकार काम करने वाले धातु के बने हुए नलों को बर्नर की नीलिमामय पीली लौ से काटते हैं। आक्सी-एसीटिलीन बर्नर की सहायता से धातुओं को गलाया जा सकता है, इसके लिए बर्नर में आक्सीजन की सप्लाई कम कर देते हैं। इस प्रकार बनने वाली लौ को झालने वाली (Welding) लौ कहा जाता है। धातु के दो टुकड़ों के जोड़ के स्थान पर निर्देशित किये जाने पर यह लौ उनके ऊपरी धरातलों को गला देती है। ठंडा किए जाने पर दोनों टुकड़े जुड़ कर एक पूरा टुकड़ा बन जाते हैं। धातु के टुकड़े को काटने के लिए पहले धातु को झालने वाली लौ से तपाते हैं फिर तपाये हुए स्थान पर शुद्ध आक्सीजन की धारा छोड़ते हैं। आक्सीजन में धातु जल जाती है और वाष्पीभूत हो जाती है।

आक्सीजन चट्टाने उड़ा देती है

यदि हम बहुत ही सूक्ष्म समय में कोयले को जला डालने में, उसे विस्फोटित करने में, सफल हो जाये तो हमें एक शक्तिशाली विस्फोटक पदार्थ प्राप्त हो जायेगा। क्या कोयले के जलने की गति को कई हजार गुना तीव्र कर देना सम्भव है ? सम्भव है……किन्तु इसके लिए उसी के अनुसार आक्सीजन की मात्रा होनी चाहिये, एक किलोग्राम कोयला जलाने के लिए दो हजार लीटर आक्सीजन आवश्यक होगी।

क्या आक्सीजन को सान्द्रित (Concentrated) नहीं किया जा सकता ? किया जा सकता है। किन्तु इसके लिए उसे द्रव में परिणत करना पड़ेगा। 800 लीटर गैस आक्सीजन मे एक लीटर द्रव आक्सीजन प्राप्त होगी। रन्ध्र-युक्त ज्वलनशील पदार्थ, कज्जल, लकड़ी का कोयला, कोयले का चूरा, पीसा हुआ पीट को द्रव आक्सीजन से तर कर दीजिए तब हमें आक्सी-लिक्विड कहलाने वाले विस्फोटक पदार्थ प्राप्त हो जायेंगे। ये विस्फोटक पदार्थ पलीता की सहायता से विस्फोट किये जाते हैं। पलीता आक्सी-लिक्वड में पड़े हुए प्रस्फोटक कैंपसूल (detoning capsule) को प्रज्वलित कर देता है। यदि किसी कारण से आक्सी-लिक्विड में विस्फोट नहीं होता तो उसे समाप्त करने के

लिये कुछ करना नहीं पड़ता है। कुछ समय में कुल आक्सीजन उससे अपने आप उड़ कर निकल जाती है।

आक्सी-लिक्विडों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं ले जा सकते हैं। उसे कार्यस्थल पर ही तैयार किया जाता है। इसके लिए केवल द्रव आक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है जब कि सूखा पीट, काई, सरकण्डा, तिनका प्रत्येक स्थान पर प्राप्त हो सकते हैं। आक्सी-लिक्विड की जीवनावधि पन्द्रह मिनट से लेकर एक घण्टा से कुछ ऊपर तक होती है, जो आक्सी-लिक्विड रखने वाली कारतूसों की साइज पर निर्भर करती है।

आक्सी-लिक्विडें सस्ती होती हैं। उनके द्वारा किया हुआ विस्फोट अमोनाल द्वारा किये गए विस्फोट की अपेक्षा दो गुना सस्ता होता है।

ताजगी की महक

सनोवर के वन में आपने विशेष ताजगी देने वाली महक अनुभव की होगी जैसी कि बड़ी आंधी व तूफान के बाद अनुभव की जाती है। और ठीक यही महक, केवल अधिक शक्ति के साथ, डाक्टर के कमरे में जहां क्वार्ट्ज का लैम्प तालपूर्ण स्वर से भनभनाता है, अनुभव होती है।

यह ओजोन का संचित ढेर है, जो महकता है। यह गैस, जिसका नाम ग्रीक भाषा में महक के पर्यायवाची शब्द से बना है, आक्सीजन का रूपान्तरण (modification) है। इसके अणु में आक्सीजन के तीन परमाणु होते हैं। यह आणवीय आक्सीजन से डेढ़ गुनी भारी होती है। शंकुधर वृक्षों (Coniferous trees) के शंकुओं में सदैव तारपीन तथा अन्य रालीय (resinosu) पदार्थ होते हैं, जो आक्सीकृत होने पर ओजोन देते हैं। तूफान के समय विद्युत के प्रभाव वायु की आक्सीजन को ओजोन में परिणत कर देते हैं। डाक्टर के कमरे में ओजोन क्वार्ट्ज लैम्प को पारदीय बाष्प से निकलने वाले शक्तिशाली पारजम्बु विकिरण (Ultra-Violet radiation) के प्रभाव से बनती है।

वायुमण्डल में ओजोन की मात्रा बहुत कम है। यह विशेषतः वायुमण्डल की सबसे ऊपर की परतों में होती है। रस्मोठौर से यह सोचा जाता है कि वायुमण्डल की कुल ओजोन पृथ्वी के धरातल से 25-30 किलोमीटर की ऊंचाई पर तीन मिली मीटर की पर्त बनाती है। यह ओजोन की अत्यन्त पतली पर्त—ओजोनोस्फियर—पृथ्वी की रक्षा कठोर अल्ट्रावायलेट किरणों से, जो सूर्य से दिखाई पड़ने वाले प्रकाश के साथ आती हैं, करती है।

यदि ओजोन न होती तो पृथ्वी पर जीवन थोड़े ही समय में समाप्त हो गया होता। अवश्य ही, ओजोनोस्फियर की अनुपस्थिति से वैसी ही है जैसे पृथ्वी के ऊपरी धरातल का प्रबल क्वार्ट्ज के लैम्पों के द्वारा निरन्तर किरणीयन।

ओजोनोस्फियर अपने अस्तित्व के लिये कठोर पारजम्बु (Ultra-Violet) [किर]णों का आभारी है, जो आक्सीजन के अणु को परमाणुओं में विघटित कर[ने] की क्षमता रखती है।



$$O_2 = O + O; O + O_2 \rightleftharpoons O_3$$

कम शक्तिशाली पारजम्बु किरणें ओजोन के अणु को विध्वंस कर देती हैं; [य]ही कारण है कि एक निश्चित ऊंचाई पर ओजोन के *कान्सेन्ट्रेशन (संकेन्द्रण)* [क]ा संतुलन स्थापित हो जाता है। तकनीक में ओजोनेटरों (Ozonators) में [आ]क्सीजन को शान्त विद्युत-प्रभारों से प्रभावित करके प्राप्त किया जाता है।

ओजोन सूक्ष्म कीटाणु नाशक है; उसे क्लोरीन के साथ पानी में मिलाते हैं, [इ]ससे वस्त्रों का रंग उड़ाया जाता है (bleaching), शराब को पुरानी करने में [इ]सका प्रयोग होता है, इससे तम्बाकू को सुन्दर सुगन्ध दी जाती है।

आक्सीकृत जल

हाइड्रोजन-पर-आक्साइड को एक स्वतन्त्र पदार्थ के रूप में सन् 1818 ई. में स्वीकार किया गया। फ्रांस के रासायनिक टेनार ने उसे "आक्सीकृत जल" कहा।

H_2O_2 रंग हीन एवं गन्ध-हीन विषविषा पदार्थ होता है, जो जल से डेढ़ गुना भारी होता है। वह अस्थायी पदार्थ है और बहुत सी धातुओं, विभिन्न फर्मेन्टों (ferments) तथा रेडियो-सक्रिय विकिरणों के प्रभाव से विघटित हो जाता है। उत्प्रेरक के प्रभाव से हाइड्रोजन पर-आक्साइड का विघटन का अभी अंत तक अध्ययन नहीं हो सका है। यह अस्थायी यौगिक वर्षा के पानी में, गिरने वाले बर्फ में, अनेक पौधों के रसों में, और तम्बाकू में, तथा मनुष्य के थूक में पाया जाता है। उसके विघटन को धीमा करने वाले पदार्थ का बहुत बड़ा भाग प्रकटतः, अभी तक अज्ञात है। इस सूची में कार्बन-डाइ-सल्फाइड, स्त्रीकनिया (कुचला), फास्फोरिक एसिड तथा सोडियम फास्फेट आते हैं।

हाइड्रोजन-पर-आक्साइड विघटित होते हुए सक्रिय परमाणविक आक्सीजन उन्मुक्त करती है, इसी कारण वह शक्तिशाली आक्सीकारी पदार्थ है।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय जर्मनी ऐरोड्रोमों में अल्यूमिनियम की टंकियों सहित ट्रेनें पहुंची। टंकियों के द्रव को विभिन्न नामों से कहा जाता था। इन्गोलीन, टिमोल, कम्पोनेंट 1, न्यूट्रालीन, आक्सीलीन। कुल टंकियों में एक ही चीज थी, 90 प्रतिशत हाइड्रोजन-पर-आक्साइड। वह राकेटों में, जो जर्मनी 1944 ई० के शरद ऋतु में लन्दन में फेंक रहा था, आक्सी-डाइजर का काम करती थी।

इस समय हाइड्रोजन-पर-आक्साइड रासायनिकों की सेवा प्लास्टिक पदार्थ के संश्लेषण में उत्प्रेरक के रूप में करती है, भवन निर्माण करने वाले उसकी

सहायता से छिद्रल कंक्रीट तैयार करते हैं, डाक्टर उसे प्रसिद्ध निसंक्रामक माध्यम (Disinfectant) के रूप मे देखते हैं :

आक्सीजन के कुटुम्बी

1927 ई० में यह पता चला कि प्राकृतिक आक्सीजन तीन आइसोटोपों से मिल कर बनी है, ^{16}O, ^{17}O, ^{18}O।

प्राकृतिक आक्सीजन के तीन हजार अणुओं में एक अणु ^{17}O का तथा छः अणु ^{18}O के होते हैं। ये अपने गुणों में एक दूसरे से बड़ी समानता रखते हैं। उनके आणविक भार एक दूसरे से बहुत विभिन्न नहीं होते हैं। यदि हाइड्रोजन के आइसोटोपों के मध्य पर्याप्त अधिक अन्तर होने के कारण उनको द्रव गैस के आसवन द्वारा तथा जल के विद्युद्विश्लेषण द्वारा पृथक किया जा सकता है, तो आक्सीजन के आइसोटोपों को उनके मध्य बहुत कम अन्तर होने के कारण विलग करना कठिन होता है। उनको गैसों के डिफ्यूजन के द्वारा विलग किया जाता है।

आक्सीजन के आइसोटोपों के गुणों में भिन्नता इस बात में प्रतिबिम्बित होती है कि विभिन्न रासायनिक यौगिकों के मध्य उनका वितरण तापमान के परिवर्तनों के साथ बदल जाता है। आक्सीजन का यह गुण प्राचीन जलवायु शास्त्र (Palaeclimatology)—दूर भूतकाल की जलवायु का विज्ञान—के अध्ययन में किया जाता है। खनिजों में $\frac{^{18}O}{^{16}O}$ का अनुपात खनिज के बनने के समय बाहरी माध्यम के तापमान पर निर्भर करता है। यह अनुपात मिलियनों वर्ष तक बगैर बदले हुए सुरक्षित बना रहता है। और यदि खनिज के बनने का समय ज्ञात हो जाये तो उस समय का तापमान आसानी से पता लगाया जा सकता है।

जल-ऊर्जा का भंडार

भारी जल — D_2O (ड्यूटीरियम-आक्साइड) की खोज साधारण रूप से 1932 ई० में हुई।

भारी जल प्रकृति में पर्याप्त अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। वह सामान्य जल से अधिक भारी होता है और 101·4° सेन्टीग्रेड तापमान पर उबलता है। इस गुण को उसे पृथक करने के लिये इस्तेमाल किया जाता है। प्रभाजी आसवन (fractional distillation) के द्वारा साधारण जल में भारी जल की मात्रा बढ़ा देते हैं। विद्युद्धार की क्रिया से भारी जल सामान्य जल की अपेक्षा चार-छः गुना धीमे विघटित होता है। फलतः अविघटित जल में भारी जल का अनुपात बढ़ता जाता है। एक टन भारी जल प्राप्त करने के लिये चालीस

हजार टन प्राकृतिक जल विघटित करना होगा और इतनी विद्युदुर्जा व्यय करनी होगी जितनी तीन हजार टन अल्यूमिनियम के उत्पादन के लिये आवश्यक होगी।

भारी जल (heavy water) का परमाणविक ऊर्जिकी (atomic energetics) में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है यह न्यूट्रोनों को बहुत अधिक ग्रेफाइट के मुकाबिले में पाँच गुना अधिक अच्छा धीमा करता है।

1940 ई. में फ्रांस में जूलियस क्यूरी की संरक्षता में प्रथम आणविक भट्टी का निर्माण किया गया। 180 लीटर भारी-जल इकट्ठा किया गया था, जो उस समय लगभग सारे संसार का भारी जल का संचित कोष था। किन्तु शीघ्र ही युद्ध आरम्भ हो गया। जर्मन सेना पेरिस में घुस आई। जूलियस क्यूरी को गेस्टापो में बुलाया गया। "भारी जल कहां है?"—वैज्ञानिक से पूछा गया। और उसी समय वह स्टीमर जिसमें भारी-जल रक्खा था फ्रांस के तट से इंगलैंड की ओर रवाना हो चुका था।

जर्मन उसे पाने में सफल नहीं हो सके, जो यूरेनियम रीएक्टर के चालू करने के लिये इतना आवश्यक था।

इसके अतिरिक्त भारी-जल ड्यूटीरियम के औद्योगिक उत्पादन का स्रोत है।

भारी-जल न केवल परमाणविक ऊर्जिकी की सेवा करता है, वरन् उसने कुछ महत्वपूर्ण बायोलोजिकल (जीव-विज्ञान सम्बन्धी) समस्याओं को हल करने में भी सहायता दी। उसकी सहायता से यह प्रतिपादित हुआ कि मानव शरीर में जल के अणुओं का पड़ाव (stay) चौदह दिन होता है, जब कि सुनहरी मछली में केवल चार घंटे का होता है।

चूहों को ड्यूटीरियम रखने वाली चर्बी दी गई। प्रगट हुआ कि पशुओं में उसकी संचित मात्रा निरन्तर बदलती रहती है, खाई जाने वाली चर्बी संचित होती जाती है और पहले से संचित चर्बी व्यय होती है।

प्रकृति में कुछ पौधे भारी-जल के प्रति लापरवाही का आचरण नहीं रखते हैं। वे उसे अपने शरीर में नहीं प्रवेश करने देते। इस प्रकार स्वीडेन के वैज्ञानिक ने यह खोज की कि जिस जल में जौ भिगोया हुआ होता है, उसमें D_2O की मात्रा अधिक होती है। जौ भारी पानी के अणुओं को नहीं सोख पाते हैं। यदि जौ को कई बार एक ही पानी से भिगोया जाय तो पानी में ड्यूटीरियम की मात्रा सात से दस गुना तक बढ़ जायेगी।

सहायता से छिद्रल कंक्रीट यँयार करते हैं, डाक्टर उसे प्रसिद्ध निर्संक्रामक माध्यम (Disinfectant) के रूप मे देखते हैं :

आक्सीजन के कुटुम्बी

1927 ई० में यह पता चला कि प्राकृतिक आक्सीजन तीन आइसोटोपों से मिल कर बनी है. ^{16}O, ^{17}O, ^{18}O ।

प्राकृतिक आक्सीजन के तीन हजार अणुओं में एक अणु ^{17}O का तथा छः अणु ^{18}O के होते हैं । ये अपने गुणों में एक दूसरे से बड़ी समानता रखते हैं । उनके आणविक भार एक दूसरे से बहुत विभिन्न नही होते हैं । यदि हाइड्रोजन के आइसोटोपों के मध्य पर्याप्त अधिक अन्तर होने के कारण उनको द्रव गैस के आसवन द्वारा तथा जल के विद्युद्विश्लेषण द्वारा पृथक किया जा सकता है, तो आक्सीजन के आइसोटोपों को उनके मध्य बहुत कम अन्तर होने के कारण विलग करना कठिन होता है । उनको गैसों के डिफ्यूजन के द्वारा विलग किया जाता है ।

आक्सीजन के आइसोटोपों के गुणों से भिन्नता इस बात में प्रतिबिम्बित होती है कि विभिन्न रासायनिक यौगिकों के मध्य उनका वितरण तापमान के परिवर्तनों के साथ बदल जाता है । आक्सीजन का यह गुण प्राचीन जलवायु शास्त्र (Palaeclimatology)—दूर भूतकाल की जलवायु का विज्ञान—के अध्ययन में किया जाता है । खनिजों में $\frac{^{18}O}{^{16}O}$ का अनुपात खनिज के बनने के समय बाहरी माध्यम के तापमान पर निर्भर करता है । यह अनुपात मिलियनों वर्ष तक बगैर बदले हुए सुरक्षित बना रहता है । और यदि खनिज के बनने का समय ज्ञात हो जाये तो उस समय का तापमान आसानी से पता लगाया जा सकता है ।

जल-ऊर्जा का भंडार

भारी जल— D_2O (ड्युटीरियम-आक्साइड) की खोज साधारण रूप से 1932 ई० में हुई ।

भारी जल प्रकृति मे पर्याप्त अधिक मात्रा में प्राप्त होता है । यह सामान्य जल से अधिक भारी होता है और 101·4° सेन्टीग्रेड तापमान पर उबलता है । इस गुण को उसे पृथक करने के लिये इस्तेमाल किया जाता है । प्रभाजी प्रासवन (fractional distillation) के द्वारा साधारण जल में भारी जल की मात्रा बढ़ा देते हैं । विद्युद्घार की क्रिया से भारी जल सामान्य जल की अपेक्षा चार-छः गुना धीमे विघटित होता है । फलतः अविघटित जल में भारी जल का अनुपात बढ़ता जाता है । एक टन भारी जल प्राप्त करने के लिये चालीस

हजार टन प्राकृतिक जल विघटित करना होगा और इतनी विद्युदूर्जा व्यय करनी होगी जितनी तीन हजार टन अल्यूमिनियम के उत्पादन के लिये आवश्यक होगी।

भारी जल (heavy water) का परमाणविक ऊर्जिकी (atomic energetics) में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है वह न्यूट्रोनों को बहुत अधिक ग्रेफाइट के मुकाबिले में पाँच गुना अधिक अच्छा धीमा करता है।

1940 ई. में फ्रांस में जूलियस क्यूरी की संरक्षता में प्रथम प्राणविक भट्टी का निर्माण किया गया। 180 लीटर भारी-जल इकट्ठा किया गया था, जो उस समय लगभग सारे संसार का भारी जल का संचित कोष था। किन्तु शीघ्र ही युद्ध प्रारम्भ हो गया। जर्मन-सेना पेरिस में घुस आई। जूलियस क्यूरी को गैस्टापो में बुलाया गया। "भारी जल कहाँ है?"–वैज्ञानिक से पूछा गया। और उसी समय वह स्टीमर जिसमें भारी-जल रक्खा था फ्रांस के तट से इंगलैंड की ओर रवाना हो चुका था।

जर्मन उसे पाने में सफल नहीं हो सके, जो यूरेनियम रीएक्टर के चालू करने के लिये इतना आवश्यक था।

इसके अतिरिक्त भारी-जल ड्यूटीरियम के औद्योगिक उत्पादन का स्रोत है।

भारी-जल न केवल परमाणविक ऊर्जिकी की सेवा करता है, वरन् उसने कुछ महत्वपूर्ण बायोलोजिकल (जीव-विज्ञान सम्बन्धी) समस्याओं को हल करने में भी सहायता दी। उसकी सहायता से यह प्रतिपादित हुआ कि मानव शरीर में जल के अणुओं का पड़ाव (stay) चौदह दिन होता है, जब कि सुनहरी मछली में केवल चार घंटे का होता है।

चूहों को ड्यूटीरियम रखने वाली चर्बी दी गई। प्रगट हुआ कि पशुओं में इसकी संचित मात्रा निरन्तर बदलती रहती है, खाई जाने वाली चर्बी संचित होती जाती है और पहले से संचित चर्बी व्यय होती है।

प्रकृति में कुछ पौधे भारी-जल के प्रति लापरवाही का आचरण नहीं रखते हैं। वे उसे अपने शरीर में नहीं प्रवेश करने देते। इस प्रकार स्वीडेन के वैज्ञानिक ने यह खोज की कि जिस जल में जौ भिगोया हुआ होता है, उसमें D_2O की मात्रा अधिक होती है। जौ भारी पानी के अणुओं को नहीं सोख पाते हैं। यदि जौ को कई बार एक ही पानी से भिगोया जाय तो पानी में ड्यूटीरियम की मात्रा सात से दस गुना तक बढ़ जायेगी।

भारी-जल के सान्द्रक पौधों का क्या कोई व्यावहारिक महत्व है ? है, और अवश्य है। आप जानते हैं कि पृथ्वी पर जल बहुत बड़ी मात्रा में है। उसमें चालीस बिलियर्ड टन ड्यूटीरियम हैं। यदि इच्छानुसार चलने वाली थर्मो-न्यूक्लियर प्रतिक्रिया (Guided thermo nuclear reactor) का उपयोग करते हुए कुल ऊर्जा खींची जाये तो उसे कुल ज्ञात प्राकृतिक मिट्टी के तेल, कोयला, पीट के भण्डारों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा से कहीं अधिक बड़ी मात्रा में प्राप्त किया जा सकता है।





पूर्व के सहस्रों वर्ष पुरानी सभ्यता वाले देशों ने संसार की संस्कृति को गन्धक के बारे में प्रथम लिखित सूचनायें दी हैं :

"......प्राचीन चीन। चीन की हस्तलिखित पुस्तकों के पृष्ठों ने सबसे पहले बारूद बनाने की घोषणा संसार में की—कि बारूद की रचना में गन्धक होता था।

"......प्राचीन मिश्र। आज तक बचे हुए पिरामिड हमें रंगों तथा सौन्दर्य देने वाली वस्तुओं में गन्धक के ईसा से दो हजार वर्ष पूर्व प्रयोग किये जाने की सूचना देते हैं।

"......प्राचीन भारत। क्या यहां गन्धक की प्रथम सूचनाओं के स्रोतों को खोजना आवश्यक नही है? आप जानते हैं कि भारत की प्राचीन भाषा से ही इस खनिज को नाम प्राप्त होना अकारण नही हो सकता है। शब्द 'सेरा' (रूसी भाषा में गन्धक का नाम) अथवा "सीरा" के अर्थ संस्कृत भाषा में होते हैं "पीला"।

"......प्राचीन रोम। सर्वाधिक धनी गंधकीय उद्गमों की मातृभूमि यही रोम था। वृद्ध प्लीनियम ने उनका विस्तृत वर्णन किया है।

"......प्राचीन रूस। उत्तर तथा उत्तर पूर्व असंख्य रूसी नदियां जिनके तट पाइराइटीज-गन्धक की प्रकृति में मिलने वाली खनिज-से भरे हैं। यहां पुराने आदिम ढंगो से गन्धक निकाला जाता है"......।

ढकोसलों और रहस्यों मे ढकी हुई मध्य शताब्दियों का समय कीमियागरों की प्रभुता का युग था। प्रकृति के साधारण से साधारण पदार्थों के बारे में भी विचार बहुत उलझे हुए थे और यह माना जाता था कि विभिन्न पदार्थ एक दूसरे मे बदले जा सकते हैं। इस समय गन्धक ने कीमियागरों के कामों में असाधारण महत्व की भूमिका अदा की। कीमियागर गेबेर के विचार के अनुसार गन्धक प्रकृति के "आधारभूत प्रारम्भो"—ज्वलनशीलता तथा परिवर्तनशीलता में से एक का प्रतिरूप था। गेबेर की यह धारणा है कि धातुयें गन्धक और पारा की विभिन्न अनुपातो मे मिलावटों से बनी हैं, कीमियागरों के धातु सम्बन्धी विज्ञान की आधारशिला बन गई। कीमियागर विभिन्न धातुओं को सोने मे बदल देने की आशा रखते थे, इसके लिये, कीमियागरों की राय में, केवल उनसे गन्धक निकाल लेने की आवश्यकता थी।

गन्धक पृथ्वी पर और कास्मास में

पृथ्वी के भीतर मिलने वाला शुद्ध गंधक, अन्य धातुओं से बने गन्धक के असंख्य यौगिक, अस्त में, फिटकरी के पत्थर ऐल्यूनाइट (Alunite) की तहें, जो शान्त ज्वालामुखियों को दालों में मिलती हैं—इस दिलचस्प तत्व के विलक्षण

भू-रासायनिक इतिहास के जुदा-जुदा पृष्ठ हैं। इस इतिहास का अध्ययन हमें गन्धक सम्बन्धी भूगर्भ विज्ञान, उसके प्रसारण (फैलाव) की मात्रा, और प्रकृति के परिवर्तनों की कुल जटिल प्रक्रियाओं को पेश करने की सम्भावना देता है।

पृथ्वी के पपड़े में 0·04 प्रतिशत गन्धक है। वस्तुतः इस मात्रा को किस प्रकार सोचा जा सकता है? आओ प्रश्न को सही तरीके से हल करने का प्रयत्न करें। कितनी सलफूरिक एसिड पृथ्वी पर प्राप्त होने वाले गन्धक से प्राप्त की जा सकती है? गणना से विशाल अंक प्राप्त होता है। $3. 16. (10)^{16}$ टन $2. 10^{7}$ घन किलोमीटर सल्फूरिक अम्ल। गन्धकीय अम्ल की इस मात्रा से बैकाल झील के बराबर लगभग एक हजार जलाशय भरे जा सकते हैं।

किन्तु गन्धक ने केवल पृथ्वी के पपड़े के निर्माण में ही योगदान नहीं किया है, यह उल्काओं में भी पाया जाता है। और यह तथ्य हमें यह अनुमान करने की अनुमति देता है कि गन्धक पृथ्वी के केन्द्रीय भूखंड की रचना में भी शामिल है। बहुत से वैज्ञानिक यह सोचते हैं कि हमारे ग्रह के हृदय तथा उल्काओं में [illegible] ही ये तत्व होते हैं। पृथ्वी के भीतर गहराई में गन्धक की अधिकता है। इसका प्रमाण न केवल ज्वालामुखी के उद्गारों के समय गन्धक युक्त [illegible] गैसों का निकलना है, बल्कि वे बहु संख्यक गन्धकीय खनिज भी [illegible] हैं, जो हमें सारे संसार में प्राप्त होती हैं। वे बहुत दूर गहराई में पृथ्वी के गर्भ से गर्म हुए जल में बह कर आये हुए गन्धकीय धातुओं के घोल हैं जो ठंडे होकर जम गये हैं।

गन्धक की क्रियाशीलता का क्षेत्र पृथ्वी की सीमाओं को लाँघकर फैलता हुआ कासमास में भी पहुंच जाता है।

गहरे दूर अतीत में विचरण

किसी अकल्पनीय दूर अतीत में वायुमंडल के ऊंचे तापमान तथा उसमें आक्सीजन तथा जल के अभाव ने सलफाइडों के बनने के लिए गंधक तथा धातुओं के सीधे संयोजन का पूर्वाधार बनाया। द्रव, जल, तथा स्वतन्त्र आक्सीजन के प्रगट होते ही सलफाइडें आक्सीकृत होने लगी। सलफेटों की 'उत्पत्ति' का युग आ गया।

शुद्ध गंधक का बनना दो मार्गों से प्रकृति में होता रहा है। एक मार्ग था ज्वालामुखी उद्गारों के समय निकलने वाली हाइड्रोजन-सलफाइड तथा सलफर डाइ-आक्साइड गैसों की पारस्परिक प्रतिक्रिया का। दोनों गैसें संयोजित होते हुए पानी और गंधक देती थीं किन्तु दूसरा मार्ग भी गंधक बनने का था, जिसके फलस्वरूप गंधक के विशाल उद्गम पृथ्वी के नीचे बने। यदि गंधक की भूगोल का निरीक्षण किया जाये तो आप देख सकते हैं कि एक समान गंधकीय उद्गम दक्षिणी क्षेत्रों में मिलते है। मध्य एशिया, क्रीमिया और कोहकाफ, सोवियत सघ, सिसली, जापान, जहां गंधक के टापू मे निकाली जाती है, तथा, संयुक्त राज्य अमरीका के दक्षिण में। इस प्रकार गंधक के दक्षिणी क्षेत्रों की ओर अभ्याकर्षित होने का क्या कारण है ? सभी सम्भावनाओं से यह संयोग मात्र नही है।

अकेडेमिशियन फेर्समान का विचार है कि प्रकृति में शुद्ध गंधक के निर्माण के लिए जलवायु की विशेष परिस्थितियों का होना आवश्यक है—शुष्क और मरुस्थलीय। इसके अतिरिक्त कार्बो-हाइड्राइडों का, जो सलफेटों को शुद्ध गंधक में अवकृत करते हैं, पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है।

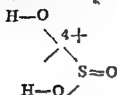
गंधक का तत्वीय रूप

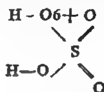
प्राचीन वैज्ञानिकों ने व्यर्थ में ही गंधक के साथ विभिन्न चमत्कारपूर्ण गुणों को नही जोड़ा है, वह दिलचस्प रसायनिक और भौतिक विशेषतायें प्रगट करता है।

बहुत कम तत्वों की रसायन इतनी "धनी" है जितनी कि गंधक की रसायन। गंधक आदर्श अधातु है और आवर्त सारणी में उसकी स्थिति ऐसी है कि गंधक की धनात्मक एवं ऋणात्मक संयोजकतायें समान सफलता से काम करती हैं।

गंधक अपनी परमाणविक रचना के बाह्य-कक्ष में दो एलेक्ट्रोन सरलता से ले लेता है। वह इस प्रकार दो ऋणात्मक संयोजकतायें रखने वाला तत्व बनता है, और इसी रूप में वह हाइड्रोजन-सल्फाइड के अणु H_2S में प्रविष्ट है। गंधक की मुख्य धनात्मक संयोजकतायें 4+ तथा 6+ हैं। उदाहरण के लिए, सल्फर-डाइ-आक्साइड या सलफुरस-अन्हाइड्राइड SO_2 में गंधक धनात्मक चार संयोजकतायें प्रकट करता है और सलफर-ट्राइ-आक्साइड या सलफूरिक अन्हाइड्राइड

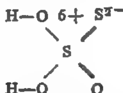
SO_3 में छः संयोजकतायें प्रकट करता है। जल से संयुक्त होते हुए ये ग्राक्साइडें सम्बन्धित सलफूरस या सलफूरिक एसिड H_2SO_3 ग्रौर H_2SO_4 देती हैं। उनकी बनावटों के फार्मूले प्रत्येक स्कूल के विद्यार्थी के परिचित ग्रन्तर्लेख हैं।





सलफूरस एसिड सलफूरिक एसिड

यदि सलफूरिक एसिड के फार्मूला में ग्राक्सीजन के परमाणुग्रों में से किसी एक को गन्धक के परमाणु से प्रतिस्थापित (Replace) कर दिया जाये तो ग्रत्यन्त दिलचस्प यौगिक थियो-सलफरिक (Theo Sulphuric acid), $H_2S_2O_3$ प्राप्त होता है, जिसका फार्मूला निम्नलिखित है :—



इसमें गन्धक का एक परमाणु छः धनात्मक संयोजकताग्रों का होता है ग्रौर दूसरा दो ऋणात्मक संयोजकतायें रखता है। थियो-सलफूरिक एसिड ग्रकार्बनिक यौगिकों का पर्याप्त ग्रलभ्य दृष्टान्त है जिनमें एक ही यौगिक में एक ही तत्व के दो परमाणु विभिन्न प्रकार की संयोजकतायें प्रगट करते हैं। सलफूरिक एसिड से भिन्नता दिखाते हुए, सलफूरस एसिड ग्रौर थियो-सलफूरिक एसिड स्वतन्त्र रूप में नही रहते है।

ग्रन्ततः, गंधक के यौगिकों की एक लम्बी श्रेणी ज्ञात हो चुकी है, जिनको पोलीथियोनिक एसिडों का नाम दिया गया है। वे सलफूरस-ग्रन्हाइड्राइड ग्रौर हाइड्रोजन-सलफाइड के ग्रधिक जल की उपस्थिति में प्रतिक्रिया करने के फलस्वरूप बनते हैं। उनका साधारणीकृत फार्मूला निम्न रूप में दिया जा सकता है :

H_2SxO_6 जिसमें x तीन से छः तक के ग्रंक ले सकता है।

गंधक के ग्रकार्बनिक यौगिक ग्रपनी विविधता की दृष्टि से एक प्रमुख स्थान रखते हैं।

गंधक मेंडेलीफ की ग्रावर्त सारणी के लगभग सभी तत्वों से बड़ी उत्सुकता से संयोजन करता है। केवल निष्क्रिय गैसें, कुलीन धातुयें, नाइट्रोजन तथा ग्रायो-

हीन अपने ऊपर उसके 'आक्रमण' को महत्वहीन कर देते हैं। पृथ्वी के पपड़े में बहुत सी धातुयें सलफेटों या सलफाइटों के रूप में वहाँ में स्थित हैं। साथ ही स्मरण कीजिये, मीराबिलाइट जिप्सम, या बहु-संख्यक और विविधतापूर्ण पाइराइटीज को। आप में से प्रत्येक पाठशाला के इस साधारणतम प्रयोग से अवश्य परिचित होंगे। लोहे की रेतन (filings) को गन्धक के चूर्ण के साथ चीनी मिट्टी के खरल में पीसने और हल्का गर्म करने में तूफानी प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

अनुभवी रसायन-शास्त्री भी गन्धक के यौगिकों की विविधताओं एवं विशेषताओं की जाँच करने में सदैव तुरन्त सफल नहीं हो पाते हैं।

परन्तु इस तत्व से अनेक अद्भुत तथ्य सम्बन्धित हैं, जिनको उसके भौतिक गुणों के साथ सम्बन्धित करना उचित होगा।

गन्धक के एक ढेले को गलाइये। सबसे पहले हम उसके आयतन में काफी वृद्धि निरीक्षण करेंगे। यह बढ़ाव लगभग पन्द्रह प्रतिशत होगा। और अधिक गर्म करने पर हमें पीला आसानी से ढुलकने वाला द्रव प्राप्त होगा। लगभग 200°C के पास वह फिर एक बारगी काला पड़ जाता है और बहुत लसदार पदार्थ बन जाता है। 200°C के ऊपर के तापमान से जाने पर फिर आपको आसानी से ढलकने वाला पदार्थ प्राप्त होगा।

गुणों के इस प्रकार के परिवर्तनों का कैसे स्पष्टीकरण किया जा सकता है? साधारण दशाओं में गन्धक का अणु विलक्षण कुण्डली के रूप में होता है, जिसमें तत्व के आठ परमाणु जुड़े होते हैं। गर्म करने में छल्ला धीमे धीमे टूट जाता है, और खुली हुई आठ परमाणुओं वाली जंजीर बना लेता है। इसी के कारण उसमें लसीलापन बढ़ जाता है। अधिक ऊंचा तापमान होने पर जंजीर की कड़ियाँ भी टूटने लगती हैं और पुनः लसीलापन कम होने लगता है। गंधक की वाष्पों में विभिन्न अणुओं—S_8, S_6, S_2—का पूरा सेट मौजूद रहता है। गंधक के परमाणुओं को पृथकतः प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य है। इसके लिए बहुत ऊंचे तापमान की आवश्यकता होगी, जो डेढ़ हजार डिग्री सेन्टीग्रेड से भी ऊपर होगा।

गंधक के कुछ अपररूप (allotropic modifications) गंधक होता है। सर्वाधिक स्थायी अपररूप समचतुर्भुज (Rhombic) गंधक होता है। सामान्य, दबाव पर वह 95°C तक अपने को सुरक्षित रखता है जब तापमान इससे ऊपर जाता है तो गंधक के परमाणु मणिभ के जालक में अपनी स्थिति बदल देते हैं, पुनर्गठन उपस्थित होता है और एकनत (mono clinic) गन्धक बन जाता है। समचतुर्भुज गंधक गहरे पीले रंग का होता है। उसके मणिभ-पारदर्शी अष्ट फलकीय होते हैं।

दूसरी किस्म कालिमा लिये हुए पीले रंग के एक नत गंधक (Monoclinic Sulphur) की है। इसके मणिभ प्रिज्म की आकृति के लम्बे सुई के समान होते हैं। यह निरीक्षण करना दिलचस्प होता है। किस प्रकार तापमान धीमें धीमे करने से एकनत गंधक अधिकाधिक साफ होता जाता है और उसके लम्बे प्रिज्म रोम्बिक (समचतुर्भुज) प्रणाली के बहुत से मणिभों में टूट जाते हैं। समस्त प्राप्त गंधक के अपररूपों में एक सामान्य प्रवृत्ति पाई जाती है। वे सर्वाधिक स्थायी मणिभीय बनावट की ओर—समचतुर्भुज गंधक की ओर—परिवर्तित होते रहते हैं और प्रकृति में भी इसी समचतुर्भुज गंधक के रूप में प्राप्त होते हैं।

गंधक प्राप्त करने की विधि

गंधक वायु में सरलता से गल जाता है और जलता है। सिसली में अन्य ईंधन की अनुपस्थिति में गंधक का उपयोग ईंधन के रूप में इसीलिये किया जाता था। गंधक के खनिज से प्राप्त करने की विधि भी ठीक इसी उसके सरलता के गलने के गुण पर आधारित है।

प्राचीन काल में गंधक को आदिम तरीकों द्वारा गलाते थे। गंधकीय प्रस्तर के टुकड़ों को मिट्टी के बड़े बर्तन में, जिसमें नीचे छेद होते थे भर देते थे, यह बर्तन एक दूसरे बर्तन के ऊपर रखा जाता था, जो पृथ्वी में गड़ा होता था। फिर इस साधारण उपकरण को गर्म करते थे। गंधक पिघल कर बर्तन के पेंदे के छेदों से निकल कर नीचे मिट्टी में बड़े बर्तन में इकट्ठा होता था।

शताब्दियाँ बीतीं और गंधक के गलाने की रीतियों में सुधार हुए। गंधकीय उद्गमों के प्रभेदों तथा सामान्यतः उसमें उपस्थित मिलावटों पर निर्भर करते हुए मनुष्य ने गंधक प्राप्त करने की अत्यन्त विविधिता पूर्ण विधियां निकालीं।

इटली ने संसार को साधारणतः थोड़ी गहराई पर मिलने वाले प्राकृतिक गंधक को गलाने का अनुभव प्रदान किया, किन्तु जो सिसली के पथरीले, सूर्य से तपाये हुए पठारों के लिए सम्भव था वह अन्य स्थानों के लिये उपयुक्त न सिद्ध हुआ।

सिसली के उद्गमों से भिन्नता रखते हुए अमरीका के गंधकीय उद्गम पृथ्वी के नीचे अत्यन्त गहराई में हैं। मिट्टी के अत्यन्त भुरभुरे (loose) होने के कारण खदानें खोद कर उसे निकालना असम्भव था।

अमरीका के इन्जीनियर फ्राश ने एक विशेष हल प्रस्तुत किया। पृथ्वी के अन्दर एक नल (पाइप) में दूसरा नल डाल (Insert) करके जुड़े हुए नलों की प्रणाली द्वारा पहले से अतिरिक्त गर्म (Super heated) जलीय वाष्पों को भीतर

पहुंचाया गया। इन वाष्पों ने भीतर गंधक को अपनी गर्मी से गला दिया और अपने दबाव से उसे ऊपर की ओर ढकेल दिया। इस प्रकार पिछली शताब्दी में फ्लोरिडा के छोटे से प्रायः द्वीप में गले हुए शुद्ध गंधक का चश्मा स्थापित किया गया।

अमरीका के उद्गमों से भिन्नता रखते हुए कराकोरम का गंधक कार्टज की रेत की पर्याप्त मिलावट लिए हुए होता है। इस कारण गंधक निकालने की कुल ज्ञात विधियां इस अवसर पर व्यर्थ सिद्ध हुई हैं। सोवियत इन्जीनियर वालकोव ने इसका हल निकाला। उसने एक साधारण उपकरण तैयार किया जो कुछ कुछ साधारण समोवर के समान था। इस बर्तन को पीसे हुए खनिज से भर दिया गया और उसमें पानी डाल कर खूब मिला दिया गया। फिर उसे उबाला गया। गला हुआ गंधक नीचे एकत्रित होने लगा और समोवर से समान शुद्ध धार में बाहर निकलने लगा। कारखानों की परिस्थितियों के अनुकूल बनाने के लिए इस विधि को और सुधारा गया। समोवर के स्थान पर पूर्ण रूप से समुद्रित (hermitically sealed) भाप-सह ब्वायलर (Boiler) का प्रयोग कारखानों में किया गया।

इन विधियों से लगभग शत प्रतिशत शुद्ध गंधक नगण्य राख की मिलावट तथा संखिया और सेलीनियम की अत्यन्त सूक्ष्म लेश मात्र मिलावटों के साथ मिलता है। किन्तु पहले जो उपज, प्राप्त होती है (प्राथमिक उपज) वह लगभग शुद्ध होती है और उसे और शुद्ध करना आवश्यक होता है। इनके लिए डिस्टिलेशन की विधि काम मे लाई जाती है। विशेष प्रकार के कमरों में गंधक को गलाया जाता है। कठोर टुकड़े कमरे के नीचे धरातल पर बैठ जाते हैं, और द्रव गंधक कच्चे लोहे के विशेष रिटार्टों में चला जाता है, जिन में उसे उबलने तक गर्म करते हैं। इस पर निर्भर करते हुए कि गंधक का कन्डेन्सेशन वाष्पों से किस प्रकार से हुआ या तो गंधक के फूल कहलाने वाला गंधक प्राप्त होता है या पैंफु गंधक प्राप्त होता है। इस प्रकार शुद्ध किया हुआ गंधक मानव-जीवन में व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है।

आग्नेय प्रस्तर

आदिम मानव ने अग्नि बड़ी कठनाई से प्राप्त की थी। इतिहास की पाठ्य-पुस्तकों के चित्रों में हम खाल से शरीर ढकने वाले मानव की कल्पना करते हैं, जो फ्लिण्ट (चकमक प्रस्तर) से एक पत्थर को टकराकर चिनगारी निकालता है।

इस पत्थर से प्राचीन यूनान निवासी भी भली भांति परिचित थे। चमकदार पीले रंग, और हो सकता है, फ्लिण्ट से टकराने पर चिनगारियों की रेखा निकालने की उसकी क्षमता के कारण वे उसे पाइराइट कहते थे, जिसके अर्थ हैं अग्नि।

मैच बाक्स (दियासलाई की डिब्बी) ने मानव को अग्नि प्राप्त करने के विचार की आवश्यकता से मुक्ति दे दी है किन्तु प्राचीनतम अग्नि देने वाला पाइराइट आज भी जीवित है। अमरीका के ध्रुवीय प्रदेशों के इस्किमो जाति के निवासियों मे इस समय भी आग्नेय प्रस्तर का उपयोग जारी है।

पाइराइट की मानव-जीवन के विकास में भूमिका का मूल्य जितना भी लगाइये कम है। प्राचीन-अतीत में उसने मनुष्य को अग्नि प्राप्त करने में सहायता दी। उसी की सहायता से वे सभ्यता के विकास की ऊँची सीढ़ियों पर चढ़े, किन्तु आधुनिक अर्थ व्यवस्था की कल्पना करना भी इस खनिज के बगैर कठिन है। गंधकीय माक्षिक (पाराइटीज को यह भी कहा जाता है) सलफ्यूरिक एसिड के उत्पादन का आधार है।

पाइराइट का रासायनिक फार्मूला $Fe\ S_2$ है। यह लोहे की पाली-सलफाइड (बहु सलफाइड) कहलाती है। पृथ्वी के पपड़े में इसकी तहें अत्यन्त अधिकता में प्राप्त होती हैं।

गंधकीय माक्षिक के अणु से एक परमाणु गंधक को निकाल लीजिए। पाइराइटीज के चमकदार 'आग्नेय' मणिभ फेरस-सलफाइड (FeS) के काले, भगुर मणियों में बदल जायेंगे।

लोहस सलफाइड (FeS) खनिज के रूप में वस्तुतः पृथ्वी पर नही प्राप्त होता है। यह कासमास से आने वाला हमारा अतिथि है। लोहे की सलफाइड मुख्यतः उल्काओं (Meteors) में होती हैं। लोहस अथवा फेरस-सलफाइड बहुत समय तक धातुकर्मिको के लिए एक पहेली बनी रही, इसकी तुच्छ मिलावट भी इस्पात को भगुर और आगे के परिशोधनों के लिये अनुपयुक्त बना देती है।

अठारहवीं शताब्दी के रूस तथा स्वीडेन के ख्याति-प्राप्त लोह का रहस्य ठीक इसी मे था कि यह लोहे की अगंधकीय खनिजों से तैयार किया जाता था।

दूसरी महत्वपूर्ण सलफाइड अत्यन्त प्राचीन समय से ज्ञात सिंगरफ (Cinnabar) मरक्यूरस-सलफाइड है। इसके चमकदार लाल रंग के कारण भारतीय इसे ड्रैगीय रक्त (Dragon's blood) कहते थे। प्राचीन रूस में सिनावार (सिंगरफ) सर्वाधिक प्रचलित खनिजीय रंगों में एक था। किताबें लिखने वाले इस रंग से उनके शीर्षक लिखा करते थे।

गंधक और पारा परस्पर आसानी से संयोजित हो जाते है। इस प्रकार की दोनों के मध्य मिलन प्रवणता (affinity) बहुत समय पूर्व मनुष्य को ज्ञात हो गई थी। इसकी उल्टी, सिंगरफ से पारा प्राप्त करने की क्रिया का ज्ञान भी मनुष्य को बहुत समय पहले हो गया था। ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह सोचा जा सकता है कि डिमोक्रीटोज को यह प्रतिक्रिया ज्ञात थी। प्रत्येक अवसर

पर, आज दिन तक प्राकृतिक सिंगरफ को पारा प्राप्त करने के कच्चे माल के रूप मे इस्तेमाल किया जाता है।

सिंगरफ (हिंगुल) का सबसे निकटवर्ती सजाति जिक-सलफाइड है। जर्मनी मे खान में काम करने वाले इसे 'जिंक ब्लेंड,' कहते हैं। क्योंकि वह पारदर्शी होता है और साधारण गंधकीय खनिजों के समान बिल्कुल नहीं होता है।

जिक-सलफाइड में अत्यन्त दिलचस्प गुण होते हैं। यदि उसे विशेष प्रकार से परिशोधित किया जाता है, तो उसमें अंधेरे में चमकने का गुण आ जाता है। इसे फास फोरोसेन्स कहा जाता है। जिक-सलफाइड एक्सरे तथा रेडियो सक्रिय किरणों के प्रभाव से सीधे चमकने लगता है। जिंक-सलफाइड की इस विशेषता का उपयोग व्यापक रूप से एक्सरे तकनीक तथा रेडियो सक्रिय तत्वों के बीच काम करने के समय किया जाता है।

उदाहरण के लिये एक छोटी प्लेट की सहायता मे जिसमें जिक-सलफाइड की पतली पर्त चढ़ी होती थी, रेडियो सक्रिय परमाणुओं के अल्फा (a) क्षरण (Disintegration) को सबसे पहले आंखों से देखने मे सफलता मिली। हीलियम के बीज केन्द्र (अल्फा कण) प्लेट से टकराते हुए टिमटिमाहट (सिंटिलेशन Scintillation) उत्पन्न करते हैं। इसी सिद्धान्त पर रेडियो सक्रियता के अध्ययन का विशेष उपकरण-सिन्थरिस्कोप—आधारित है।

जिक ब्लेंड, गैलिना (PbS) तथा तांबा पाइराइट Cu_2S क्रमश: जिंक (जस्ता), लेड (सीसा) तथा तांबा धातुओं के प्राप्त करने के लिए मुख्य कच्चा माल है।

प्रयोगशालाओं में विरल-भूमि-तत्वों के सलफाइडों के बड़े दिलचस्प उपयोग होते हैं। इन सलफाइडों को गलाना विशेष रूप से कठिन होता है। कुल ज्ञात सलफाइडो में वे सर्वाधिक अगलनीय पदार्थ होते हैं। उदाहरण के लिए, सीरियम सलफाइड की घड़ियों (Crucibiles) में अल्यूमिनियम आक्साइड के समान दृढ़, हठी पदार्थ भी गलाये जा सकते हैं।

उद्योग में काम में लाये जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण पदार्थों में एक प्रकृति में न मिलने वाला सोडियम सलफाइड Na_2S है। गंधकीय रंगों में उत्पादन की प्रक्रियाओं मे उसका उपयोग किया जाता है। चमड़े के व्यवसाय मे उसका उपयोग किया जाता है।

सोडियम-सलफाइड कृत्रिम रूप से प्राप्त किये जाने वाले कुल सलफाइडों में सबसे अधिक औद्योगिक महत्व रखता है।

गंधक निर्माता, शिल्पी, चिकित्सक…के रूप में

पृथ्वी के पपड़े में गंधक की उपस्थिति की तीसरी शक्ल सलफेट है।

वे सब विभिन्न रासायनिक एवं भौतिक गुणों वाले होते हैं। और केवल एक सामान्य चिन्ह लेड सलफेट $PbSO_4$ तथा बेरियम–सलफेट $BaSO_4$ को छोड़कर लगभग कुल अन्य सलफेटों का पानी में भलीभांति घुलनशील होना — हमें अतीत में उनके भाग्य की एकता के बारे में कहने की सम्भावना प्रस्तुत करता है।

दूर भौगर्भिक युगों में स्वतन्त्र आक्सीजन प्रगट होने के साथ ही सलफाइडों का धीमे-धीमे आक्सीकरण और उनका सलफेटों में परिवर्तन भी प्रारम्भ हो गया है। द्रव जल के प्रगट होने पर सलफेट उसमें घुले और नदियों द्वारा विशाल महासागरों में पहुंचे और केवल तब सागरों और महासागरों के सूखने की क्रिया के दौरान सलफेटों का एक भाग जिप्सम के रूप में और दूसरा भाग ग्लाबर साल्ट Na_2SO_4 के रूप में मणिभीकृत होने लगा, और तीसरा भग घुले हुये रूप में सागरीय जल में बना रहा। इस अंश के लवण को मैग्नीशियम-सलफेट कहा जाता है।

सम्भवतः, कैलशियम सलफेट $CaSO_4 2H_2O$, या जैसा कि उसे साधारणतः कहा जाता है, जिप्सम का भाग्य सर्वाधिक बहुमुखी हो। कैलशियम सलफेट के पानी के घोल से अवक्षेपित होने के समय की विभिन्न परिस्थितियों तथा उसमें उपस्थित विभिन्न मिलावटों पर निर्भर करते हुए जिप्सम के विभिन्न रूप बने। यह खनिज साधारणतः हमें विविध मणिभीकृत आकृति में मिलता है, जो कभी रोजेट (Rosette) –पत्तियों का गुच्छा–के रूप में और कभी गौरैया की पूंछ के रूप में होता है। वह बहुत ही विविधिता पूर्ण रंगों के शेड—पारदर्शी—श्वेत से भूरा, पीला और हलका गुलाबी तक—देता है।

प्रकृति ने जिप्सम को बड़ी उदारता से विभिन्न गुण प्रदान किये हैं, जो बहुत समय से मनुष्य की सेवा करते चले आये हैं।

भवन निर्माण में जिप्सम का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। भवन निर्माण कला सम्बन्धी अनेक वस्तुओं के बनाने में यह काम आता है और जुड़ाई करने वाले बहुत से पदार्थ (Plastering Materials) जिप्सम से तैयार किये जाते हैं।

कैलशियम-सलफेट का प्रयोग शल्य चिकित्सा (Surgery) में भी होता है। हड्डियों के सर्वाधिक जटिल फ्रैक्चरों (टूटावों) के समय जिप्सम के प्लास्टर की सहायता से हड्डी को उसकी ठीक स्थिति में कायम किया जाता है। इसके लिए जलाये हुए जिप्सम का प्रयोग करते हैं, जिसके मणिभीकरण जल (Water of crystallisation) का एक अंश निकल चुका होता है। यदि इस प्रकार के जिप्सम को पुनः पानी से मिलाया जावे, तो वह तेजी से ठोस

पड़ जाता है और फिर $CaSO_4\ 2H_2O$ में परिणत हो जाता है। जिप्सम के इस गुण पर ही उसका औषधि-शास्त्र तथा भवन निर्माण कला में उपयोग आधारित है।

जिप्सम के प्रभेदों में से कुछ, जैसे अलाबास्टर (alasbaster) तथा ऐनहाइड्राइड, ने कला के क्षेत्र में व्यापक ख्याति प्राप्त कर ली है।

मृदु शेडों में हल्का पीला अलाबास्टर (सिलखड़ी) शिल्प कला के लिए सुन्दर पदार्थ सिद्ध हुआ। यह कोमल पारदर्शी खनिज अनुभवी पत्थर तराशों के हाथ में बड़ा विनम्र बन जाता है। पन्द्रहवीं शताब्दी में ही ताशकन्द के कुशल कारीगर अलाबास्टर से सुन्दर फूलदान तथा लैम्प, प्रकाश किरणों को अपने से निकालने की उसकी क्षमता का उपयोग करते हुए, बनाते थे।

और यदि अपीनाइन पर्वत श्रेणियों ने इटली के कलाकारों को सुन्दर कलात्मक रचनाओं के लिए प्रचुर सामग्री प्रदान की है, तो यूराल के पर्वतों से भी हमारे सोवियत देश को अलाबास्टर के विविध सर्वाधिक मनोहर प्रभेदों में से एक—मृदु-गुलाबी सेलेनाइट (Selenite) उपहार में दिया। बाजोव की कहानियों के वीर इसी से अपनी सुन्दर वस्तुएँ तैयार करते थे।

मूर्तिकला के पदार्थ के रूप में ऐन्हाइड्राइड का भी उपयोग किया जाता है, जो जिप्सम का एक विशेष प्रभेद है। ऐन्हाइड्राइड नीला—भूरा, चन्द्रमा के शेड (रंग) का होता है। वह अत्यन्त कठोर जिप्सम है, और प्राचीन रोम के निवासी इसका प्रयोग स्तम्भों के बनाने में भी करते थे।

प्रकृति ने गन्धक के उद्गम सब देशों को प्रचुर मात्रा में प्रदान किये हैं। सोवियतसंघ में ये उद्गम सर्वत्र हैं। जिप्सम न मिलने वाले स्थानों को गिनाना आसान है, क्योंकि वे बहुत कम हैं।

सोवियत संघ के दक्षिण में, कास्पियन सागर में कारा—बोगाजगोल की खाड़ी है, जिसका तुर्कमानी भाषा में अर्थ है "काला-मुख" इस खाड़ी में लवणों का सान्द्रण बहुत अधिक है, इतना अधिक कि मनुष्य उसमें डूब नहीं सकता। इस प्रकार के "नमकीन पानी" में नहाने के बाद फिर साफ़ सलोने पानी में नहाना आवश्यक होता है। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो त्वचा में नमक की पर्त जमी रह जाती है, जो शरीर पर उपस्थित होने वाले छोटे से छोटे खराश को सा कर बड़ा सकती है। इस खाड़ी के पानी में घुले हुए रूप में उपस्थित अनेकों लवणों में मुख्य स्थान सोडियम-सलफेट, या मीराबिलाइट का है।

यह लवण बहुत से मूल्यवान गुण रखता है। यह अकारण ही नहीं है

कि इसे लैटिन भाषा में 'सालेमिराबिलिस' (Sale mirabilis) कहा जाता है जिसका अर्थ है "अद्‌भुत लवण"।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ मे जर्मनी में एक रसायन शास्त्री इग्रोगोनी रुडोल्फ ग्लाबर नाम का रहता था। बहुत बीमार पड़ जाने पर ग्लाबर ने अपने परिचितों की सलाह से एक चश्मे का पानी पीना प्रारम्भ किया और स्वस्थ हो गया। वैज्ञानिक चश्मे के जल की रासायनिक रचना की ओर आकर्षित हुआ। इस विचार से उसने जल को एक प्याली में वाष्पीकृत किया और किसी लवण के लम्बे सफद मणिभ उसको प्राप्त हुए।

इसके पूर्व इसी प्रकार के मणिभ उसे "रसोई के नमक" सोडियम-क्लोराइड पर सलफूरिक एसिड के प्रभाव द्वारा प्राप्त हो चुके थे।

अपने स्वस्थ होने की स्मृति में उसने अपने द्वारा प्राप्त इस लवण को "अद्‌भुत लवण" अथवा मीराबिलाइट की संज्ञा दी। पर अधिकतर इस लवण को ग्लाबर साल्ट कहा जाता है। ग्लाबर साल्ट का रासायनिक फार्मूला $Na_2 So_4$ $10H_2O$ है।

जल रहित सोडियम सलफेट कांच के उत्पादन में इस्तेमाल किया जाता है। सोडा, गंधक, अमोनियम-सलफेट, सोडियम-सलफेट, पोटेशियम-सलफेट और बहुत से अन्य पदार्थों को ग्लाबर साल्ट से उत्पादित किया जाता है। उसका उपयोग कागज के उद्योग में भी होता है।

सागरीय जल के लवणों में प्रमुख भूमिका मैगनीशियम-सलफेट $Mg\ SO_4$, अदा करता है। सागरीय जल को विशेष तीखा लवणीय स्वाद इसी मैगनीशियम सलफेट से प्राप्त होता है और इसीलिये इसे "कड़वा नमक" भी कहा जाता है। मैगनीशियम सलफेट का उपयोग औषधि के लिये जुलाब (purgative) के रूप में किया जाता है।

प्रकृति में गन्धक का चक्र

प्रकृति मे प्राप्त होने वाले गंधक की तीनों अवस्थायें-शुद्ध गंधक, सलफाइडें तथा सलफेट कुछ सीमा तक परस्पर एक दूसरे से अलग नहीं मालूम होती हैं। वे आपस में परिवर्तनों की एक पूरी शृंखला से जुड़ी हुई हैं। आओ पता लगायें कि किस प्रकार के परिवर्तनों ने प्राकृतिक गंधक को विभिन्न भौगर्भीय तथा जलवायु-सम्बन्धी दशाओं के अन्तर्गत पीड़ित किया है।

पृथ्वी के जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में गंधक ने सीधे धातुओं से संयोजन किया और सलफाइडें बनाई। स्वतन्त्र आक्सीजन के प्रकट होते ही सलफाइडें सलफेटों में आक्सीकृत हुई। ज्वालामुखी पर्वतों से निकली हुई गंधकीय गैसों के

गंधक को भी वही भाग्य मिला जो सल्फाइडों को मिला था—वह सलफूरिक एसिड में प्राक्सीकृत हुआ और बाद को सलफेटों में बदल गया। अजैवीय प्रकृति मे गंधक की मूलभूत प्रवृत्ति यह होती है, कि वह उच्चतम संयोजकताओं वाले यौगिकों—सलफेटों के रूप में परिवर्तित हो जाये। ये सलफेट यौगिक अजैव प्रकृति के गंधक तथा जैवीय क्षेत्र (बायोस्फियर) के परिवर्तनों में भाग लेने वाले गंधक के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाले पुलों के समान होते हैं।

यह ज्ञात हो चुका है कि कुल पशु जगत् एवं वनस्पतीय शरीरों मे गंधक होता है। पौधे उसे घुले हुए सलफेटों से जो मिट्टी में होते हैं, प्राप्त करते हैं, और पशु पौधों से उसे प्राप्त करते हैं।

मृत्यु के बाद पशुओं एवं वनस्पतियों के शरीर सड़ते हैं और हाइड्रोजन सलफाइड उन्मुक्त करते है। विशेष प्रकार के गंधकीय बैक्टीरिया जिनके लिये हाइड्रोजन-सलफाइड भोजन का काम करता है, उसे प्राक्सीकृत कर देते हैं। प्राक्सीकृत होने पर हाइड्रोजन-सलफाइड जल और स्वतन्त्र गंधक में बदल जाती है। स्वतन्त्र गंधक स्वयं सलफूरिक एसिड में प्राक्सीकृत हो जाता है। सलफूरिक एसिड अन्य पदार्थों से संयोजन करती है और यौगिक बनाती है। इसके परिणाम स्वरूप सलफट प्राप्त होते हैं, जो पुनः वनस्पतियों और पशुओं के शरीरों की सेवा में जाते हैं। इस प्रकार प्रकृति में गंधक के परिवर्तनों की लम्बी शृंखला का चक्र पूरा होता है।

रासायनिक उद्योग के आधारों का आधार

दक्षिणी अमरीका में कार्डोल्यरा पर्वत श्रेणी मे एक छोटा ज्वालामुखी पर्वत पुराचे है। इसके मुख (क्रेटर) से रियो-वीनाग्रे नदी निकलती है। उसके पानी में वैज्ञानिकों ने प्रकृति प्राप्त होने वाली सलफूरिक एसिड की खोज की है। यह नदी प्रति बीस टन तक सलफूरिक एसिड समुद्र में ले जाती है। समझा जायेगा की प्रकृति की प्रयोगशाला मे बनने वाली सलफूरिक एसिड की यह मात्रा बहुत बड़ी मात्रा है। वास्तविकता यह है कि, चाहे शाब्दिक रूप से देखा जाये, चाहे अलकारिक रूप मे, यह मात्रा समुद्र मे एक बूंद के समान है। मनुष्य की सलफूरिक एसिड की मांग को पूर्णतः सन्तुष्ट करने के लिये सैकड़ों, हजार और मिलियनों टन·····सलफूरिक एसिड की आवश्यकता होगी।

प्रकृति-दत्त सलफूरिक-एसिड पर्याप्त-साधारण तथा सामान्य प्राकृतिक घटना है।

मध्य एशिया में गंधक की पहाड़ियों को ढकने वाली रेत मे सलफूरिक एसिड के संचय प्राप्त हुये हैं।

कराकोरम अभियान में भाग लेने वालों ने जब रेगिस्तान से लौटकर गंधकीय खनिज के नमूनों को देखना शुरू किया तो वे यह देखकर आश्चर्यचकित

हो गये कि जिस कागज में खनिज लपेटा रखा था, बुरी तरह से चिथड़े-चिथड़े हो गया था, लकड़ी के सन्दूकचे भी क्षतिग्रस्त हो गये थे।

अकेडेमीशियन फेर्समान ने इस विध्वंसकारी क्रिया का कारण सलफूरिक एसिड को बताया, जो कभी-कभी पाइराइटीज और प्राकृतिक गंधक की खानों के साथ मिलती है। यह प्रकृति में मिलने वाली सलफूरिक एसिड थी। फेर्समान की सम्मति में इस द्रव खनिज के पर्याप्त महत्वपूर्ण संचय प्रकृति में मौजूद हैं। प्रकृति मे मिलने वाली मे सलफूरिक एसिड के विशेष रूप से बड़े भण्डार कराकोरम की रेत में हैं। इसका कारण वहा की विशेष जलवायु तथा भू-रासायनिक परिस्थितियां हैं। यह हिसाब लगाया गया है कि कराकोरम की सबसे बड़ी गंधकीय पहाड़ियों में से एक दरवाज पहाड़ी मे स्वतन्त्र सलफूरिक एसिड के संचय सैकड़ों मनोहाइड्रेट—शुद्ध अजलीय सलफूरिक एसिड—होते हैं।

मानव-जीवन में सलफूरिक एसिड को बढ़ा कर मूल्यांकन करना कठिन है। इसका उत्पादन प्रत्येक देश के रासायनिक विकास की शक्ति जांचने की कसौटी बन गया है। किसी भी एक रासायनिक उपज को इतने विविधतापूर्ण उपयोग नहीं प्राप्त हैं जितने सलफूरिक एसिड को। उसकी सहायता से अनेक दूसरे अम्ल प्राप्त किये जाते हैं। फासफोरिक, हाइड्रोक्लोरिक, हाइड्रोफ्लोरिक (Hydrofluoric), एसिटिक, एसिटस। साथ ही विभिन्न टेकनिकल लवण भी इसकी सहायता से तैयार किये जाते हैं।

कुल उत्पादित सलफूरिक एसिड की लगभग आधी मात्रा कृषि की खादों और मुख्यत. सुपर-फासफेटों के बनाने में व्यय होती है।

इसके बगैर विस्फोटक पदार्थों का उत्पादन असम्भव है।

मिट्टी के तेल के उद्योग मे इसका उपयोग किरोसीन, ग्रीज तथा अन्य मिट्टी के तेल की उपजों के साफ करने में किया जाता है। मशीन-निर्माण में धातुओं के उरेहन (etching) में उसका प्रयोग किया जाता है और धातु उद्योग मे तांबा, जस्ता, कोबाल्ट, निकेल, तथा अलोह धातुओं के उत्पादन में उसका प्रयोग होता है।

वस्त्र-उद्योग में वस्त्रों को रंगने के पहले सलफूरिक एसिड के अल्यूमिनियम और बेरियम के लवणों से अभिसंस्कृत कर लिया जाता है।

सलफूरिक एसिड का उपयोग प्लास्टिक पदार्थ के बनाने में भी किया जाता है। कार्बनिक सश्लेषण के उद्योग में यह अनेक प्रक्रियाओं में अनिवार्य होती है।

यथार्थतः सलफूरिक एसिड से तैयार की गई वस्तुयें हमारे दैनिक जीवन में भी हमें बराबर घेरे रहती हैं। दियासलाई, सेलूलायड, रंग, साबुन, यहाँ तक

कि कागज और स्याही, भी जिससे हम लिखते हैं, बगैर सलफ्‌रिक एसिड की सहायता के नहीं बन सकती है। सलफ्‌रिक एसिड तकनीकी विकास के मूल-भूत प्रेरकों में से एक है।

यदि उद्योग के उन विभागों का उल्लेख न किया जाये जिनको सलफूरिक एसिड ने जीवन दिया है, तो भी वे बहुत से उद्योग जो सलफूरिक एसिड उद्योग से पहले के हैं, आज भी पुराने आदिम घरेलू उद्योगों का स्वरूप लिये होते यदि सलफूरिक एसिड की सहायता उनको न प्राप्त होती। मनुष्य आज भी उसी प्रकार पुराने ढगों से कागज व स्याही तैयार करते होते तथा उसी प्रकार अनेक अलौह धातुयें प्राप्त करते होते और वस्त्रों को रगते होते जैसे कि वे मध्यकालीन युग में किया करते थे।

क्या दस शताब्दियों पूर्व 'हरे प्रस्तर'—कसीस को तपा कर सबसे पहले सलफूरिक एसिड प्राप्त करने वाले मध्ययुगीन कीमियागरों को यह कभी ध्यान हो सकता था कि उनके द्वारा प्राप्त पदार्थ मानव के लिए इतना गुणकारी सिद्ध होगा ?

आज से शताब्दियों पूर्व""""स्वप्नों के संसार में विचरण करने वाले किस कीमियागर की प्रयोगशाला में सलफूरिक एसिड ने जन्म लिया ? हो सकता है कि उसकी खोज का श्रेय सिद्ध पारसी वैज्ञानिक अबूबकर-अल-राज को मिला हो, जैसा कि रसायन के बहुत से इतिहासकारों का विचार है।

कसीस को तपा कर वह कई शताब्दियों तक प्राप्त किया जाता रहा। केवल पन्द्रहवीं शताब्दी मे उसके प्राप्त करने का नया ढंग निकाला : गंधक और शोरा (Saltpetre) के मिश्रण को गर्म करके सलफूरिक एसिड प्राप्त की गई। यह ढंग तीन सौ वर्षों तक चला और लम्बे अरसे तक समय की परीक्षायें सहता रहा। किन्तु इसकी अपनी खामियां थी। इससे बहुत कम मात्रा में ही सलफूरिक एसिड प्राप्त की जा सकती थी।

जीवन आगे बढ़ा और उसने मनुष्य के सामने नई समस्यायें उपस्थित कीं। सलफूरिक एसिड (गंधक के तेजाब) की छोटी प्रयोगशालाओं और चिकित्सालयों की सीमाओं से ऊपर जाना आवश्यक हो गया। मार्ग में केवल एक अवरोध था : किस प्रकार के बर्तनों में सलफूरिक एसिड का उत्पादन किया जावे ? कीमियागर तथा औषधि बनाने वाले कांच के बर्तनों का प्रयोग करते थे, जो बड़े उत्पादन के लिए बिलकुल अनुपयुक्त थे। उस समय तक कुल धातु इस कार्य के लिए अनुपयुक्त थे, क्योंकि वे सभी सलफूरिक एसिड के सम्पर्क में नष्ट हो जाते थे।

1741 ई० में स्काटलैंड में रोवाक की योजना के अनुसार चैम्बर प्रोसेस से सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त करने का पहला कारखाना खोला गया।

1806 ई० में फ्रेंच रासायनिक क्लोमान तथा डिजोर्म ने सलफ्यूरिक एसिड के उत्पादन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण खोज की उन्होंने सिद्ध किया, कि सलफ्यूरिक एसिड के चैम्बर प्रोसेस के उत्पादन में सलफर-डाइ-आक्साइड गैस का आक्सीकरण नाइट्रोजन की आक्साइडों के अपनी आक्सीजन उसे दे देने के कारण होता है।

इस प्रकार शोरा का स्थान नाइट्रिक एसिड ने ले लिया। इस खोज ने चैम्बर प्रणाली से सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त करने की विधि को सैद्धान्तिक आधार प्रदान किया।

सलफ्यूरिक एसिड को प्राप्त करने के लिए सलफर-डाइ-आक्साइड गैस की आवश्यकता होती है। वह सलफाइडों के जलाने से बनती है। इसके बाद उसका आक्सीकरण गन्धकीय ऐनहाइड्राइड में होता है। फिर ऐनहाइड्राइड का संयोजन पानी से होता है और सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त हो जाती है। समझा जावेगा कि यह कितना कठिन है।

वस्तुतः सलफ्यूरिक एसिड प्राप्ति एक जटिल टेकनालाजिकल प्रक्रिया है, जिसमें यह बहुत से रासायनिक परिवर्तन परस्पर एक दूसरे से जुड़े हुए होते हैं। सलफ्यूरिक एसिड के उत्पादन के पूरे इतिहास के दौरान रसायनशास्त्रियों ने पूरी लगन के साथ खोजें की और विभिन्न संशोधन प्राप्त किये, जिससे सलफ्यूरिक एसिड का उत्पादन अधिक सरल और सस्ता बन गया।

सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त करने की पुरानी चैम्बर विधि का स्थान समय पाकर अधिक सुधरी हुई मीनार विधि ने ले लिया, किन्तु सुधार केवल तकनीक तक ही सीमित था—चैम्बर के स्थान पर मीनारों (Towers) का प्रयोग किया जाने लगा। प्रक्रिया का रासायनिक पहलू दोनों में एक सा बना रहा। दोनों विधियों को सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त करने की "नाइट्रोजन विधि" का सामूहिक नाम देकर सम्मिलित किया जा सकता है।

नाइट्रोजन विधि का सार सलफर-डाइ-आक्साइड गैस को सलफ्यूरिक एसिड तक आक्सीकृत कर देते हैं। जल में घुली हुई नाइट्रोजन-पर-आक्साइड आक्सीकारक का काम करती है। इस क्रिया का रासायनिक समीकरण अत्यन्त सरल है :



$$SO_2 + NO_2 + H_2O = H_2SO_4 + NO$$

नाइट्रोजन-आक्साइड जो इस समय बनती है, उत्पादन की क्रिया के अन्तर्गत वह बेकार नहीं होती है। आक्सीजन उसे पुनः नाइट्रोजन-पर-आक्साइड में

आक्सीकृत कर देती है, और इस प्रकार पुनर्जीवित की हुई नाइट्रोजन-पर-आक्साइड फिर काम में लाई जा सकती है। इस तथ्य का बहुत बड़ा आर्थिक मूल्य है। नाइट्रोजन की आक्साइडें, वस्तुतः, व्यय नहीं होतीं। नाइट्रोजन-पर-आक्साइड अपनी आक्सीजन सलफर-डाइ-आक्साइड को देती हुई उसके आक्सीकरण को तीव्र कर देती है। वह एक विलक्षण उत्प्रेरक की भूमिका अदा करती है।

व्यवहार में यह सब किस प्रकार सम्पन्न होता है। पाइराइटीज की भट्टियों से निकलती हुई गैसों में सलफूरिक-ऐनहाइड्राइड होती है। गैसें उत्पादन-मीनारों (Production Tower) से गुजरती है, जहां उन्हें नाइट्रोसो (Nitroso) से सींचा (wash) जाता है। नाइट्रोसो ऐसी सलफूरिक एसिड है जिसमें नाइट्रोसिल सलफूरिक एसिड ($NOHSO_4$) घुली होती है। नाइट्रोसो के अतिरिक्त उत्पादन मीनारों में जल भी प्रवेश किया जाता है। इस प्रकार नाइट्रोसिल सलफूरिक एसिड में सलफूरिक और नाइट्रेज अम्ल प्राप्त होते हैं।

नाइट्रस एसिड सलफर-डाइ-आक्साइड और जल के प्रभाव से बनने वाली सलफूरस एसिड को सलफूरिक एसिड में आक्सीकृत कर देती है।

नाइट्रोजन की आक्साइडें रखने वाली गैसें ऐब्सार्पशन (अवशोषण) मीनारों में जाती हैं। ये मीनारें सलफूरिक एसिड से सिंचित किये जाते हैं। इन मीनारों में नाइट्रोसिल सलफूरिक एसिड तैयार होती है। इस प्रकार से नाइट्रोजन की आक्साइडें पकड़ ली जाती हैं और बाहर वायुमण्डल में नहीं जाने पातीं।

मीनार विधि से अधिक सान्द्रित सलफूरिक एसिड नहीं प्राप्त होती है। उसका सांद्रण (Concentration) 75 प्रतिशत से ऊपर नहीं जाता। इस प्रकार की एसिड साधारणतः कृत्रिम खादों के उत्पादन में खर्च होती है। सान्द्रित सलफूरिक एसिड प्राप्त करने के लिए सम्पर्क विधि (Contact Process) कहलाने वाली प्रणाली का उपयोग किया जाता है। इस विधि में सलफर-डाइ-आक्साइड गैस को वायु की आक्सीजन द्वारा उत्प्रेरक के सम्पर्क में आक्सीकृत करते हैं और फिर इस प्रकार प्राप्त सलफूरिक-ऐनहाइड्राइड को जल से संयोजित करा के सलफूरिक एसिड प्राप्त करते हैं।

विशेष प्रकार की भट्टियों में धातुओं की सलफाइडों (साधारणतः, लोह कोलचेडान या पाइराइटीज) को जलाते हैं। जलने से वायु के साथ मिली हुई सलफर-डाइ-आक्साइड गैस मिलती है। उसे ध्यान पूर्वक धूल और, जो इससे भी अधिक आवश्यक है, विभिन्न मिलावटों, उदाहरण के लिये आर्सेनिक-त्रि-आक्साइड से शुद्ध करते हैं, जिनकी उपस्थिति उत्प्रेरक की शक्ति को नष्ट कर देती है और केवल तब गैसों का गर्म मिश्रण सम्पर्क उपकरण में प्रवेश कराया

जाता है। बनने वाली सलफूरिक-एनहाइड्राइड को सान्द्रित सलफूरिक एसिड से पकड़ लिया जाता है, जो संतृप्त होते हुए गाढे तेल के समान द्रव में परिणत हो जाती है, जिसे ओलियम कहा जाता है। अजलीय सलफूरिक-एसिड में सलफूरिक-ऐन्हाइड्राइड के घोल को ओलियम कहते हैं।

उत्प्रेरक के रूप में पहले प्लेटीनम का उपयोग करते थे। गैसों को भली भांति शुद्ध करके सम्पर्क उपकरण में प्रवेश करने से प्लेटीनम अपनी सक्रियता लगभग पन्द्रह वर्षों तक सुरक्षित रखता है। फिर भी, यह लाभप्रद नहीं था, क्योंकि प्लेटीनम अत्यन्त महगा पड़ता था।

हाल के दिनों में वनैडियम-ऐनहाइड्राइड का उपयोग किया जाने लगा है। यह कहीं अधिक सस्ता तथा "उत्प्रेरक की शक्ति नष्ट करने वाले" विभिन्न प्रकार के पदार्थों से प्लैटीनम की अपेक्षा बहुत कम प्रभावित होने वाला होता है।

इस प्रकार सलफूरिक एसिड प्राप्त हो जाती है। यह भारी तेल वत् द्रव है। जर्मन इसे 'नोर्डगाउजेन तैल' कहते थे। और अन्ततः सब समयों और राष्ट्रों के लिये सान्द्रित सलफूरिक एसिड का सामान्य नाम ओलियम है, जिसका लैटिन भाषा में अर्थ होता है तैल।

सलफूरिक एसिड अत्यन्त विचित्रतापूर्ण आचरण प्रदर्शित करती है। कोई ऐसा पदार्थ पाना कठिन है, जिसके गुण अपने सान्द्रण पर निर्भर करते हुए इतनी तेजी से बदलते हों। धातुओं पर प्रभाव के विचार से सान्द्रित तथा तनूकृत सलफूरिक एसिड अलग-अलग बिल्कुल दो विभिन्न यौगिकों की भांति आचरण प्रगट करती है।

तनूकृत (diluted) सलफूरिक एसिड सीसा (lead) को छोड़कर सभी धातुओं को, जो टेन्शन के विचार से हाइड्रोजन से बायें स्थित हैं, अपने में घोल लेता है और इस घुलन के समय हाइड्रोजन उन्मुक्त होती है। तनूकृत सलफूरिक एसिड मे सीसा का अघुलनीय होना चेम्बर : प्रोसेस स सलफूरिक एसिड के उत्पादन में निर्णायक भूमिका अदा करता है। सान्द्रिक सलफूरिक-एसिड में सीसा को पूर्णरूप से अपने में घोल लेने की क्षमता होती है, इसलिए सम्पर्क विधि (Contact Process) मे जिसमें ऊंचे सान्द्रण की सलफ्यूरिक एसिड प्राप्त होती है, टेकनालाजिकल प्रक्रियाओं में सीसे का प्रयोग नहीं करते हैं।

सान्द्रिक सलफूरिक एसिड गर्म किये जाने पर लगभग सभी धातुओं को अपने में घोल लेती है, किन्तु इस समय वह अपनी आक्सीकारक क्षमता प्रकट करती है, और हाइड्रोजन के स्थान पर गंधकीय गैस प्रदान करती है और यहा फिर अप्रत्याशित घटना दिखाई पड़ती है। प्रकट होता है कि सान्द्रिक सलफूरिक एसिड लोहे को अपने में नहीं घोलती है। ठीक इसी गुण के आधार पर सलफ्यूरिक एसिड को लोहे की टंकियो में एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते हैं।

सलफ्यूरिक एसिड में जल के प्रति बड़ी मिलन प्रवणता (affinity) होती है। विशाल मात्रा में ऊष्मा उन्मुक्त करती हुई वह जल से संयोजित हो जाती है।

सलफ्यूरिक एसिड की जलीय वाष्पों को प्रवशोषित कर लेने की क्षमता के कारण उसका उपयोग गैसों के सुखाने (उनसे पानी निकाल लेने) तथा धूम्र-हीन बारूद बनाने के काम मे लिया जाता है।

सान्द्रिक सलफ्यूरिक एसिड विभिन्न कार्बनिक यौगिकों, जैसे कार्बोहाइड्रेटों, के कार्बनीकरण की क्षमता प्रकट करता है। और इस अवसर पर भी सलफ्यूरिक एसिड पुनः दो मुखी आचरण प्रकट करता है।

उदाहरण के लिये पौधे के कोशिका तन्तु (Cellular tissue) को लीजिये और विभिन्न सान्द्रणों की सलफ्यूरिक एसिड का उस पर अलग अलग प्रभाव निरीक्षण कीजिये। सान्द्रिक सलफ्यूरिक एसिड उससे पानी खींचती हुई उसका कार्बनीकरण उपस्थित करती है।

अब पौधे के कोशिका तन्तु पर तनूकृत सलफ्यूरिक एसिड का प्रभाव देखिए। कोशिका तन्तु पर कुछ बूंदें तनूकृत सलफ्यूरिक एसिड की डालिये। इस बार कोशिका तन्तु कार्बनीकृत (Corbonized) नहीं होता है, बरन् विशीर्ण (Crumble) होना प्रारम्भ हो जाता है। देखने मे तो यह भी सलफ्यूरिक एसिड की विध्वंसकारी क्रिया है, किन्तु क्रिया का सार दूसरा है, बिल्कुल ही प्रतिकूल। इस बार कोशिका तन्तु पानी नहीं खोता है, बल्कि उसे अपने में समाविष्ट करता हुआ एक अत्यन्त कुरकुरे पदार्थ—हाइड्रोजन—में बदल जाता है, जो तुरन्त ही विशीर्ण होने लगता है।

सलफ्यूरिक एसिड की गणना शक्तिशाली एवं दो आधार रखने वाले अम्लों में है। दो आधार रखने वाले अम्ल से यह अर्थ है कि धातुयें उस अम्ल के अणु में स्थित एक या दोनों हाइड्रोजन परमाणुओं को प्रतिस्थापित (replace) कर सकती है। इसीलिये दो प्रकार के लवण सलफेट तथा बाइ-सलफेट उससे बनते हैं। बेरियम और लेड (सीसा) के सलफेटों को छोड़कर लगभग सभी सलफ्यूरिक एसिड के लवण पानी में घुलने वाले होते हैं। बेरियम-सलफेट को छोड़कर अन्य सभी बेरियम के लवण पानी तथा अम्लों में भलीभांति घुलते हैं। इसलिये यदि किसी लवण के घोल में किसी बेरियम के लवण का घोल मिलाया जाये और उसमें अघुलनीय श्वेत अवक्षेपण प्रकट हो तो यह समझा जा सकता है कि उसमें या तो सलफ्यूरिक एसिड या सलफ्यूरिक एसिड का कोई लवण मौजूद है। इस प्रकार बेरियम के लवण SO_4^{2-} आयन के प्रति क्रियाशील (reactive) होते हैं।

सलफ्यूरिक एसिड का भविष्य कैसा है ? क्या वह कभी रासायनिक उद्योग में अपना नेतृत्व-पूर्ण स्थान खो सकती है ?

अवश्य ही अनेको अत्यन्त महत्वपूर्ण प्राचीन एवं आधुनिक पदार्थों ने कुछ कुछ अपना स्थान खोना प्रारम्भ कर दिया है। लोहा, फौलाद, कच्चा लोहा के स्थानों को लेने के लिए ऐसी धातुयें जैसे लिथियम, मैग्निशियम, टाइटेनियम, मोलिवडीनम आ रही हैं, अनेक रासायनिक रीएजेन्टो का स्थान दूसरे अधिक प्रभावशाली रीएजेन्ट ले रहे हैं। किन्तु मानवता शायद ही किसी ऐसे चतुर्मुखी (universal) पदार्थ पर विचार करती हो, जो सलफ्यूरिक एसिड का स्थान उसके उपयोग के कुल क्षेत्रों में ले सके।

हाइड्रोजन सलफाइड, शत्रु और मित्र,

छः दशाब्दियों पूर्व मार्टीनीक द्वीप मे माउन्ट पील ज्वालामुखी से पांच किलोमीटर दूर सेन पेयर नाम की एक नगरी स्थित थी। आज यह नगरी मानचित्र में नहीं है, एक भयकर दुर्घटना का शिकार हो गई है।

.... एक बार ज्वालामुखी के मुख से हाइड्रोजन-सलफाइड का निकलना तीव्र हो गया। नगर-निवासियों ने शीघ्र ही इसे जान लिया। उनके चाँदी के बर्तन काले पड़ने लगे। और फिर एक रात को नगर की कुल आबादी माउन्ट पील के भीषण उद्गार के फलस्वरूप नष्ट हो गई। जीवितों में केवल एक मनुष्य बचा था।

ज्वालामुखी के मुख से हाइड्रोजन-सलफाइड का निकलना, सलफर-डाइ-आक्साइड गैस निकलने के समान ही, प्रायः ज्वालामुखी के उद्गार के प्रारम्भ की भयकर सूचना होता है।

प्रकृति में हाइड्रोजन-सलफाइड मुख्यतः ज्वालामुखी पर्वतों के स्थानों पर कभी-कभी सीधे पृथ्वी के गर्भ से आती हुई, प्राप्त होती है। जावा द्वीप की घाटियों में से एक की तली से, जो एक शान्त ज्वालामुखी की तलहटी में स्थित है, हाइड्रोजन-सलफाइड निकलती है। यह प्रत्येक जैवीक अस्तित्व के लिए मृत्यु लाती है। उस घाटी को, जिसमें हर जगह मरे हुए जीवो के ढांचे छितरे पड़े हैं, 'मृत्यु की घाटी" कहा जाता है।

हाइड्रोजन-सलफाइड की लाक्षणिक गंध सड़े अण्डों की गन्ध के समान होती है। पर यह बहुत कम लोग जानते हैं कि वह कितनी विषैली होती है। वह सान्द्रित सलफ्यूरिक-एसिड की वाष्पों से कम भयंकर नही होती है। हाइड्रोजन-सलफाइड की थोड़ी खुराक (small dose) भी मृत्युदायक होती है। उसकी 0·2 प्रतिशत वायु मे उपस्थिति जीवों में लगभग तात्कालिक मृत्यु लाती है। प्रकृति मे हाइड्रोजन-सलफाइड अल्ब्यूमेनस पदार्थों के सड़ने से बनती है।

हाइड्रोजन-सलफाइड इसलिये भयंकर है क्योंकि वह संचित होने वाला विष है। हाइड्रोजन-सलफाइड में सांस लेने से घ्राणेन्द्रिय कुन्द (कुण्ठित) हो जाती है। मनुष्य में खतरे का एहसास ही समाप्त हो जाता है, और वह विषैली वायु में उस समय तक बना रहता है जब तक उसकी मृत्यु नहीं होती है।

रक्त की रुधिर कणिकाओं में लोह होता है। धातुओं के प्रति गन्धक बड़ी मिलन प्रवणता रखता है। हाइड्रोजन-सलफाइड मनुष्य के रक्त में पहुंच कर लोहे से प्रतिक्रिया करता है और लोह सलफाइड बनाता है। निम्नलिखित प्रयोग किया जा सकता है : ताजे खून में हाइड्रोजन-सलफाइड पारित की जाये। उसका रंग लाल वर्ण से धुंधला (गन्दा) हरा सा हो जायेगा। यह बात आसानी से स्पष्ट हो जाती है कि क्यों सेन पेयर नगर की सभी चांदी की वस्तुयें काली पड़ गई थीं। यह सब जानते हैं कि सबसे 'दृढ़' धातुओं में से एक है चांदी। वह गर्म करने पर भी वायु में आक्सीकृत नहीं होती है। किन्तु गंधक की मिलन प्रवणता धातुओं के प्रति इतनी अधिक होती है कि 'दृढ़' चांदी भी हाइड्रोजन-सलफाइड के प्रभाव से चांदी की सलफाइड की काली पर्त से ढक जाती है।

मध्य युग के सर्वाधिक प्रसिद्ध चित्रकारों के भी कुछ चित्रों का रंग क्यों इतना धुंधला और निर्जीव दिखाई पड़ता है ? प्रकटतः रंगों ने अपनी प्रारम्भिक चमक व ताजगी खो दी। बहुत से कलाकारों ने श्वेत रंग के रूप में सफेदा (white lead) का प्रयोग किया। हाइड्रोजन-सलफाइड के प्रभाव से, जो वायु में थोड़ी मात्रा में सदैव रहती है, लेड (सीसा) काले भूरे लेड-सलफाइड में परिणत हो जाता है।

कृत्रिम रूप से हाइड्रोजन-सलफाइड को पिघलाये हुए गन्धक में हाइड्रोजन गैस पारित करके प्राप्त किया जा सकता है। किन्तु अधिकतर इसे धातुओं की सलफाइडों पर तनूकृत अम्लों के प्रभाव से प्राप्त किया जाता है। हाइड्रोजन-सलफाइड बड़ी तीव्र प्रज्वलनशीलता प्रकट करती है, वायु के साथ उसका मिश्रण विस्फोट करता है। सुन्दर नीलगूं लौ देते हुए वह जलती है और सलफर-डाइ-आक्साइड गैस तथा जल बनाती है : हाइड्रोजन-सलफाइड के जलने के समय मध्यवर्ती उपज के रूप में सम्भवतः गन्धक बनता है।

हाइड्रोजन-सलफाइड सर्वाधिक शक्तिशाली अपकारकों (Reducing agents) में से एक समझी जाती है। प्रकृति में वह अधिक मात्रा में अधिक समय तक संचित नहीं रह सकती है, क्योंकि वायु की आक्सीजन उसे स्वतन्त्र गंधक में आक्सीकृत कर देती है।

समुद्रों में अनेक जैवीय शरीरों तथा बैक्टीरियाओं के सड़ने से हाइड्रोजन-सलफाइड बनती है। कुछ वैज्ञानिकों का विचार था कि समुद्र के आक्सीकारी क्षेत्र में पहुंचकर यह आक्सीकृत होती हुई स्वतन्त्र गंधक में बदल जाती है। इस प्रकार से बना हुआ गंधक इन वैज्ञानिकों के विचार से गंधक की वर्षा के रूप में, उदाहरण के लिए, ऐसे "हाइड्रोजन-सलफाइड के उच्च कोटि के क्षेत्रों" जैसे कृष्ण सागर की तली में बैठ जाते हैं। उनके विचार से इसी प्रकार अत्यन्त विशाल गंधकीय उद्गम सागरों में बने हैं।

किन्तु, कुल सम्भावनाओं से, सागरों में गंधकीय उद्गमों के बनने की क्रिया बहुत अधिक जटिल होती है। नमकीन पानी में हाइड्रोजन-सलफाइड के आक्सीकरण से प्राप्त होने वाला गंधक पानी में नहीं डूबता है, बल्कि तैरने लगता है और सागर के आक्सीकारण खण्ड में पहुचने पर वहा सलफेट तथा आक्सीकृत होकर नीचे बैठ जाता है।

किन्तु सागर के पेंदे से गंधक प्राप्त करना कितना आकर्षक होगा !

गंधक और इण्डिया रबर

गंधक जादू की छड़ी है, निस्संदेह उसकी सहायता से प्राकृतिक[1] कुचुक (Caoutchouc) लचकदार रबर में परिवर्तित हो जाता है, जो हमारे दैनिक जीवन में हर समय हमारी सेवा में उपस्थित रहता है। सांख्यिकीय आंकड़ों से हमें ज्ञात होता है कि कृत्रिम रबर से बनी हुई विभिन्न वस्तुओं की गणना में हमारे समय में पैंतीस हजार से ऊपर नाम हैं।

प्राकृतिक कुचुक अत्यन्त महगा पड़ता है और उसके गुण भी कभी-कभी बिल्कुल अनुकूल नही पड़ते हैं। निचले तापमानों पर वह कठोर और कुरकुरा हो जाता है और ऊंचे तापमानों पर वह चिपचिपा और लई के समान हो जाता है। कुचुक को नये भौतिकीय एवं रासायनिक गुण प्रदान करने के लिए उसे वल्कैनाइज (Vulcanize) करते हैं। उसे गंधक के साथ लगभग 140°C तापमान पर गर्म करते हैं।

वल्कैनाइजिंग क्रिया किस रासायनिक सिद्धान्त पर आधारित है ?

कुचुक की रचना तागे के समान दिखाई पड़ने वाले अणुओं से होती है जिनके जोड़ दोहरे होते हैं। गंधक के परमाणु इन जोड़ों से अपने को जोड़ते हुए जैसे कि अपने को रबर के अणुओं से सी लेते हैं। इसके परिणामस्वरूप वल्कैनाइज किये हुए रबर में नये गुण विकसित हो जाते हैं। दृढ़ता, लचीलापन (Elasticity) तथा ऊष्मीय स्थायित्व (Thermal stability)।

सामान्य कृत्रिम रबर के उत्पादन के समय कुचुक में लगभग 1–3 प्रतिशत गंधक समाविष्ट किया जाता है। गंधक की मात्रा के समावेश से कुचुक के अणुओं के दोहरे बन्धनों का केवल एक अंश भरता है, जिससे नरम कृत्रिम रबर तैयार हो जाता है।

किन्तु गंधक की मात्रा को लगभग 45 प्रतिशत तक ऊंचा करने का प्रयत्न कीजिए। इस समय गंधक के परमाणु लगभग सभी कुचुक के अणुओं के दोहरे बन्धनों को पकड़ लेंगे। एबोनाइट काले रंग का ठोस पदार्थ –प्राप्त हो जायेगा।

एबोनाइट में विद्युत् विसंवहन (Electric insulation) के बड़े ऊंचे गुण होते हैं और उसका उपयोग मुख्य रूप से विद्युत्-तकनीक की विभिन्न वस्तुओं के बनाने में किया जाता है। अम्लों के प्रति व्यवहार में प्रबल स्थायित्व (Stability)

1. प्राकृतिक रबर को सर्वप्रथम यह नाम चार्ल्स डेला कोन्दामीन ने 1736 ई० में दिया था, जिसके तुपी भाषा में अर्थ हैं 'रोता हुआ वृक्ष' (अनुवादक)।

प्रकट करने के कारण एबोनाइट का उपयोग विद्युत-संचायक (Accumulators) की टंकियों के बनाने में किया जाता है।

किन्तु गंधक केवल प्राकृतिक कुचुक को कृत्रिम रबर में परिवर्तित करने में ही हमारी सहायता नहीं करता है. उसकी सहायता से कृत्रिम अकार्बनिक कुचुक भी प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें विशेष बहुमूल्य गुण होते हैं।' तकनीक में यह यौगिक थियो कुचुक या थियोकोल (Thiokol) के नाम से प्रसिद्ध है।

थियो कुचुक सोडियम-सलफेट के घोल को गंधक के साथ गर्म करने के बाद प्राप्त होने वाले बहु-सलफाइड को 'डाइक्लोर-ईथेन' और डिस्पैरेजिंग पदार्थ कहलाने वाले पदार्थों के साथ पारस्परिक प्रतिक्रिया करा के प्राप्त किया जाता है। जटिल तकनीकी प्रक्रिया के फलस्वरूप गाढ़ा भूरा पदार्थ मिलता है। यही थियोकोल होता है। व्यवहारतः वह किसी भी साधारणतः इस्तेमाल किये जाने वाले घोलने वाले द्रव्यों में नहीं घुलता है। केवल एक कार्बन-बाइ-सलफाइड ही ऐसा है जो थियोकोल को बहुत थोड़ा सा फुला देता है।

थियोकुचुक अत्यन्त अप्रिय गंध देने वाला पदार्थ है। कृत्रिम रूप से संश्लेषित कुचुक की अन्य किस्मों की तुलना में यह पर्याप्त दृढ़ नहीं होता है, और ऋण चालीस अंश सेन्टीग्रेड तापमान पर वह पूर्णरूप से अपना लचीलापन खो देता है। किन्तु उसका ऋणात्मक गुण (Negative quality) दूसरी ओर उसके धनात्मक गुणों (Positive quality) की तुलना में तुच्छ हो जाता है। वह विलायकों के प्रति, एवं ओजोन तथा समय के प्रभावों के प्रति असाधारण स्थायित्व प्रदर्शित करता है।

जब तक तकनीक में इस प्रकार के गुणों वाले कुचुक के समान पदार्थ की माँग रहेगी तब तक थियोकोल वास्तव में अपरिहार्य रहेगा। उससे बेन्जीन, किरोसिन तथा बेन्ज़ोल के लिए होज एवं पाइप लाइनें तैय्यार की जाती हैं। थियोकोल की सहायता से गुब्बारों के कपड़ों को ढकने वाले सुरक्षा कवचों का सृजन किया जाता है, जिनमें हाइड्रोजन और हीलियम गैसें भेद करके निकल नहीं सकती हैं। थियोकुचुक का उपयोग वैमानिकी (Aviation), प्रिंटिंग और प्रकाशन (Polygraphy) तथा रासायनिक उद्योग में होता है।

सोडियम थियोसल-फेट और उसकी भूमिका

हम ऊपर बता चुके हैं कि यदि सलफ्यूरिक एसिड के अणु में आक्सीजन के एक परमाणु का स्थान गंधक का परमाणु ले लेता है तो अत्यन्त अस्थायी यौगिक बनता है, जो थियो-सलफ्यूरिक-एसिड के नाम से प्रसिद्ध है। स्वतन्त्र परिस्थितियों में वह तत्क्षण विघटित होता हुआ सलफ्यूरिक एसिड और गंधक देता है।

इस अम्ल के लवण थियोसल्फेट—अधिक स्थायी यौगिक प्रकट होते हैं। उनमें सोडियम-थियोसल्फेट सर्वाधिक व्यावहारिक उपयोग रखता है। उसका रासायनिक फार्मूला Na_2S_2O है।

चूंकि थियोसल्फेट में दो ऋणात्मक संयोजकताओं वाला गंधक का अणु होता है, उसमें अवकारी (Reducing) गुण रहते हैं, जिसके कारण उसे ऐसे

सक्रिय भावमीकारक जैसे क्लोरीन को अपहृरित करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इस उद्देश्य से थियोसलफेट का प्रयोग वस्त्रों को ब्लीच करने के समय अतिरिक्त क्लोरीन को निकालने के लिये किया जाता है।

किन्तु सोडियम-थियोसलफेट केवल क्लोरीन-विरोधी (Anticholorine) पदार्थ के रूप में ही नही प्रसिद्ध है। प्रत्येक व्यक्ति जो फोटोग्राफी की कला से अवगत है, यह जानता है कि कभी-कभी प्रकाश के प्रभाव से या लम्बे अरसे तक फोटो रखे रहने से फोटो में भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। ऐसे अवसरों पर कहा जाता है कि फिक्सिंग (Fixing) ठीक नहीं हुई, अर्थात् फिक्स (स्थिर) करने वाले पदार्थों ने ठीक पर्याप्त काम नही किया।

फोटो प्लेटों अथवा फिल्मों के इमलशन में डेवलपमेंट के बाद अविघटित सिलवर-ब्रोमाइड बचा रह जाता है, जिसके निकालने के लिए प्लेट स्थिरीकारक पदार्थ (Fixing agent) यानी सामान्यतः थियो-सलफेट (फोटोग्राफी मे इसे हाईपो-सलफाईट कहा जाता है) के घोल में डुबाई जाती है। थियोसलफेट की भूमिका यह होती है कि यह चांदी के अघुलित यौगिकों मे घुलने वाले जटिल (Complex) यौगिकों में बदल देती है। इसका परिणाम यह होता है कि स्थिरीकृत चित्र प्रकाश के प्रभाव से परिवर्तित नहीं होता है, तथा स्थायी हो जाता है, और अधिक दिनों तक सुरक्षित रखने पर उसमें कोई अन्तर नहीं आता है।

सोडियम-थियोसलफेट का उपयोग औषधि के क्षेत्र में भी होता है। संखिया और सियानाइड विषों को मारने वाला विष-विरोधी पदार्थ है। खुजली तथा गम्भीर रूप से जल जाने पर थियोसलफेट का लेप ऊपर से औषधि के रूप में लगाया जाता है।

सोडियम-थियोसलफेट में आयोडीन से तेजी से प्रतिक्रिया करने की क्षमता होती है। यह प्रतिक्रिया आयडोमीट्री–आयतन-मितीय विश्लेषण (Volumetric analysis)-की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधियों मे से एक विधि–की आधारशिला बन गई, जिसका अनालिटिकल केमिस्ट्री (वैश्लेषिक रसायन) में विशेष महत्व है। थियोसलफेट से आयोडीन की पारस्परिक प्रतिक्रिया को निम्नलिखित समीकरण से प्रदर्शित किया जाता है।

$J_2 + 2Na_2 S_2 O_3 = 2 N J + Na_2 S_4 O_6$ जब क्रिया समाप्त हो जाती है, आयोडीन का लाक्षणिक रंग गायब हो जाता है। यह जानते हुए कि कितना थियोसलफेट व्यय हुआ है, यह हिसाब लगाया जा सकता है कि घोल मे आयोडीन की क्या मात्रा थी।

गंधक का भविष्य

प्रथम दृष्टि में यह प्रतीत हो सकता है कि गंधक ने तत्व के रूप में मानवता की व्यावहारिक आवश्यकताओं की दृष्टि से अपनी उपयोगितायें अब अधिकांशतः

निश्शेष कर दी हैं। किन्तु क्या ऐसे उदाहरण कम हैं जब सीधी और साधारण दिखाई पड़ने वाली बात व्यवहार में धोखा साबित होती है, केवल आवर्त सारणं (Periodic table) के अन्दर हमें चलने की आवश्यकता है ? बहुत पहले के महत्वहीन तत्व मानव-जीवन के लिए अपरिहार्य पदार्थ बन गये। गंधक की पुरानी सेवाओं का मूल्यांकन करना कठिन है, किन्तु हम पूर्ण उत्तरदायित्व के साथ यह कह सकते हैं कि उसमें अब भी बहुत से नये अज्ञात रहस्य छिपे हुए हैं।

हम उच्च आणविक यौगिकों की ओर दृष्टि ले जाते हैं—और गंधक-युक्त बहुलकों (Polymers) का स्मरण करते हैं जिनको अभी महत्वपूर्ण शब्द कहने बाकी हैं। हम थियोकोल की बात करते हैं—और गंधक के आधार पर निर्मित अकार्बनिक कुचुक हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं, निस्सन्देह आधुनिक तकनीक में कृत्रिम रबर (Immitation Rubber) के पदार्थों के स्थायित्व की समस्या निरन्तर अधिक तेज होती जा रही है। ल्यूमिनेसेण्ट (सन्दीप्ति-शील) तथा ऊष्मा के प्रति सवेदनशील (Sensitive) रङ्गों, सूक्ष्म वैज्ञानिक अनुसंधानों के लिए ल्यूमिनोफोरों को नये गंधक के यौगिकों की प्रतीक्षा है।

गंधक के रेडियो संक्रिय आइसोटोप और मुख्य गंधक—35 वैज्ञानिकों के विश्वस्त सिद्ध हुए हैं। यह आइसोटोप विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं के जिनमें गंधक भाग लेता है, विस्तारपूर्वक अध्ययन की सम्भावना उपस्थित करता है, वनस्पतियों और पशुओं के शरीरों में गंधक की भूमिका पर पड़े परदे को खोलने की अनुमति प्रदान करता है, बहुत से जटिल प्रयोग को सम्पन्न करने में सहायता देता है। गंधक का रेडियो सक्रिय अनुरेखक (Radio active tracer) सर्वाधिक आशाप्रद आइसोटोपों में एक है। लगभग प्रत्येक रासायनिक तत्व के इतिहास में कुछ सीमा-चिन्ह (Land marks) वैज्ञानिक अन्वेषण, होते हैं, जिनके बाद उन तत्वों की महत्ता अभूतपूर्व ढंग से बढ़ती है। यूरेनियम के विभाजन की खोज जर्मेनियम की अर्ध-चालकता (Semi Conduction) के बहुमूल्य गुण का अन्वेषण, द्रव हीलियम की अतिसंवाहकता (Super Conductivity) तथा अति सरलता (Super fluidity) का प्रमाण "' ऐसे ही सीमा चिन्ह हैं, जिनकी सूची में आवर्त सारणी के अन्य बहुत से प्रतिनिधियों को सम्मिलित किया जा सकता है। गंधक विशेष लाभदायक अभिनय औद्योगिक सलफ्यूरिक एसिड की प्राप्ति है, किन्तु यह कहना कि गंधक को अभी द्वितीय प्रसव का अनुभव बड़ा है कदाचित कोरी कल्पना नहीं है।

